इस्लामी समाज एक आदर्श समाज

संकलन एवं प्रस्तुति: मुहम्मद नाज़िम भूतपूर्व साइंटिस्ट

इस्लामी समाज एक आदर्श समाज

संकलन एवम् प्रस्तुति

मुहम्मद नाज़िम

भूतपूर्व साइंटिस्ट

सूबाई जमीअत अहले हदीस मुंबई

इस्लामी समाज
एक
आदर्श समाज

संकलन एवमं प्रस्तुति
मुहम्मद नाज़िम
भूतपूर्व साइंटिस्ट

नाम किताब	:	**इस्लामी समाज एक आदर्श समाज**
संकलन एवमं प्रस्तुति	:	मुहम्मद नाज़िम (भूतपूर्व साइंटिस्ट)
प्रकाशक	:	सूबाई जमियत अहले हदीस, मुंबई
कम्पोज़िंग	:	असअदुल्लाह ख़ान
प्रकाशन	:	मार्च 2023 ई. (पहली बार)
हदिया	:	

मिलने के पते

1. सूबाई जमियत अहले हदीस, मुंबई।

2. मरकज़ अद-दावत अल-इस्लामिया, खेड़कोकर।

3. जमियत अहले हदीस, भिवन्डी।

फ़ेहरिस्त मज़ामीन

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

प्रस्तावना

अल्लाह सुब्हानहू व तआला का शुक्र व एहसान है कि उसने बनी आदम यानी इंसान को अफ़ज़ल *(Superior)* मख़्लूक़ *(Creation)* बनाया। और उसे ख़ानदान और क़बीलों में बांट दिया ताकि वह अपने क़रीबी रिश्तेदारों को पहचाने। उनके साथ मिलजुल कर, आपसी मुहब्बत और हमदर्दी के साथ रहे।

इंसान एक *Social Living being* है। वह जानवरों की तरह तन्हा ज़िंदगी नहीं गुज़ारता बल्कि समाज में एक साथ रहकर अपनी ज़िंदगी गुज़र बसर करता है। इंसान ज़िंदगी के अनेक पहलुओं में एक दूसरे पर आश्रित रहता है। उसे सुख दुख में एक दूसरे के सहारे की ज़रूरत पड़ती है। इसलिए एक अच्छे हमदर्द, महफ़ूज़ व सुरक्षित और पुर अमन समाज को क़ायम करने के लिए ज़रूरी है कि हर इंसान अपनी सामर्थ्य व ताक़त के मुताबिक़ समाज और इसमें बसने वालों के हकूक़ *(Rights)* का ख़्याल रखते हुए उनको पूरा-पूरा अदा करे।

साथ ही कुछ ऐसी संगीन बुराइयों का ज़िक्र भी किया गया है जो किसी भी अच्छे समाज को तबाह और बरबाद कर देती हैं।

आख़िर में समाज और मुल्क की शांति व अमन, हिफ़ाज़त व सुरक्षा और तरक़्क़ी व कामयाबी में मुफ़ीद और लाभदायक चंद इस्लामी नसीहतों और उसूलों (क़ायदे व क़ानून) का ज़िक्र किया गया है।

मुख़्तसर और संक्षेप में कहा जाए तो यह किताब इस्लाम के चंद अहकाम और नसीहतों का संग्रह है जिन पर अमल करके एक आदर्श समाज को क़ायम किया जा सकता है। एक ऐसा समाज जहां हर इंसान इज़्ज़त व वक़ार *(Dignity)* के साथ अपना जीवन बिताए। ना कोई किसी पर ज़ुल्म करे ना किसी पर कोई ज़ुल्म हो। समाज के ग़रीब, मोहताज, कमज़ोर व बेसहारा लोगों की मदद की जाए और इन्हें तन्हा व बेसहारा ना छोड़ दिया जाए। आपसी

मुहब्बत, भाईचारा और हमदर्दी का बोलबाला हो।

क़ारिईन और पाठकों से अर्ज़ है कि इस किताब में बयान की गई हर बात क़ुरआन और नबी ﷺ की सही हदीस से ली गई हैं जो इस्लाम के मूल स्रोत हैं। किताब को पढ़कर यह पता लगाना बहुत आसान होगा कि इस्लाम नेकियों और अच्छाइयों का ख़ज़ाना है। काश हर इंसान इसके अनमोल मोतियों पर अमल करे और अपनी जिंदगी को सुधारने के साथ एक अच्छे और हमदर्द समाज के बनाने में मदद करे।

नाचीज़

मुहम्मद नाज़िम

(रिटायर्ड साइंटिस्ट 'इसरो')

देहरादून (उत्तराखण्ड) भारत

अप्रेल 2022 ई.

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

इस्लामी समाज

जब बात इस्लामी समाज की की जाए तो ज़हन *(Mind)* में सवाल उठता है कि इस्लामी समाज क्या है और कैसा होता है? इसकी तारीफ़ यानि परिभाषा क्या है और इसकी तफ़सील एवम् विस्तारपूर्वक वर्णन कैसे किया जाय।

इस्लामी समाज एक ऐसा समाज है जिसकी कल्पना इस्लाम के बुनियादी अहकाम (धार्मिक सिद्धांत) के अनुसार इस तरह की जा सकती है कि ऐसा समाज जो इस्लाम में बयान की गई तमाम नेकियों, अच्छाइयों और पुन्य के कामों को अपने दायरे में समेटे हुए हो और उन तमाम बुराइयों, गुनाहों और पाप के कामों से पाक और साफ़ हो जिनको इस्लाम में मुनकरात *(Forbidden)* कहा गया है और जिनसे हर इंसान को मना किया गया है। ऐसे समाज में अमन और सलामती चारों तरफ़ फैली होगी, आपसी भाईचारा और मोहब्बत का बोलबाला होगा, ना किसी पर कोई ज़ुल्म होगा और ना ही सताया जाएगा, किसी को कोई डर और ख़ौफ़ की भावना नहीं होगी और हर इंसान चाहे मर्द हो या औरत, बच्चा हो या बूढ़ा अपनी जगह पुर अमन, इज़्ज़त और वक़ार *(Dignity)* की ज़िंदगी गुज़र बसर करेगा।

ऐसे समाज को एक आदर्श समाज कहा जाता है। यह समाज इस्लाम में बयान की गई नेकियों का बसेरा होता है और उसमें बयान की गई बुराइयों से पाक यानि मुक्त होता है। ऐसे समाज की तफ़सील *(Details)* बयान करने से पहले यह ज़रूरी हो जाता है कि जिस दीन या धर्म इस्लाम के अहकाम (सिद्धांत) के अनुसार एक आदर्श समाज के वजूद *(Existence)* की बात हो रही है वह धर्म इस्लाम क्या है। उसमें कौन से काम नेकियों या पुन्य के हैं और कौन से काम बुराइयों और पाप के हैं। इस्लाम के मूल सिद्धांत क्या हैं और उसमें समाज के बारे में क्या अहकाम *(Rules)* बयान किए गए हैं। आदर्श समाज को जानने से पहले इस्लाम को जानना ज़रूरी हो जाता है। चूंकि इस्लाम एक दीन है धर्म है, इसलिए पहले देखना होगा कि धर्म होता क्या है।

धर्म क्या है?

धर्म क्या है? ये किसने बनाया? इसका स्रोत क्या है? और उसके मूल सिद्धांतों को कहां से और किससे जाना जाए?

दुनिया में जितनी भी तहज़ीब और सभ्यताऐं हुई उनमें कोई ना कोई धर्म मौजूद रहा। जिसके अनुसार वह एक ऐसी अलौकिक शक्ति *(Superhuman Controlling Power)* पर ईमान एवम् यक़ीन रखते और उसके अनुसार उसकी इबादत एवम् पूजा करते थे जिसको *God*, ईश्वर और इस्लाम में अल्लाह कहा गया है। विद्वान *(Scholars)* धर्म को परिभाषित (तारीफ़ *Define*) करने में एकमत नहीं हो सके। आज के दौर में अपनाए गए मुख्य धर्मों की जानकारी के साथ यह कहना उचित होगा कि धर्म को एक ईश्वर से अवतरित *(Revealation)* माना गया है। जो इंसानों के लिए अपनाए जाने वाले मूल सिद्धांतों का संग्रह है। जैसे कि एक ईश्वर पर यक़ीन के साथ ईमान रखना, किस तरह उसकी इबादत एवम् पूजा करनी है, कौन से दूसरे काम अच्छे हैं जो करने चाहिए और किन कामों से बचना चाहिए और किन बुनियादों पर समाज की स्थापना करनी चाहिए और किस तरह हर इंसान को अपना जीवन यापन करना चाहिए।

जिस इलाक़े और क़ौम पर जो भी धर्म नाज़िल (अवतरित, *Revealed*) किया गया उसकी ज़बान और भाषा के अनुसार अवतरित करने वाले को किसी एक नाम से पुकारा जाता रहा। जैसे अंग्रेज़ी बोलने वाले *God*, हिन्दी बोलने वाले ईश्वर या भगवान और अरबी उर्दू वग़ैरह बोलने वाले अल्लाह के नाम से पुकारते हैं। और जिसपर उस धर्म को उतारा गया उसको *Prophet* या *Messenger*, अवतार या दूत और नबी या रसूल के नाम से जाना जाता है।

जैसे कुरआन और बाइबिल के अनुसार अल्लाह ने दाऊद अलैहिस्सलाम पर ज़बूर उतारी, मुसा अलैहिस्सलाम पर तौरात उतारी, ईसा अलैहिस्सलाम पर इंजील *(Bible)* उतारी और मुहम्मद ﷺ पर कुरआन उतारी। इसी तरह हिन्दू धर्म जो एक प्राचीन धर्म है उसमें भी अल्लाह ने किसी अवतार पर किताब उतारी होगी। जिसकी जानकारी उनके असली और प्राचीन मूल ग्रंथों से

मिल सकती है। इसी तरह दूसरे प्राचीन धर्मों के बारे में भी कहा जा सकता है।

इस तरह किसी धर्म की असली पहचान को जानने के लिए ज़रूरी है कि उसके प्राचीन एवम् असली मूल ग्रंथों का अध्ययन किया जाए। ना कि सदियों बाद लिखी गई धार्मिक किताबों की। जिनमें बदलाव कर दिया गया हो। दुर्भाग्यपूर्ण कहा जा सकता है कि बहुत से धर्मों की असली एवम् प्राचीन मूल ग्रंथों का वजूद और अस्तित्व ही ख़त्म हो गया जिनसे उनके असली और अल्लाह से अवतरित धर्म को जाना जाता।

मिसाल के तौर पर तौरात और इंजील *(Bible)* को बदल दिया गया जिसके आधार पर उन धर्मों के अनेक फ़िर्क़े हो गए। हर फ़िरक़ा *(Sect)* अपनी किताब पर आस्था रखता है और यही साबित करता है कि वही असली मूल धर्म है और उसी के अनुसार अमल करना है।

कोई फ़िरक़ा कहता है कि ईसा अ़लैहिस्सलाम सिर्फ़ अल्लाह के रसूल हैं तो कोई कहता है वह ख़ुद *God* हैं, तो कोई *Concept of Trinity* में यक़ीन रखता है। *Orthodox* 11वीं सदी में वजूद में आई जबकि *Protestant* 16वीं सदी में। सवाल ये भी उठता है कि ईसा अलैहिस्सलाम तो दीन 2000 साल पहले लाए थे और ये फ़िरक़े 1100 साल या उससे भी ज़्यादा समय बाद पैदा हुए तो इससे पहले लोग जिस धर्म का पालन कर रहे थे क्या वो असली धर्म नहीं था? और दूसरा सवाल ये उठता है कि हर फ़िरक़े का बुनियादी अ़क़ीदा *(Belief)* ही दूसरों से अलग है तो सहीह अ़क़ीदा कौन सा है? या सहीह और असली धर्म या धर्म ग्रंथ कौन सा है जो ईसा अलैहिस्सलाम पर उतरा था?

यही बात हिन्दू या सिख या दूसरे धर्मों के बारे में कही जा सकती है। हिंदू धर्म में अवतारों *(Prophets)* को ही भगवान मान लिया यानि अल्लाह ख़ुद ज़मीन पर उतरा और उसी की पूजा करते हैं जबकि हिन्दुओं का ही फ़िरक़ा आर्य समाज इसका ख़ण्डन और इंकार करता है। उनका मानना है कि *God* निराकार है उसकी कोई मूर्ति नहीं *(Formless)* वह पैदा नहीं हुआ *(Unborn)*। एक ईश्वर की पूजा करते हैं और सिर्फ़ वेदों में विश्वास रखते हैं। इसी तरह निरंकारी *Formless God* की (जिसकी कोई मुर्ति नहीं) मानते हैं। इस तरह हिन्दू धर्म में भी ये जानना मुश्किल है कि कौन सा मूल ग्रंथ या

धर्म अल्लाह ने उनके अवतार पर उतारा।

क़ुरआन के साथ ऐसा नहीं है। क़ुरआन पूरी तरह से शब्द दर शब्द अपनी उसी असली रूप और शक्ल में मौजूद है जो मुहम्मद ﷺ पर उतारी गई थी। उसमें रत्ती भर भी कोई बदलाव नहीं हुआ और वह अपने असली मूल रूप में ही क़यामत तक क़ायम और सुरक्षित रहेगी जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है कि :

"हमने इस क़ुरआन को नाज़िल (उतारा Revealation) फ़रमाया है और हम ही इसके मुहाफ़िज़ (हिफ़ाज़त करने वाले) हैं।" (सूरह हिज्र 15/9)

और दूसरी जगह फ़रमाया गया है कि :

"आप के रब का कलाम सच्चाई और इंसाफ़ के एतबार से कामिल (पूर्ण) है। इसके कलाम को कोई बदलने वाला नहीं .....।" (सूरह अनआम 6/115)

किसी भी धर्म के असली मूल ग्रंथ में बयान किए गए अहकाम और सिद्धांतों के अनुसार अपनाया गया धर्म ही वास्तव में वो धर्म कहलाने के लायक़ होता है। क्योंकि इसी धर्म को अल्लाह ने उनके अवतार या रसूल पर उतारा होता है। इसमें किए गए किसी भी बदलाव से वो मूल धर्म नहीं रह पाता, क्योंकि अल्लाह द्वारा उतारे गए धर्म में कही गई बातें, अहकाम, क़ायदे क़ानून और सिद्धांतों को बदल दिया गया है जिससे उनकी इबादत, पूजा और जीवन शैली के अन्य कर्म और कार्यकलाप को ही बदल कर रख दिया। यह बदलाव अल्लाह को जिसने उस धर्म को उतारा था कैसे पसंद होंगे? नहीं! हरगिज़ नहीं!! अल्लाह को यह सख़्त ना पसंद होगा क्योंकि ये उसके अहकाम और उपदेशों की अवहेलना के साथ साथ उसका इंकार भी है। यह एक बड़ा ज़ुल्म है। अल्लाह ऐसे किसी धर्म को क्यों क़बूल करेगा और उन कर्मों और आमाल *(Deeds)* का क्या फल देगा जो बदले हुए धर्म के मुताबिक़ किए गए हों। क्या वो ईश्वर या अल्लाह को मान्य और क़बूल होंगे? यही बदलाव असली मूल धर्म से भटकाव और गुमराही का सबब बन जाता है।

दूसरे कोई भी धर्म हो वह अपने मूल ग्रंथों के मुताबिक़ होने के साथ-साथ अपने अवतार की जीवन शैली के मुताबिक़ होता है। चूंकि धर्म अवतार पर

उतारा जाता है तो अल्लाह उस अवतार की जीवन शैली को उसके धर्म के अनुसार बनाता है और उस अवतार की बारीकी के साथ रहनुमाई *(Guidance)* भी करता रहता है। इसलिए धर्म को जानने के लिए दो स्रोत हैं। पहला उसके मूल ग्रंथ और दूसरा समकालीन (उसी दौर में वर्णित या लिखा गया) ग्रंथ जिसमें अवतार की जीवन शैली लिखी गई हो। इन दोनों में कोई विरोधाभास *(Contradictions)* नहीं होता बल्कि दूसरा ग्रंथ पहले मूल ग्रंथ की ज़्यादा व्याख्या *(Explanation)* करता है। इसके अलावा किसी भी धर्म के मानने वाले अनुयाइयों की जीवन शैली देखकर उस दीन का असली और सहीह इल्म या ज्ञान नहीं हो सकता।

इस्लाम क्या है?

इस्लाम वो दीन है जो अल्लाह ने अपनी किताब क़ुरआन के ज़रिए मुहम्मद ﷺ पर उतारा। जो मूल रूप से पूरी तरह अपनी असली सूरत में मौजूद है। इसमे कोई बदलाव नहीं किया गया।

दूसरी किताबों की तरह अल्लाह ने पूरी किताब क़ुरआन एक लिखी हुई किताब की शक्ल में मुहम्मद ﷺ को एक वक़्त में ही नहीं दी। और ना ही इस पूरी किताब को एक साथ ही नाज़िल (उतारा) किया। बल्कि इसको 23 साल की लम्बी मुद्दत में थोड़ा थोड़ा और ठहर ठहर कर उतारा। इसके तीन कारण बयान किए जा सकते हैं।

पहला कारण कि मूल ग्रंथ यानि क़ुरआन उसके उतारे गए नबी के दिल में क़वी (मज़बूत) हो जाए। यानि उसका दिल इसके इल्म से मज़बूत हो जाए या उसके दिल में यह अच्छी तरह समा जाए ताकि इसको आगे अपनी क़ौम और दूसरे लोगों तक पंहुचाने और उनको समझाने में आसानी हो और उसके हर एक हिस्से को अंग या *Part* को बिना छूटे या बिना *Miss* हुए पूर्ण रूप से ज्यों का त्यों लोगों तक पंहुचा सके। इसलिए क़ुरआन को मुहम्मद ﷺ पर ठहर-ठहर कर थोड़ा-थोड़ा और *Part by Part* 23 साल के एक लम्बे समय और मुद्दत में नाज़िल किया गया और उतारा गया है। जैसा कि क़ुरआन में बयान हुआ है:

"और काफ़िरों ने कहा कि उस पर क़ुरआन सारा का सारा एक साथ ही क्यों ना उतारा गया। इस तरह हमने (थोड़ा-थोड़ा) करके उतारा ताकि इससे हम आप का दिल क़वी (मज़बूत) रखें। हमने इसे ठहर-ठहर कर ही पढ़ सुनाया।" (सूरह फ़ुरक़ान 25/32)

दूसरा कारण ये हो सकता है कि दीन इस्लाम को इस तरह मुकम्मल और पूर्ण कर दिया जाए ताकि इसमें कोई कमी, शक या शुबह या कोई एतराज़ ना रहे। इसमें हर चीज़ का बयान खोल-खोल कर कर दिया गया हो। नबी मुहम्मद ﷺ की ह़याते मुबारक (ज़िंदगी) में ही दीन इस्लाम पूरे अरब में फैल चुका था, जैसे यमन, सीरिया, *Egypt* और ओमान आदि। यहां के लोगों ने अपना बहुदेव वादी मुश्रिकाना दीन छोड़ा और इस्लाम क़बूल कर लिया। उनके ज़हन में इबादात, पूजा, घर-गृहस्थी, काम काज और व्यापार और जीवन शैली के अन्य कर्म काण्ड और कार्यो के बारे में मुख्तलिफ़ (अनेक) सवाल उभरते होंगे जिनके बारे में नव मुस्लिम अपने नबी से सवाल करते होंगे और फिर अल्लाह की तरफ़ से उसके अहकाम (क़ायदे-क़ानून) के बारे में कोई हिस्सा उतार दिया जाता। या काफ़िर और मुश्रिकों से सवाल आते होंगे तो उसके जवाब में अल्लाह क़ुरआन की कोई आयत *(Verse)* नाज़िल कर देता ताकि ये काफ़िर और मुश्रिक नव मुस्लिम लोगों को गुमराह ना कर सकें जैसा कि क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

"ये आपके पास जो मिसाल लाएंगे हम उसका सच्चा जवाब और उम्दा तफ़सीर (Explanation) आप को बता देंगे।" (सूरह फ़ुरक़ान 25/33)

इसलिए इस दीन इस्लाम को शुबह, और शक, सवाल और एतराज़ से पाक और मुकम्मल करने के लिए 23 साल की लम्बी मुद्दत इससे बेहतर और फ़ायदेमंद हो सकती है कि पूरी किताब एक साथ उतार दी जाती और फिर सवाल या एतराज़ करने वालों को मौक़ा मिल जाता कि वो इस दीन में कमियां निकालें और लोगों को गुमराह करें।

तीसरा कारण ये हो सकता है कि दीने इस्लाम एक आलमी *(Universal for all)* दीन है। और मुहम्मद ﷺ को सिर्फ़ अरब की क़ौम की तरफ़ ही नहीं भेजा बल्कि उनको पूरी दुनिया की तमाम क़ौमों की तरफ़ नबी बना कर

और दीन इस्लाम देकर भेजा है। चाहे कोई सफ़ेद हो या काला, चाहे *American* हो या *African*, चाहे *European* हो या *Asian*, जैसा कि क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

".... आप तो सिर्फ़ आगाह करने वाले हैं और हर क़ौम के लिए हादी (हिदायत देने वाला, a Guide) हैं।" (सूरह रअद 13/7) एक दूसरी आयत *(Verse)* में फ़रमाया गया है कि:

"आप कह दीजिए कि ऐ लागो! मैं तुम सबकी तरफ़ (All Mankind) उस अल्लाह तआ़ला का भेजा हुआ हूं जिसकी बादशाहत तमाम आसमानों और ज़मीन में है। उसके सिवाय कोई इबादत के लायक़ नहीं। वही ज़िंदगी देता है और वही मौत देता है सो अल्लाह पर ईमान लाओ और उसके नबी उम्मी पर, जो कि अल्लाह पर और उसके अहकाम पर (His Words) ईमान (Believe) रखते हैं और उनका इत्तिबा (Follow Him) करो ताकि तुम राह पर आ जाओ।" (सूरह आराफ़ 7/158)

इसके साथ ही यह भी जानना ज़रूरी है कि मुहम्मद ﷺ के बाद अब और कोई दूसरा नबी नहीं आएगा। इसका मतलब ये हुआ कि अब अल्लाह कोई और दूसरा दीन नहीं भेजने वाला। जैसा कि फ़रमाया गया कि:

".... आप अल्लाह के रसूल हैं और तमाम नबियों के ख़त्म करने वाले....।" (सूरह अहज़ाब 33/40)

और मुहम्मद ﷺ का फ़रमान है कि: मैं तमाम लोगों की तरफ़ भेजा गया हूं। मुझसे पहले हर एक नबी एक ख़ास अपनी क़ौम की तरफ़ भेजा जाता था।" (सुनन निसाई 434 सहीह हदीस)

यानि मुहम्मद ﷺ से पहले जितने भी नबी आए वो सब एक ख़ास अपनी क़ौम के लिए आते रहे। एक ही वक़्त में अलग- अलग क़ौमों पर अलग-अलग नबी आते रहे। लेकिन मुहम्मद ﷺ आख़री नबी हैं अब कोई नबी या अवतार नहीं आने वाला और ना ही कोई धर्म। दूसरे मुहम्मद ﷺ पूरे इंसानों के लिए आए, चाहे क़यामत तक आने वाले कितने ही इंसान और क़ौमें आऐं आप सबके लिए दीने इस्लाम लेकर नबी बना कर भेजे गए। यह दीने इस्लाम हर इंसान को मानना ज़रूरी हो गया चाहे वह क़यामत आने तक किसी

भी ज़माने में पैदा हो और चाहे दुनिया के किसी भी कोने में बसता हो सुदूर उत्तरी कोने से लेकर दक्षिणी कोने तक और सुदूर पूर्व से लेकर पश्चिम तक।

अगर यह कुरआन पूरा एक साथ उतारा जाता तो उस वक़्त के लोगों के लिए और उसके बाद क़यामत तक आने वाली पीढ़ियों और क़ौमों के लोगों के लिए इसको और इसके अहकाम (सिद्धांत और निर्देशों) को जानना और समझना आसान ना होता। नबी ﷺ ने 23 साल के समय में अपने सहाबियों *(Companions)* को कुरआन और दीने इस्लाम को पूर्ण रूप से समझा दिया और वह लोग अच्छी तरह इस पर अमल करते हुए इस्लाम के बेहतरीन सिपाही और सच्चे अनुयायी बने। जिन्होंने इस दीन को फिर अपनी अगली पीढ़ी *(Generation)* यानी आगे आने वाले लोगों को इसकी बारीकियों सहित अच्छी तरह समझाया और इस तरह यह सिलसिला पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहा और क़यामत तक जारी रहेगा।

इस तरह कुरआन को इस्लाम का मूल ग्रंथ बनाकर उतारा और क़यामत तक इसको बिना किसी बदलाव के सुरक्षित रखा जाएगा। जैसा कि पहले भी बयान किया गया कि किसी भी धर्म की पूर्ण जानकारी के लिए उसके असली मूल ग्रंथ और उसके नबी की जीवन शैली को देखना ज़रूरी है। जैसा कि कुरआन में फ़रमाया गया है कि:

''....और जो कुछ किताब और हिकमत उसने नाज़िल फ़रमाई है, जिससे तुम्हें नसीहत कर रहा है...।'' (सूरह बक़रा 2/231) और फ़रमाया गया कि:

''और तुम्हारे घरों में अल्लाह की जो आयतें और रसूल की जो अहादीस (हिकमत) पढ़ी जाती हैं....।'' (सूरह अहज़ाब 33/34) और फ़रमाया गया कि:

''यक़ीनन तुम्हारे लिए रसूलुल्लाह में उ़म्दा (बेहतरीन) नमूना (Ideal) हैं....।'' (सूरह अहज़ाब 33/21)

यानी इस्लाम के मानने वालों के लिए एक बेहतरीन नमूना *(An excellent ideal of conduct)* हैं।

ऊपर बयान किए गए तीनों हवालों *(References)* से कुछ ज़रूरी बातों का पता चलता है। पहली बात तो ये है कि अल्लाह ने मुहम्मद ﷺ पर

क़ुरआन के साथ हिकमत भी प्रदान की। यानी नबी ﷺ की जीवन शैली और *Pattern of conduct* अल्लाह की निगरानी में और रहनुमाई में हुआ। आपका हर काम अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ होता था। आप जो भी बताते या बोलते, जो भी काम करते और जिस तरह करते या हर उस काम पर जिससे आप सहमत और राज़ी होते थे यह सब अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ होता। जैसा कि क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

"और ना वो अपनी ख़्वाहिश *(His awn desire)* से कोई बात कहते हैं, वो तो सिर्फ़ वही *(Revealation)* है जो उतारी जाती है।" (सूरह नज्म 53/3,4)

और यही बात रसूल ﷺ ने भी फ़रमाई : अल्लाह तआलाअपने नबी की ज़बान पर वही जारी करेगा जो वो (अल्लाह) चाहेगा। (सुनन अबी दाऊद 5131 सहीह) यानी नबी की ज़बाने मुबारक से वही बात कही जाएगी जो अल्लाह चाहेगा।

ऐसी अनेक मिसालें *(Examples)* और वाक़िआत / घटनाएं *(Incidents)* हदीस की किताबों में मौजूद हैं जब नबी ﷺ से कोई सवाल किया गया और आप ने जवाब नहीं दिया और ख़ामोश रहे या कोई ऐसा जवाब दिया जो अल्लाह के नज़दीक बेहतर नहीं था तो फ़ौरन अल्लाह ने आप पर वही उतार दी या जिबरील अलैहिस्सलाम को भेजा और आप ﷺ को इस सवाल का सहीह जवाब बता दिया जो आप ने सवाल पूछने वाले को बताया। इससे साफ़ ज़ाहिर होता कि सहीह अहादीस भी अल्लाह की मर्ज़ी के मुताबिक़ हैं और ये कि नबी ﷺ की हर पल हर घड़ी और हर अमल पर अल्लाह की रहनुमाई *(Guidance)* होती थी। जैसा ऊपर बयान की गई क़ुरआन की आयत में फ़रमाया गया है। (सूरत अनफ़ाल 67,68- मुसनद अहमद :208, हसन)

इस लिए आप ﷺ का तरीक-ए-हयात (जीवन शैली), हर अमल और काम, हर बात और हिदायात *(Instructions)* भी क़ुरआन की तरह ही अपना मक़ाम *(Position)* रखती हैं। इसी को हदीस या नबी ﷺ की सुन्नत कहते हैं। इनका पढ़ना, जानना, समझना और उनके मुताबिक़ ही अपनी जीवन शैली बनाना और हर काम करना भी क़ुरआन की तरह हर मुसलमान पर फ़र्ज़ *(Obligatory)* है।

जैसा कि अल्लाह तआ़लाका फ़रमान है कि:

"यक़ीनन तुम्हारे लिए रसूलुल्लाह ﷺ में उम्दा (बेहतरीन) नमूना है।" (सूरह अहज़ाब 33/21) और फ़रमाया कि:

"कह दीजिए कि अल्लाह तआ़लाका हुक्म मानो और रसूलुल्लाह ﷺ की इताअ़त (Obey) करो।" (सूरह नूर 24/54) और फ़रमाया कि:

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह की इताअ़त करो और रसूल की इताअ़त करो।" (सूरह निसा 4/59) और फ़रमाया कि:

"सो क़सम है तेरे रब (अल्लाह) की, ये मोमिन नहीं हो सकते जब तक कि तमाम आपस के इख़्तलाफ़ में आप को (ﷺ) हाकिम ना मान लें।" (सूरह निसा 4/65) और फ़रमाया कि:

"तुम्हें जो रसूल दें ले लो और जिससे रोकें रुक जाओ।" (सूरह हश्र 59/7) और फ़रमाया कि:

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह की इताअ़त करो और रसूल की इताअ़त करो और अपने आमाल (कर्म) को ग़ारत (Waste, Unaccaptable) ना करो।" (सूरह मुह़म्मद 47/33)

इन सभी आयतों से मालूम होता है कि अल्लाह तआ़लाने अपने रसूल मुह़म्मद ﷺ की फ़रमांबरदारी *(Obediency)* करना यानी सहीह अहादीस के मुताबिक़ अपनी ज़िन्दगी का हर काम करना फ़र्ज़ कर दिया है। ऐसा नहीं करने वाला मोमिन यानी ईमान वाला नहीं हो सकता और उसके सब आमाल चाहे कितने ही अच्छे लगते हों वो सब ग़ारत हैं। सब बेकार हैं और अल्लाह उनको क़बूल नहीं करेगा।

चूंकि अल्लाह ने ख़ुद अपने क़ुरआन में ही अपने रसूल की फ़रमांबरदारी को हर मुसलमान पर फ़र्ज़ कर दिया है तो कहा ये जा सकता है कि अल्लाह ने फिर सहीह अहादीस को भी महफ़ूज़ कराने का फ़ैसला फ़रमाया होगा ताकि क़यामत तक आने वाला हर शख़्स उन सहीह अहादीस का अध्ययन कर सके और जान सके कि रसूल ﷺ का किस काम के लिए क्या हुक्म था, कौन सा काम कैसे किया, ताकि आपको नमूना *(Ideal)* मान कर और आपकी फ़रमांबरदारी करके अपनी ज़िन्दगी गुज़ारे और हर अमल को अंजाम दे।

इस लिए अल्लाह ने अपने ऐसे नेक बन्दे (फ़रमांबरदार मुसलमान) पैदा किए जो इस्लाम का बेहतरीन इल्म रखते थे, उसकी बारीकियों को जानते और समझते थे, नेक और पाक जीवन वाले, अल्लाह का ख़ौफ़ व डर रखने वाले, उसकी इबादत करने वाले और दीने इस्लाम को समर्पित थे। उन्होंने नबी ﷺ की जीवनी को पढ़ा, परखा और जाना। कड़ी मेहनत के साथ रसूल ﷺ की एक-एक हदीस को हासिल किया और उनकी बारीकी से जांच परख करके ये जाना कि कौन सी हदीस सहीह है और कौन सी सहीह नहीं (ज़ईफ़) है।

फिर हदीसों को जमा करके संकलित *(Compilation)* किया गया और अलग-अलग मुहद्दिसों *(Compiler of Hadith)* ने किताब की शक्ल में दी। ऐसी अनेक किताबें हैं जिनमें सहीह बुख़ारी और सहीह मुस्लिम पहले दो मक़ाम की हैसियत रखती हैं और इनमें दी गई सभी हदीसें सहीह हदीस का दर्जा रखती हैं।

इस तरह दीने इस्लाम के दो मूल ग्रंथ हुए। एक क़ुरआन और दूसरा सहीह अहादीस। इन दोनों का अध्ययन करने के बाद ही दीने इस्लाम की समझ हासिल हो सकती है और इन दोनों को मानना और उनके मुताबिक़ अमल करना फ़र्ज़ हो जाता है। इस लिए इस्लाम को जानने के लिए या इस्लाम में किसी भी काम या विषय के बारे में दिशा निर्देश जानने के लिए इन दोनों मूल ग्रंथों में देखा जाए ना कि किसी मुसलमान या मुसलमान क़ौम के किए गए अमल को। हो सकता है कि वह मुसलमान या क़ौम ही इस्लाम पर अमल ना करती हो और इस्लाम की राह से भटक गई हो और गुमराह हो रही हो।

इस्लाम और एकेश्वरवाद

(Monotheism) तौहीद

तौहीद यानी एक ईश्वरवाद इस्लाम का मुख्य बिंदू है। इसका मतलब है कि अल्लाह एक है और उसके सिवाय कोई हक़ीक़ी इलाह नहीं। *He is no one and there is God except him* (सिर्फ़ और सिर्फ़ उसी की इबादत की जाए, उसी को पुकारा जाए, उसके सिवा और किसी की इबादत नहीं।)

उसका कोई शरीक नहीं *No Partner* (उसका कोई साथी और साझी नहीं और उसके साथ किसी भी दूसरे की इबादत नहीं) उसका कोई सिफ़ारिशी नहीं (यानी किसी दूसरे की इबादत इस लिए करें कि अवतार या संत या बड़ा औलिया है इसकी इबादत करते हैं ताकि यह हमारी सिफ़ारिश अल्लाह तक करेगा, ऐसा नहीं। सीधे-सीधे तौर पर उसी अल्लाह को पुकारो) वह एक है, अकेला है। ना उसका कोई मां बाप ना कोई बीवी और ना कोई औलाद। ना उसे किसी ने जन्म दिया और ना उसने किसी को जन्म दिया। वह आसमानों से ऊपर अर्श पर मुस्तवी है *(Firmly established on the throne*, कैसे? जैसे उसके लायक़, हमें इल्म नहीं) वह ज़मीन पर नहीं उतरा (उसने ख़ुद या किसी अवतार के रूप में ज़मीन पर जन्म नहीं लिया) ना वो कण-कण और कंकर कंकर में हर जगह मौजूद है मगर वह सब कुछ जानता है और उसने हर चीज़ का इहाता किए हुए है, घेरे हुए है अपने इल्म से। वह पहले से था और आख़िर तक हमेशा हमेशा रहेगा। (वह पहले से था, उसने पूरी कायनात (ब्रहमाण्ड) को बनाया, क़यामत में सब मिट जाएगा वो बाक़ी रहेगा) वह बेनियाज़ है *(Eternal absolute)* और उस जैसा कोई नहीं। वह सर्व शक्तिमान है जो चाहता है कर गुज़रता है (*Kun Fayakun* , हो जा और वह हो जाता है) उसने आसमानों और ज़मीनों को बनाया, सूरज चांद सितारों को बनाया, आग, हवा, पानी को बनाया, आसमानों और ज़मीनों की तमाम चीज़ों को बनाया, उसकी बादशाहत इन सब पर छाए हुए है (उसी की इबादत करो, उनकी क्यों इबादत करते हो जो ख़ुद बनाए गए हों। और उसके मोहताज और कब्ज़े में हों) उसी ने ज़िन्दगी और मौत को बनाया (फिर क्यों दूसरों को पुकारते हो कि औलाद दे दे। वह ग़नी है *(All sufficient, independent)* अगर उसकी बातों *(Kalimaat)* को लिखने के लिए समंदर सयाही हो जाए तो वो भी अल्लाह की बातों को लिखने से पहले ख़त्म हो जाएगी चाहे हम उस जैसा दूसरा भी ले आएं।

संक्षेप में यह तौहीद का मतलब बयान किया गया। अल्लाह की सिफ़ात *(Attributes)* के बारे में जितना लिखा जाए वह नाकाफ़ी और ना के बराबर है।

इसी अल्लाह की इस्लाम में इबादत की जाती है। इसके सिवा और किसी की नहीं, किसी रूप में नहीं। इसके अलावा सब नकारा जाएगा *(Rejected)*।

ईमान *(Faith & Belief)*

इस्लाम के दोनों मूल ग्रंथों का सच्चे और खुले दिल से लगन के साथ मुतालआ *(Study)* करने से मालूम होता है कि इस्लाम में दो चीज़ों को शीर्ष पर और सर्व प्रथम रखा गया है। यानी इन्हें वरियता हासिल है। पहला ईमान और दूसरा इस्लाम के पांच स्तम्भ *(Pillars)*। इन पर दिल से यक़ीन और दृढ़ विश्वास *(Faith)* के साथ ईमान होना, इसका अपनी ज़बान यानी अपनी बात और शब्दों से इक़रार (स्वीकार) करना और उसके ठीक मुताबिक़ अपना हर अमल कार्य और कर्म काण्ड करना फ़र्ज़ *(Obligatory)* और ज़रूरी है। उन तीनों में से किसी एक को भी छोड़ने से ईमान नहीं रहता। ईमान और इस्लाम की कुछ शाखाएं हैं। इस्लाम को समझने के लिए इनका जानना बहुत ज़रूरी है।

उमर रज़िअल्लाहु अन्हु बयान करते हैं कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि ईमान ये है कि तू ईमान लाए अल्लाह पर, उसके फ़रिश्तों पर, किताबों पर इसके पैग़म्बरों *(Messengers)* पर, आख़िरत के दिन पर, तक़दीर और इसके खैर व शर पर यानी इसके अच्छे या बुरे पर। (सहीह मुस्लिम, जामेअ़ तिरमिज़ी 2610 निसाई 4993)

अल्लाह पर ईमानः

अल्लाह की ज़ात पर ईमान लाना यानी उसके वजूद (अस्तित्व) और *Existance* पर कि अल्लाह है। वो एक और सिर्फ़ एक है। दूसरे उसकी सिफ़ात यानी *Attributes* पर ईमान लाना। उसकी सिफ़ात अनेक हैं। मिसाल के तौर पर संक्षेप में ईमान अल्लाह पर ये है कि इबादत सिर्फ़ अल्लाह की करनी है। देखिए जो तौहीद में बयान हुआ है। उसकी सिफ़ात की मिसाल कि वह ख़ालिक़ है यानी *Creator* करने या बनाने वाला कौन है? अल्लाह है। दूसरा कोई नहीं। इस तरह जितनी भी उसकी सिफ़ात हैं उन सब पर ईमान होना

चाहिए।

फ़रिश्तों पर ईमानः

अल्लाह ने फ़रिश्ते बनाए जो बड़ी ताक़त वाले और अल्लाह का हुक्म मानने वाले हैं। अलग-अलग कामों में लगे हैं। फ़रिश्ते ही अवतारों पर अल्लाह की किताबें और संदेश लेकर आए। फ़रिश्ते ही रूह क़ब्ज़ करते हैं (मौत) वही आदमी के हर अमल और काम को लिखते जा रहे हैं।

किताबों पर ईमानः

इस बात पर ईमान कि अल्लाह ने इंसानों की हिदायत और अल्लाह के दीन की शिक्षा और सीधी राह पर चलने के लिए अपने अवतारों पर किताबें उतारीं। जैसे मूसा अ़लैहिस्सलाम पर तौरात, ईसा अ़लैहिस्सलाम पर इंजील और मुह़म्मद ﷺ पर क़ुरआन आदि। इसी तरह हिन्दुस्तान और दूसरे इलाक़ों में आए अवतारों पर भी किताब या संदेश भेजे होंगे। हमें जानकारी नहीं क्योंकि क़ुरआन में इनका नाम नहीं बताया गया इस लिए मुसलमान को इस बारे में ख़ामोश रहना चाहिए।

पैग़म्बरों पर ईमानः

अल्लाह ने आदम अ़लैहिस्सलाम से लेकर मुह़म्मद ﷺ तक अनेक पैग़म्बर *(Messengers)* भेजे। जिन पर किताबें या संदेश आदि भेजे। जब जब भी मानव जाति अल्लाह के बताए हुए दीन से भटकी तभी अल्लाह ने एक के बाद दूसरा अवतार भेजा ताकि वह लोगों को अल्लाह के दीन की दावत और शिक्षा दे कि एक अल्लाह की इबादत करो और उसका कहना मानो और उसकी सिफ़ात पर ईमान रखते हुए अपने कर्म करो। इनमें से कुछ के नाम अल्लाह ने क़ुरआन में बताए वो भी उनकी क़ौमों की नाफ़रमानी की मिसालें देने के लिए कि किस तरह उन्होंने अल्लाह की नाफ़रमानी *(Disobedieney)* की और किस तरह उन पर अज़ाब *(Torment)* भेजे और उन क़ौमों को पूरी तरह से मिटा दिया। अल्लाह ने हर बस्ती और क़ौम पर अवतार भेजे उन सबकी जानकारी हमें नहीं। इस लिए हमें ख़ामोश रहना चाहिए। हिन्दुस्तान और दूसरे मुल्कों में भी अवतार भेजे। चूंकि हमें इनके बारे में नहीं बताया गया इस लिए मालूम नहीं कि कौन सा अवतार है और कौन सा नहीं। इस मामले में

बहस करना उचित नहीं। ख़ामोश ही रहना चाहिए और किसी भी वाद विवाद से बचना चाहिए। यही इस्लाम की शिक्षा है।

आख़िरत पर ईमानः

इस पर ईमान यह है कि एक दिन पूरा ब्रहमाण्ड मिटा दिया जाएगा और क़यामत बरपा हो जाएगी। ये कब होगी? इसका तो इल्म नहीं मगर इससे पहले अल्लाह की नाफ़रमानी और गुनाह बढ़ जाएंगे और आम *(Common)* हो जाएंगे। जैसे आज के दौर में गुनाह और पाप बढ़ते जा रहे हैं और लोग दीन से दूर होते जा रहे हैं। क़यामत के बाद फिर सबको दोबारा ज़िंदा किया जाएगा और उनके आमाल व कर्मो का हिसाब होगा। हर एक का हिसाब होगा और उनके अच्छे बुरे कर्मो की ज़्यादती के मुताबिक़ फ़ैसला करके हर एक को जन्नत, स्वर्ग या जहन्नम, नरक में डाल दिया जाएगा। इस पर यक़ीन के साथ ईमान होना ज़रूरी है। जिस से समाज में बुराइयों और ज़ुल्म व अन्याय से बचा जाए। मिसाल के तौर पर एक लड़की सुबह सुबह कॉलेज जा रही है और रास्ते में कोई पापी उससे पाप करता है या कोई आदमी जा रहा है और कोई उसका माल लूट ले। ना कोई साक्षी है ना गवाह। उस लड़की या उस आदमी पर जो ज़ुल्म हुआ उसका बदला उन्हें कैसे मिलेगा? या उस पापी और उस लुटेरे की पहचान कैसे होगी? और कैसे उनको सज़ा मिलेगी ताकि समाज में मौजूद ऐसे अपराधों को मिटाया जा सके। यह सम्भव नहीं। लेकिन अगर वो आख़िरत के दिन पर ईमान रखते होंगे तो अल्लाह से डरेंगे और इस बात से डरेंगे कि हमारे बुरे कर्मो का बदला बुरा मिलेगा और नरक के कष्ट और यातनाएं सहनी पड़ेंगी तो इससे डर कर वो या कोई भी इंसान बुरे काम नहीं करेगा और समाज अपराध, बुराइयों व ज़ुल्म और ज़्यादतियों से पाक साफ़ होगा। ना किसी पर ज़ुल्म होगा ना सताया जाएगा। हर तरफ़ अमन व चैन होगा।

तक़दीर पर ईमानः

तक़दीर और इसके अच्छे या बुरे होने पर ईमान ये है कि अच्छी या बुरी तक़दीर का मालिक अल्लाह है। उसी ने अपने इल्म और जानकारी से हर इंसान की तक़दीर को लिखा है। उसे ख़ूब मालूम है कि कौन शख़्स अच्छा होगा या कौन बुरा होगा। हर अच्छा या बुरा काम उसके मुताबिक़ ही होता है।

लेकिन वो अच्छे काम से ख़ुश और बुरे काम से नाख़ुश होता है। तक़दीर में क्या लिखा है किसी इंसान को पता नहीं मगर अल्लाह ने अपनी किताब और अवतार के ज़रिए बता दिया कि कौन सा काम अच्छा है और कौन सा काम बुरा। वो किस से ख़ुश होता है और किससे ना ख़ुश। इसकी तफ़सील व जानकारी खोल खोल कर बता दी गई। अब ये इख़्तियार *(Option)* हर इंसान को दे दिया कि उसकी *Free will* है चाहे अच्छा करे या बुरा। ना अल्लाह उसका हाथ पकड़ कर उससे अच्छा काम कराएगा और ना उसका हाथ पकड़ कर उसे बुरे काम से रोकेगा। ये पूरी तरह से हर इंसान की मर्ज़ी पर है कि वो क्या काम करे। लेकिन फिर दोहराया जाता है कि अल्लाह ने अपने दीन की मार्फ़त (द्वारा) हर चीज़ और काम, कर्म के बारे में बता दिया कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। उसे क्या करना चाहिए और किससे बचना चाहिए। अब उसकी मर्ज़ी है कि वह अल्लाह से डर कर बुरे कामों से बचता है या नहीं और अल्लाह से डर कर उसकी ख़ुशी और जन्नत या स्वर्ग पाने के लिए उच्छे काम करता है या नहीं।

इस्लाम में बता दिया गया है कि दुनिया की ज़िंदगी बहुत छोटी है। और आख़िरत की ज़िंदगी ना ख़त्म होने वाली *Endless* है। अब इंसान को चाहिए कि वह दुनिया में अच्छे काम करे ताकि आख़िरत में उसे इसका अच्छा बदला मिले और जन्नत का ना ख़त्म होने वाला जीवन, जहां उसे सुख ही सुख होगा और ऐसी निअ़मतें *(Bounties)* मिलेंगी जिनके बारे में कोई सोच भी नहीं सकता।

इस्लाम के स्तम्भ

ऊपर बताई गई हदीस में यह भी फ़रमाया गया कि इस्लाम ये है कि तू गवाही दे (दिल से यक़ीन करे और ज़बान से कहे) कि कोई इबादत के लायक़ नहीं सिवाय अल्लाह के (सिर्फ़ उसी की इबादत करनी है और उसके साथ किसी को शरीक नहीं करना) और बेशक मुहम्मद ﷺ उसके भेजे हुए रसूल हैं और नमाज़ को क़ायम करो। ज़कात को अदा करे। रमज़ान के महीने के रोज़े रखे। और अल्लाह के घर की हज करे अगर इसकी इस्तताअत *(Capacity)* रखता है।

ये पांच स्तम्भ हैं इस्लाम के। ईमान और इस्लाम में बयान किए गए इन सभी पर यक़ीन और ईमान के साथ अमल करना फ़र्ज़ है। किसी एक को भी छोड़ने से उसका ईमान मुकम्मल यानी पूर्ण नहीं। जो अल्लाह की नाराज़गी का सबब और कारण बन सकता है। मिसाल के लिए देखिये कि शराब इस्लाम में मना है, हराम है। अब अगर कोई शराब पीता है तो फ़रमाया गया है कि जब शराब पीता है तो मोमिन नहीं होता। यानी उसका ईमान मुकम्मल नहीं। उसने अल्लाह और उसके रसूल की नाफ़रमानी की जो अल्लाह की नाराज़गी का कारण है। जिससे उसको इस बुराई का आख़िरत में बुरा बदला मिलेगा। इसलिए मुसलमान इस काम को नहीं करेगा। इसलिए इस्लाम को मानने वाले हर मुसलमान पर अनिवार्य और फ़र्ज़ है कि वह क़ुरआन की हर बात को माने और नबी मुहम्मद ﷺ की हर सहीह हदीस को माने और उसके अनुसार अपना जीवन यापन करे और समाज का निर्माण करे।

सवाल आस्था का

इस्लाम अमन, सलामती और शांति का दीन है। यह समाज में आपसी भाई चारा और प्यार मुहब्बत को प्रोत्साहित करता है। ईमान में बयान हो चुका है कि मुसलमान पर फ़र्ज़ है कि वो हर नबी (अवतार) पर ईमान रखता हो। उनमें कोई भेदभाव नहीं रखता। सबकी इज़्ज़त व इकराम और मान सम्मान करता है। इसी तरह सब किताबों के बारे में भी। क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

''....उसके रसूलों में से किसी में हम तफ़रीक़ नहीं करते।'' (फ़र्क़ नहीं करते, *No differentiation*) (सूरह बक़रा 2/285) फिर फ़रमाया गया कि:

''जिस बात की तुझे ख़बर ही ना हो उसके पीछे मत पड़।'' (सूरह बनी इसराईल 17/36)

इसका मतलब इस संदर्भ में ये होगा कि जिनके बारे में तुम्हें जानकारी नहीं कि वह अवतार हैं या नहीं तो उनके बारे में ख़ामोश रहो। उनको बुरा मत कहो ना उनका किसी भी तरह अनादर करो। जैसा कि फ़रमाया गया है कि:

''गाली ना दो उनको जिनकी ये लोग अल्लाह को छोड़ कर इबादत करते हैं.... ।'' (सूरह अनआ़म 6/108)

जो मुसलमान अल्लाह पर ईमान रखता हो और उसके दीन पर चलता हो वह हर नबी का मान सम्मान मर्यादा और आदर करेगा और किसी भी तरह की गुस्ताख़ी और अपमान नहीं करेगा।

यही कारण है कि नबी मुह़म्मद ﷺ की ज़िंदगी में जो इस्लाम का सुनहरा दौर था और इस्लाम पूरे अरब और आसपास के इलाक़ों में फैल चुका था तब भी ख़ुद मदीना के क़रीब दूसरे धर्मों के लोग पुर अमन, शांति और भाई चारे के साथ बसते रहे। और ऐसा ही दूसरे मुल्कों में भी हुआ जिनमें बाद में इस्लाम पंहुचा और मुसलमानों की हकूमत रही, चाहे वह एशिया, अफ्रीका के देश रहे या यूरोप के।

अमेरिका के कुछ राज्यों, यूरोप के कई देशों में, आस्ट्रेलिया, रूस और चीन जैसे देशों में धार्मिक भावनाओं के अपमान या उनके नबी के अपमान करने वाले के ख़िलाफ़ क़ानून है और सज़ा का प्रावधान है। ऐसा ही हिन्दुस्तान में भी धार्मिक ग्रंथों और देवी देवताओं के अपमान और धार्मिक भावनाओं से छेड़छाड़ करने वालों को किसी न किसी रूप में सज़ा दी जाती है। और ऐसा भी देखा गया है कि ऐसा करने वाले पापी को पीट-पीट कर मार दिया गया।

सवाल यहां ये उठता है कि क्या ऐसे घृणित अपराध को बोलने की आज़ादी *(Freedom of expression)* या मौलिक अधिकार *(Fundamental Rights)* के नाम पर छूट दे दी जाए? यक़ीन के साथ कहा जा सकता है कि कोई भी शख़्स जो अपने धर्म में आस्था रखता हो और उपने अवतार और देवी देवताओं का मान सम्मान व आदर करता हो हरगिज़ इसको स्वीकार नहीं करेगा। जब यह अपने धर्म के बारे में मान्य हो तो हर शख़्स को यही धारणा समाज के दूसरे धर्मों के मान सम्मान के बारे में रखनी चाहिए। तभी एक अच्छे समाज का निर्माण सम्भव है और एक अच्छे राष्ट्र का। ऐसा समाज, राष्ट्र की उन्नति, अमन व चैन, शांति और सुरक्षा में मुफ़ीद *(Beneficial)* होता है। इसलिए हर शख़्स को चाहिए कि वह अपने और दूसरों के धार्मिक ग्रंथों और उनके अवतार व देवी देवताओं का किसी भी रूप

में अपमान ना करे। हर किसी को अपना धर्म अपनाने और उसके अनुसार कर्म काण्ड करने की आज़ादी हो। आपस में भाईचारा और प्यार मुहब्बत क़ायम रहे। यही इस्लाम का पैग़ाम और संदेश है।

Readers Note

पाठकगण इस्लाम के बुनियादी ढांचा, उसके मूल सिद्धांतों और इस्लाम में दूसरे धर्मों के मान सम्मान के बारे में अवगत हो गए होंगे और जान गए होंगे। हर धर्म के मूल ग्रंथ होते हैं और इस्लाम के भी दो मूल ग्रंथ हैं। पहला क़ुरआन और दूसरा अहादीस़ नबी का संग्रह और संकलन। इनके आधार पर समाज के अनेक तत्वों और भागों *(Elements & Parts)* के बारे में देखते है कि इनके बारे में इस्लाम में क्या मान दण्ड *(Criteria)* हैं। कैसा समाज होना चाहिए। उसमें क्या प्रोत्साहित किया गया है और क्या मना है।

इसमें बयान की जाने वाली क़ुरआन की आयत का संदर्भ *(Reference)* सूरह के नाम और नम्बर *(Chapter Name & Number)* और आयत के नम्बर *(Verse Number)* से दिया जाएगा। जैसे सूरह नूर 24/6 का मतलब हुआ कि बयान किया गया संदर्भ क़ुरआन की सूरह नम्बर 24 की आयत नम्बर 6 है। दूसरे हदीस़ को उसकी किताब का नाम और हदीस़ नम्बर से दिया जाएगा। जैसे तिर्मिज़ी 236 का मतलब हुआ कि इमाम तिर्मिज़ी की किताब की हदीस़ नम्बर 236।

सब एक बाप की औलाद

पहले इस ज़मीन पर आदमी नहीं बसते थे। यहां सिर्फ़ अन्य प्राणियों का बसेरा था। इस्लाम के कुछ महान लोगों का कहना ये भी है कि आदमी से पहले इस ज़मीन पर जिन्न बसते थे। सभी मुख्य ज्ञात धर्मों का मानना है कि सबसे पहले अल्लाह ने आदम अ़लैहिस्सलाम यानी मनु को इस धरती पर भेजा। ज़मीन पर बसने वाले आदम अ़लैहिस्सलाम पहले आदमी थे। और उनके साथ उनकी पत्नी हव्वा अ़लैहिस्सलाम भी थीं जिनको अल्लाह ने आदम की पसली से पैदा किया था। और फिर उन दोनों के संतानें पैदा हुई और आदमी की नस्ल आगे बढ़ी। जैसा कि क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

''ऐ लोगो! अपने रब से डरो, जिसने तुम्हें एक जान से पैदा किया और

उसी से उसकी बीवी को पैदा करके उन दोनों से बहुत से मर्द और औरतें फैला दीं....।'' (सूरह निसा 4/1)

इस तरह सभी धर्मों का मानना है कि ज़मीन पर आदमी की शुरूआत इन दोनों से हुई ना कि जैसा *Darwin Theory of Evolution* में कहा गया है। जो कि एक *Proven Theory* नहीं है और वेज्ञानिकों की तरफ़ से ही अनेक *Objections* हैं। सम्भव है कि भविष्य में कोई दूसरी *Theory* आ जाए।

बहरहाल धर्मिक आधार पर बात ये है कि पूरी मानव जाति एक ही बाप की औलाद है। दूसरे उनमें क़बीले और जातियां भी अल्लाह ने ही बनाई और वो भी आपस में लड़ने झगड़ने या नफ़रत व फ़साद फैलाने के लिए नहीं बल्कि इस लिए कि इन्सान छोटे-छोटे समूह में एक दूसरे को पहचाने, एक दूसरे से अच्छा व्यवहार करें एक दूसरे के दुख दर्द में मदद करें, एक दूसरे की ख़ुशी में शामिल हों और आपस में प्यार मुहब्बत के साथ रहें। जो कि पूरी मानव जाति के एक समूह में रहने से सम्भव और मुमकिन ना होता। जैसा कि क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

''ऐ लोगो! हमने तुम सब को एक मर्द व औरत से पैदा किया है। और इसलिए कि तुम एक दूसरे को पहचानो कुन्बे और क़बीले बना दिए हैं....।'' (सूरह हुजुरात 49/13) और दूसरी जगह फ़रमाया गया है कि:

''..... फिर उसे नस्ब (Lineage) वाला और ससुराली रिश्तों वाला कर दिया ....।'' (सूरह फुरक़ान 25/54)

एक दूसरे को पहचानो इसलिए ख़ानदान, कुन्बे, क़बीले और ससुराली वाला बनाया। मतलब पूरी मानव जाति के मुक़ाबले छोटे समूह में बनाया ताकि एक दूसरे के साथ अच्छा सलूक किया जा सके। इससे समाज में आपसी भाई चारा और मुहब्बत बनी रहेगी और एक अच्छे समाज को क़ायम करने में मदद मिलेगी।

इस तरह पूरी मानव जाति और हम सब एक ही बाप की औलाद हैं। हम में कोई धर्म, जाति, अमीर, ग़रीब या काला गोरा होने की वजह से बड़ा और *Superior* नहीं होता बल्कि अल्लाह के नज़दीक सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला वो है जो उससे सबसे ज़्यादा डरने वाला है और उसका फ़रमांबरदार है। उसके

उतारे हुए धर्म इस्लाम पर यक़ीन के साथ अमल करता है।

इसलिए इस्लाम की तालीम और शिक्षा के आधार पर समाज ऐसा हो जिसमें कोई भेदभाव ना हो, कोई ऊंचनीच ना हो, ना किसी को हक़ीर (तुच्छ) समझो और ना आपस में नफ़रत करो। बल्कि सब एक बाप की औलाद की तरह आपस में मिलकर रहो।

इस्लाम में औरत का मक़ाम *(Place)*

इस्लाम से पहले जाहिलियत यानी अज्ञानता *(Age of Ignorance)* का दौर था जिसे असभ्यता का दौर *(Age of Barbarism)* भी कहा जाता है। औरतों को ज़्यादा हकूक़ *(Rights)* हासिल नहीं थे ना ही उनकी कोई क़ानूनी हैसियत थी। उनको मात्र काम वासना *(Sex)* को ज़रिया माना जाता था। औरत का काम सिर्फ़ बच्चे, ख़ास तौर पर लड़के पैदा करने का था।

विरासत में उनका कोई हक़ नहीं होता था और जायदाद सिर्फ़ लड़कों को ही मिलती थी जिसे इस्लाम में ख़त्म कर दिया गया और औरतों को (मां, बीवी, लड़की, बहन आदि) विरासत का हक दिया। (सूरह निसा 4/11)

औरत को अग़वा *(Kidnap)* कर लिया जाता था और उससे शादी कर ली जाती थी। इस्लाम ने औरत के जान माल का ज़बरदस्ती वारिस बनने *(Forced Possession)* और लूटमार *Kidnapping* जैसे अमल को हराम कर दिया। (सूरह निसा 4/10 व सूरह अ़नकबूत 29/29)

शराब और जुवा आम था इन्हें भी अल्लाह ने हराम कर दिया। (सूरह माइदा 5/90) उनका एक बर्बरता पूर्ण काम ये था कि औरत को क़त्ल कर देते और पैदा हुई लड़की को जिंदा दफ़न कर दिया जाता। इससे अल्लाह ने बड़ी सख़्ती से मना कर दिया। (सूरह नहल 16/58,59 व सूरह तकवीर 81/8,9)

माहवारी के दिनों में औरत को नापाक और अछूत समझा जाता था और उसे दूसरी जगह रखा जाता उसको छूने और उसके हाथ का खाना खाने से मना कर दिया जाता था। इस्लाम ने इस बुराई को भी ख़त्म कर दिया। रसूल ﷺ ने फ़रमाया: उन्हें (औरत) घरों में अपने साथ रखो और सेक्स *(Sex)* के अलावा तमाम काम कर सकते हो। (सुनन अबी दाऊद 258)

आयशा रजि॰ बयान करती हैं कि मैं एक हड्डी से गोश्त खाती और मैं हायज़ा *(Mensturating)* होती फिर मैं वो (हड्डी) नबी ﷺ को दे देती। आप अपना मुंह उसी जगह रखते जहां मैंने रखा होता था.....। (सुनन अबी दाऊद 259)

अगर किसी औरत का शौहर (पति) मर जाता तो उस औरत को एक तंग और अंधेरी कोठरी में रखा जाता। बुरे कपड़े पहनती। जब इसी हालत में एक साल बीत जाता तो कोई जानवर या परिंदा उसके पास लाते वो औरत उससे अपनी शर्मगाह रगड़ती। अकसर वह जानवर मर जाता। फिर वो औरत वहां से बाहर आती। (सहीह बुख़ारी, किताब तलाक़)

इस तरह बहुत सी बातें हैं जिनसे मालूम चलता है कि उस दौर में औरत के साथ अच्छा सुलूक नहीं किया जाता था और उसे समाज में उचित मान सम्मान हासिल नहीं था। अगर दूसरे धर्मों की बात करें तो उन सभी प्रमुख धर्मों में भी औरतों की दशा अच्छी नहीं थी।

यहूदी धर्म में औरत की हैसियत एक नौकर की होती थी। उसे विरासत *(Inheritance)* में कोई अधिकार नहीं होता था। उसे बुराई और गुनाह का ज़रिया *(Source)* माना जाता और अगर कोई औरत को माहवारी के दिनों में छू लेता तो उसे सात दिनों तक नापाक और अपवित्र माना जाता।

ईसाई धर्म में तो मान्यता थी कि औरत की कोई रूह या आत्मा *(Soul)* ही नहीं और वह गुनाह का ज़रिया है।

हिंदू धर्म में मनु के मुताबिक़ औरत के कोई हुक़ूक़ *(Rights)* नहीं थे। वह अपने बाप और शौहर की महज़ एक नौकर होती। उसे विरासत का हक़ नहीं था ना ही जायदाद में मालिकाना हक़ रखती थी। सतिप्रथा और विधवा के साथ अच्छा सुलूक नहीं किया जाता था।

इस्लाम ने औरत को हुक़ूक़ अता किए। उसको मान सम्मान और आदर के साथ समाज में अच्छा मक़ाम दिया। औरत के साथ होने वाली तमाम कुरीतियों, ज़ुल्म और ज़्यादती को जड़ से मिटा दिया और हर ऐसे अमल को हराम क़रार दिया।

देखिए अल्लाह ने अपने और अपने रसूल के ऊंचे मक़ाम के बाद मां बाप का मक़ाम रखा। और फिर मां बाप में मां को बाप से तीन गुना ज़्यादा हैसियत दी।

हदीस़ में बयान हुआ है कि मैंने कहा ऐ अल्लाह के रसूल ﷺ मैं किससे सबसे ज़्यादा हुसने सुलूक करूं यानी अच्छा बर्ताव करूं? आप ﷺ ने फ़रमाया अपनी मां से। मैंने पूछा फिर किससे? आप ने फ़रमाया अपनी मां से। मैंने पूछा फिर किससे? आपने फ़रमाया अपनी मां से। फिर अपने बाप से फिर दूसरे करीबी रिश्तेदारों से फिर दूसरे क़रीबी रिश्तेदारों से। (जामेअ़ तिरमिज़ी 1897)

रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि जो बेटियों में फंस जाए फिर उनके साथ अच्छा सुलूक करे तो क़यामत के दिन जहन्नम से उसका बचाव होगा। (सहीह बुख़ारी, किताब अदब)

जबकि उस ज़माने में लड़की का पैदा होना ही ग़म का कारण बन जाता था। अगर किसी के यहां लड़की पैदा हो जाती तो उसके मुंह का रंग काला हो जाता, फीका पड़ जाता और मायूस व ग़मज़दा हो जाता। और ये रिवाज भी था कि लड़की को ज़िंदा दफ़न कर दिया जाता। इन सबसे अल्लाह ने सख़्ती से मना कर दिया जैसा कि ऊपर बयान की गई क़ुरआन की आयत में फ़रमाया गया है। यही अमल फिर मुसलमानों में आम हो गया और लड़की की पैदाइश को बुरा ना मानते।

इब्ने उमर रज़ि. के पास एक आदमी बैठा था, उसकी बेटियां थीं। वो इनकी मौत की तमन्ना करने लगा। इब्ने उमर रज़ि. गुस्से में आ गए और फ़रमाया, क्या तू इन्हें रिज़्क़ देता है? (बुख़ारी अदब अल मुफ़रद, हदीस़ 83)

जैसा कि पहले बयान हो चुका कि मुसलमान पर फ़र्ज़ है कि वह तक़दीर पर ईमान लाए। और इस पर भी कि हर चीज़ का मालिक अल्लाह है। जो तक़दीर में लिखा है वह होकर रहेगा। और हर पैदा होने वाले का पालन पोषण भी वही करेगा। वही रिज़्क़ का देने वाला है, वही पालने वाला है। देखिए एक मिसाल कि हिन्दुस्तान की आबादी 1965 ई. में 50 करोड़ थी और लोगों को खाने के लिए पूरा अनाज नहीं होता था। बाहर मुल्कों पर निर्भर रहना पड़ता था

और अब आबादी 135 करोड़ और अनाज का प्रयाप्त भंडार ख़ुद अपने ही देश में मौजूद है। और उस वक़्त की ग़रीबी की हालत और *Living Standard* पर भी ग़ौर कर लीजिए, बहुत सुधार मिलेगा। दूसरे जिन मुल्कों ने आबादी पर ग़ैर मुनासिब पाबंदी लगाई थी आज *Work Force* की कमी और बूढ़ों की ज़्यादा आबादी जैसे मसलों से जूझ रहे हैं जिनमें जापान, चीन और यूरोप के सभी देश शामिल हैं।

इसलिए लड़की के पैदा होने पर भी मायूस नहीं होना चाहिए और लड़कों की तरह ही उसका भी पालन पोषण और देख रेख करनी चाहिए।

पहले जिस औरत का शौहर मर जाता और वो विधवा हो जाती तो समाज में उसको उचित सम्मान ना मिलता और ना ही उसकी दोबारा शादी होती या आसान ना होती। इस्लाम ने विधवा औरतों से शादी करना और उनकी मदद करने को प्रोत्साहित किया। और ख़ुद रसूलुल्लाह ﷺ ने विधवा से शादी की।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि विधवा और मिस्कीन की मदद करने वाला मुजाहिद के बराबर है या उसके बराबर जो हर दिन रोज़ा रखता हो और रात को इबादत में लगा रहता हो। (सहीह बुख़ारी, किताब अदब)

रसूल ﷺ विधवाओं और मिस्कीन ग़रीब लोगों से बहुत मुहब्बत करते और उनकी मदद करने और उनका साथ पसंद करते थे। जैसा कि हदीस़ में आया है कि: रसूल ﷺ विधवाओं और मिस्कीन के साथ चलते और उनका काम कर देने में नहीं शर्माते थे। (निसाई 1417)

इस्लाम ने औरतों को विरासत और मेहर का हक़ दिया, उनके साथ बराबरी का अच्छा सुलूक करने का हुक्म दिया। औरत के अपने शौहर पर क्या हक़ हैं इसके बारे में आप ﷺ ने फ़रमाया कि जब तुम खाओ तो उसे भी खिलाओ *(Same)*। और जब पहनो तो उसे भी पहनाओ, उसके चेहरे पर ना मारो और ना उसे बुरा भला कहो और घर के सिवा उसे अलग मत करो। (सुनन अबी दाऊद 2142)

रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि मैं दो ज़ईफ़ों *(Weak)* यानी यतीम *(Orphan)* और औरत के हक़ को ममनूअ़ *(Forbidden)* और हराम क़रार देता हूं। (सिलसिला सहीहा 1015)

यानी औरत और यतीम को हक़ीर और अछूत नहीं समझना चाहिए। समाज में उनको भी वही मान सम्मान और आदर सत्कार मिलना चाहिए जो एक मर्द को मिलता है। उन्हें कमज़ोर समझ कर ना उन पर कोई ज़ुल्म हो ना सताया जाए, ना उनका कोई हक़ मारा या छीना जाए। ये कुछ मिसालें थीं जिनसे यह समझने में मदद मिल सके कि इस्लाम मात्र एक ऐसा दीन है जिसमें औरत को ठीक एक मर्द की तरह पूरा अधिकार और हक़ दिए हैं। उनको समाज में ऊंचा वक़ार *(Dignity)* की रक्षा की।

इस तरह इस्लाम ने औरतों के हुकूक़ को मान्यता दी। अल्लाह और उसके रसूल की फ़रमांबरदारी और आज्ञा पालन करने में मर्द और औरत को एक समान रखा। इस्लाम की शरीअत के कानून ने औरतों की तालीम व शिक्षा, रोज़गार व कारोबार, विरासत, *Public Appearance*, घरेलू ज़िम्मेदारियां, शादी की रज़ामंदी, शादी का मेहर *(Dowry)*, तलाक़, शादी से पहले या शादी के बाहर शारीरिक सम्बंध बनाना *(Sex)* यौन अपराध पर न्याय, खुद की जायदाद का हक़ रखना, इबादत और दीगर सभी मामलों में अहकाम और दिशा निर्देश बनाए। जिसके मुताबिक़ हर मुसलमान मर्द और औरत दोनों को अमल करना चाहिए।

औरत और मर्द एक बराबर

आमाल (कर्म) और उसके सवाब या उनका बदला मिलने में मर्द और औरत में कोई फ़र्क़ नहीं रखा गया। धर्म में जो अहकाम, क़ायदे क़ानून मर्द के लिए हैं वहीं एक औरत के लिए भी। अगर एक मर्द अच्छा अमल (कर्म) करेगा तो आख़िरत में उसको इसका अच्छा बदला मिलेगा और अगर बुरा कर्म करेगा तो उसको बुरा बदला मिलेगा। ठीक इसी तरह औरत का मामला भी मर्द की तरह है। इसकी वज़ाहत *(Clarification)* ख़ुद क़ुरआन में भी बयान कर दी गई है। जैसा कि फ़रमाया गया है कि:

''बेशक मुसलमान मर्द और मुसलमान औरतें.... (कई अच्छे अमल करने वालों का ज़िक्र किया) .... इन सब के लिए अल्लाह तआ़लाने मग़फ़िरत

(क्षमादान, *Salvation*) और बड़ा सवाब तैयार कर रखा है।" (सूरह अहज़ाब 33/35)

इससे तात्पर्य यह है कि तमाम अहकाम *(Ruling)* में मर्दों के साथ औरतें भी शामिल हैं। इबादत, अल्लाह और उसके रसूल की फ़रमांबरदारी, आख़िरत के सवाब और कर्मों के मिलने वाले बदले में मर्द और औरत के दरम्यान कोई फ़र्क़ नहीं है। दोनों एक सी नेकियां कर सकते हैं और दोनों को हर बुराई से एक सा बचना है। मर्द या औरत होने के नाते उन पर कोई कमी-बेशी नहीं की जाएगी।

अगर कोई फ़र्क़ है तो उनकी शारीरिक बनावट की वजह से रखा गया है। मर्द और औरत के शरीर की बनावट, उसकी मज़बूती और उसके काम करने की ताक़त (कार्य क्षमता) एक सी नहीं। इसको हर शख़्स को तसलीम करने और मानने में कोई शक नहीं होगा। दूसरे औरत को हर महीने कुछ दिन एक ऐसे दौर से गुज़रना होता है जिसकी वजह से उसे एक शारीरिक और मानसिक दबाव से गुज़रना होता है जिससे उसकी कार्य क्षमता और कार्य शैली में भी फ़र्क़ आ जाता है। तीसरे उसको नौ महीने के हामला (गर्भवती) के दौर में बच्चे को पेट में लेकर घूमना फिरना पड़ता है जिससे उसमें शारीरिक और मानसिक बदलाव देखने में मिलता है। चौथे उसको शारीरिक तौर पर ऐसा बनाया गया है कि उसको देखकर आदमी ख़ासतौर पर नौजवान मर्दों के दिल में एक कशिश और झुकाव *(Attraction)* पैदा होता है जिसकी वजह से उसका ग़ैर मुनासिब वक़्त में अकेले घर से बाहर रहना महफ़ूज़ नहीं रहता। पांचवें जज़्बाती *(Psychological)* तौर पर भी औरत एक मर्द की तरह नहीं होती। ऐसे ही कई कारणों की वजह से अल्लाह ने मर्द और औरत की ज़िम्मेदारियों में फ़र्क़ रखा है।

मेरा मानना है और यह एक अहम बात है जिसको आप सभी तसलीम करेंगे और सहमत होंगे कि जिस तरह एक *Software Engineer* को यह अच्छी तरह मालूम होगा कि उसका *Software* कैसे काम करता है या उसमें कोई *BUG* या *Problem* आई तो क्यों आई, कहां से आई, जो कि एक इस्तेमाल करने वाले के लिए जानना ना मुमकिन है। या फिर एक

Mechanical Engineer को यह बख़ूबी मालूम होगा कि उसकी बनाई गई मशीन कैसे काम करेगी, कहां काम करेगी, क्या काम कर सकती है क्या नहीं, क्या और कहां काम करने से उसमें क्या ख़राबी आई और उसमें अगर ख़राबी आई तो वह कहां और किस पुर्ज़े में आई होगी और क्यों आई होगी। ठीक उसी तरह हमारे ख़ालिक़ को जिसने हम सबको बनाया और पैदा किया उसको ठीक मालूम है कि मैंने क्या बनाया। मर्द और औरत को कैसे बनाया। इनकी क्या *Limitations* हैं और क्या क्षमताएं *(Capacity)* किसको किस काम पर लगाना चाहिए किस पर नहीं। किसको कौन सा काम देना चाहिए कौन सा नहीं, उसको कैसे और कहां रखा जाए और उनके कामों का कैसे बंटवारा किया जाए। इन सब को देखते हुए ही तो उसने मर्द और औरत को अलग अलग काम सौंपे और अलग अलग ज़िम्मेदारिया दी हैं। और उसने (अल्लाह) मर्द और औरत के लिए कुछ अलग अलग अहकाम नाज़िल किए (उतारे)। एक शख़्स जो धर्म का मानने वाला और उसका पालन करने वाला होगा और उसका फ़रमांबरदार व आज्ञाकारी होगा वह इसको तसलीम करेगा और इनका पालन करेगा। दूसरे यही एक आदर्श समाज के लिए फ़ायदेमंद और मुफ़ीद होगा। और इससे इंकार करने या इससे भटकाव के दूरगामी नतीजे समाज को भुगतने पड़ेंगे। वह चाहे मानसिक तौर पर हों या बीमारियों की शक्ल में या फिर औरलाद की गुमराही और ख़राबी की शक्ल में भुगतनी पड़े।

मर्द और औरत की ज़िम्मेदारियां

मर्द औरत को शारीरिक, मानसिक और जज़्बाती यानी भावनाओं के एतबार से अलग-अलग बनाया है। इसलिए उनकी ज़िम्मेदारियां भी अलग-अलग मुक़र्रर कीं हैं। इसमें अल्लाह की क्या हिकमत *(Wisdom)* रही होगी इसको वही जानता है जो सबका पैदा करने वाला है। अल्लाह ने फ़रमाया कि:

''औरतों के भी वैसे ही हक़ हैं जैसे उन पर मर्दों के हैं, अच्छाई के साथ (बराबर Equitable) (लेकिन) मर्दों को औरतों पर फ़ज़ीलत है (वरीयता, a degree Over Them)।'' (सूरह बक़रा 2/228)

यानी जैसे मर्द को अपनी बीवी पर हक़ है ठीक उसी तरह बराबरी का

औरत को भी अपने मर्द (पति) पर हक़ है। औरत के साथ अच्छाई के साथ हुसने सुलूक, अच्छा बर्ताव और मान सम्मान का मामला रखना चाहिए। और फ़रमाया कि:

"मर्द औरतों पर हाकिम हैं इस वजह से कि अल्लाह ने एक को दूसरे पर फ़ज़ीलत दी है।" (सूरह निसा 4/34)

यहां पर फ़रमाया जा रहा है कि मर्द औरतों पर हाकिम *(Protector & Maintainer)* हैं जिसका मतलब मर्द इनकी हिफ़ाज़त करने वाला और देखभाल करने वाला हैं। और यह कि मर्द उनके मामलात की देखभाल करने का ज़िम्मेदार है। यह इस वजह से कि मर्द को औरत पर एक फ़ज़ीलत है, बढ़ोतरी/बरतरी है। क्योंकि मर्द को उससे ज़्यादा ताक़त और ज़िम्मेदारियां दी गई हैं। जैसा कि पहले बयान किया गया कुछ बातें यहां दोहरा दी जाएं जिन की वजह से मर्द को औरत पर फ़ज़ीलत है और जिन वजहों से मर्द और औरत को अलग अलग ज़िम्मेदारियां दी गई हैं। पूरा इल्म तो अल्लाह ही को है, वो ही बेहतर जानता है। वो बातें ये हैं:

- शारीरिक ताक़त और बनावट।
- माहवारी के दौरान तकलीफ़ उठाना और कमज़ोरी।
- गर्भ धारण, *Delivery* और बच्चे को दूध पिलाना।
- जज़्बाती तौर पर फ़र्क़ *(Sentimental Difference)*।
- मर्दो का उसकी तरफ खिंचाव, *(Inclination)*।
- अपनी इफ़्फ़त यानी सतीत्व *(Chastity)* और हया, लाज व शर्म की हिफ़ाज़त करना।

इन जैसे फ़र्क और अन्तर की वजह से मर्द और औरत की अलग-अलग ज़िम्मेदारियां बताई गई जैसे एक मर्द को मुख्य रूप से जो काम करने हैं वो कुछ इस तरह से हो सकते हैं।

- अपने दीन और धर्म की हिफ़ाज़त करना।
- अपने घर परिवार की आफ़तों और मुसीबतों से हिफ़ाज़त करना और सुरक्षा देना।
- अपने घर परिवार की दुश्मनों से हिफ़ाज़त करना।

- अपने वतन देश और क़ौम की दुश्मनों से हिफ़ाज़त करना।
- अपने बच्चों के पालन पोषण और देख भाल का मुनासिब इंतिज़ाम करना।
- बच्चों को दीन धर्म और दुनिया की ऊंची तालीम व शिक्षा दीक्षा का इंतिज़ाम करना।
- अपने कारोबार खेती आदि के ज़रिए धन दौलत कमाना।
- अपने घर परिवार व बच्चों के ख़र्च का दायित्व उठाना और इंतिज़ाम करना।
- ऐसे दूसरे सभी काम जो औरत के लिए करना मुनासिब, मुमकिन और महफ़ूज़ व सुरक्षित नहीं।
- घर के काम में बीवी की मदद करना और सुख दुख में उसका हमसफ़र व हमदर्द बने रहना।

इसी तरह मुख्य रूप से एक औरत को जो ज़िम्मेदारियां दी गई हैं वह कुछ इस तरह हो सकती हैं:

- अपने सतीत्व, इफ़्फ़त, लाज व शर्म हया को बचा कर रखना और अपने गौरव *(Dignity)* और मान सम्मान को समाज में बनाए रखना।
- शौहर *(Husband)* और अपनी जिस्मानी ख़्वाहिश *(Phyisical Desire, Sex)* को धर्मिक नियमों के अनुसार पूरा करना।
- बच्चों व संतान पैदा करना और वंश को चलाने में मदद करना।
- बच्चे को दूध पिलाना और उसकी मुनासिब देखभाल करना।
- बच्चों की परवरिश करने में शौहर का हाथ बंटाना।
- बच्चों की दीनी और दुनियावी तालीम व शिक्षा में महत्वपूर्ण योगदान देना।
- घर के काम काज करना।
- शौहर के माल, औलाद और इज़्ज़त व आबरू की हिफ़ाज़त करना।
- सामाजिक सम्बंधों और दूसरे कामों में शौहर की मदद करना।
- शौहर की अर्धांग्नी और हमसफ़र रहते हुए उसके कामों में मदद

करना।

औरत को मुख्य रूप से घर में टिके रहकर अपने शौहर, बच्चों व परिवार से सम्बंधित कामों में लगन से काम करना और शौहर की मदद और साथ निभाना चाहिए।

दीन और धर्म का पालन करने वाला अपने पैदा करने वाले रब से डरेगा और उसके बताए हुए अहकाम व क़ायदे क़ानून के मुताबिक़ अपना हर अमल करते हुए अपनी- अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरा करेगा। उसे यक़ीन होगा कि हमें अपने रब से मिलना है जो हमारे हर अमल का और हमारी तयशुदा हर ज़िम्मेदारी का हिसाब लेगा जिसके मुताबिक़ ही हमें आख़िरत में उसका सवाब और बदला मिलेगा। जैसा कि फ़रमाया गया है कि:

"रसूल ﷺ ने फ़रमाया ख़बरदार! तुम सब निगहबान (ज़िम्मेदार) हो और तुम अपनी रियाया (मातहत, *Those Under You*) के जवाब देह हो, सवाल होगा। लोगों का हाकिम उनका ज़िम्मेदार है और वो इनके बारे में जवाबदेह है। बीवी अपने शाहर के घर और औलाद की ज़िम्मेदार है और उनके बारे में जवाबदेह है। मर्द अपने घर वालों का ज़िम्मेदार है और उनके बारे में जवाबदेह है। गुलाम (नौकर) अपने मालिक के माल का ज़िम्मेदार है और उसके बारे में जवाबदेह है। बस तुम में से हर शख़्स ज़िम्मेदार है और तुम सब अपने अपने रियाया के बारे में जवाबदेह हो। (सुनन अबी दाऊद 2928)

दुख और अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि आज का इंसान अपने धर्म और रब से बग़ावत करने में लगा है। एक बड़ी तादाद तो किसी भी धर्म के ना मानने वालों *(Atheist)* की हो गई। और जो अपने धर्म को मानते भी हैं वह भी उसके मुताबिक़ अमल (कर्म) करते नज़र नहीं आते।

इंसान दुनिया के पीछे पड़ कर इसी में रीझ गया और इसमें मग्न होता जा रहा है। इसके माया जाल और मोहमाया में फंस कर एक दौड़ में शामिल है, ना जाने कहां जा रहा है। एक मिसाल ले लीजिए। औरत बराबर के हुक़ूक़ *(Equal Rights)* की बात करते हुए नौकरी और दूसरे धंधों में काम करने के लिए मर्द के साथ शामिल हो गई। यह आज की सोच और सामाजिक व्यवस्था बन गई जिसके बारे में मेरा कुछ भी कहना मुनासिब नहीं। मगर मेरी

राय में इन तीन बातों पर आप ग़ौर करें:

पहला: इससे काम के अवसरों या धन का अनुचित वितरण *(Inappropriate distribution of wealth & resources)*, आज मुल्क की युवा पीढ़ी काम न मिलने की मुसीबत *(Jobs Opportunity)* से जूझ रही है। औरत के काम करने से कहीं तो एक ही परिवार में दोगुणा लोग कार्य पर हैं और कहीं कोई भी नहीं। अगर औरत काम ना करती तो यही काम एक दूसरे परिवार के किसी शख़्स को मिलती। क्या इससे समाज और मुल्क की दशा बेहतर ना होती?

दूसरे: इसमें अकसर देखा गया है कि औरत पर ज़ुल्म होता है और प्रताड़ना। मर्द सुबह उठता है और आफ़िस या दीगर काम पर जाने के लिए तैयारी करता, बीवी का परोसा नाश्ता करता और घर से निकल जाता। शाम को वापस आता तो बीवी से चाय नाश्ता की आरज़ू रखता और खाना खाकर बिस्तर पर चले जाता। बहुत थका मांदा है। उधर बीवी अपने शौहर से पहले जागकर उठ जाती। शौहर व बच्चों के लिए नाश्ता तैयार करती, बच्चों को नाश्ता कराती, उनको स्कूल के लिए तैयार करती और भेजती,, ख़ुद काम पर जाने के लिए तैयार होती और घर से निकल जाती। शाम को लौटती तो बच्चों व शौहर के लिए नाश्ता बनाती। रात का खाना तैयार करती और शौहर व बच्चों को कराती, किचन और घर का काम समेटती। जबकि शौहर गहरी नींद में चला गया होता क्योंकि थकामांदा आया था। बीवी दीगर कामों को पूरा करती और अगर ज़रूरत होती तो बच्चों का स्कूल का काम भी देखती और पूरा कराती।

इस तरह बीवी शैहर से घण्टा भर ज़्यादा पहले उठकर कामों में लग जाती और शाम को भी शौहर से घंटों बाद ही बिस्तर पर जा पाती। इसके बाद वह वक़्त ज़रूरत पर शौहर को ख़ुश भी करती। वो बेचारी दोहरी ड्यूटी करने के बाद भी थकी मांदी होने की शिकायत ना कर पाती। छोटी-छोटी जायज़ या नाजायज़ कोताहियों पर डांट फटकार भी सुनती और बहुत सी बहनें तो प्रताड़ना भी सहती हैं। क्या यही समाज का न्याय है? उस बेचारी से दोहरा काम लिया जाता और फिर भी कोई प्रोत्साहन नहीं।

तीसरे माएं अपने नन्हे मुन्ने मासूम बच्चों को एक आया और नौकरानी के हवाले छोड़ जाती है। वो उन बच्चों को क्या संस्कार सिखाएंगी, कैसे उनकी तरबियत करेंगी और कैसा उनका लालन पोषण होगा जिसका दीन धर्म मालूम नहीं क्या है, उसके संस्कार कैसे हैं, उसकी सोच और फ़िक्र कैसी है और उसकी बच्चों के प्रति सोच व व्यवहार कैसा है। बच्चे उसी के संस्कारों से प्रभावित होकर बड़े होंगे और समाज का निर्माण करेंगे। अब मासूम बच्चे अपनी मां की गोद से महरूम और वंचित कर दिए गए। वो मां की गोद वो उसको कुदरती ग़िज़ा यानी दूध पिलाना जिसके अनेकों फ़ायदे बयान किए गए, वो मां की ममता और स्नेह, वो लाड प्यार और वो लोरियां जो मां बच्चों को सुनाती थी और उनके संस्कारों के बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देती अब उनके नसीब में नहीं। इसके दूरगामी परिणाम भी समाज को भुगतने पड़ेंगे। वो चाहे शारीरिक हों या मानसिक या भावनाओं से जुड़े। इंसान वैसा ही बनेगा जैसे संस्कार और दीक्षा उसको उसके बचपन में मिली।

इल्म और तकनीक का महत्व

क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

''पढ़ अपने रब के नाम से जिसने पैदा किया।'' (सूरह अ़लक़ 96/1)

अल्लाह ने मुह़म्मद ﷺ को नबी चुन लिया और अब अल्लाह के दीने इस्लाम और उसके अहकाम *(Ruling)* को उन पर भेजने का सिलसिला शरू होता है ताकि आप इस दीन और उसकी तालीमात *(Teachings)* को लोगों तक पंहुचाएं और उस पर अमल (कर्म) करा कर उसे नाफ़िज़ *(Establish & Implement)* कराएं। यह पहली आयत है जो नबी ﷺ पर भेजी गई यानी क़ुरआन और दीने इस्लाम का पहला पैग़ाम या हुक्म है जो मुह़म्मद ﷺ को भेजा गया।

यहां पहले तो यही समझ लेना होगा कि हुक्म किया जा रहा है कि अपने रब के नाम से शुरू करो, क्योंकि वही तुम्हारा बल्कि पूरे *Universe* का पैदा करने वाला है। इसलिए उसके बेशुमार एहसानात व निअ़मतों *(Bounties)* की शुक्र गुज़ारी करते हुए हर अमल और कर्म को करना चाहिए। जो कि इस्लाम के बुनियादी उसूलों *(Principles)* में से एक है।

अब देखिए पहला हुक्म क्या उतरता है? यही कि ऐ नबी पढ़ो......। अल्लाह क़ुरआन की किसी भी दूसरी आयत या दूसरे किसी और हुक्म से भी वही *(Revealation)* का सिलसिला शुरू कर सकता था। तो फिर यही आयत क्यों चुनी होगी जिसमें पहला हुक्म ही पढ़ने का दिया जा रहा है कि ''पढ़....'' इसकी हिकमत *(Wisdom)* तो अल्लाह ही जानता है। बस इतना कहा जा सकता है कि पढ़ाई को एक बहुत ऊंचा दर्जा दिया गया। और इल्म हासिल करने की फ़र्ज़ियत *(Obligation)* और फ़ज़ीलत *(Superiority)* को पहले मक़ाम पर रखा गया।

हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है कि वह इतना तो इल्म हासिल कर ले कि अल्लाह और उसके रसूल के हुक़ूक़ *(Rights)* की अदायगी कर सके। इबादत क्या है और कैसे करनी है जान सके। नेकी और पुन्य क्या है जिनको करने की दौड़ और कसरत से कोशिश कर सके और गुनाह और बुराई क्या है जिससे वह बच सके और कामयाबी हासिल कर सके।

इस लिए नबी ﷺ ने भी हर मुसलमान पर इल्म हासिल करने को फ़र्ज़ और अनिवार्य कर दिया। जैसा कि फरमाया गया है कि ''इल्म हासिल करना हर मुसलमान पर फ़र्ज़ है'' (सुनन इब्ने माजा 224) हर मुसलमान मर्द और औरत, बूढ़ा और जवान, बच्चा या बड़ा और अमीर या ग़रीब जो भी हो उस पर इल्म हासिल करना, सीखना और जानना फ़र्ज़ व ज़रूरी है। जैसा कि अपने वक्त के हाकिम उमर रजि. ने हुक्म जारी किया कि ''कोई शख़्स ख़रीद व फ़रोख़्त ना करे हमारे बाज़ार में जब तक दीन में समझ पैदा ना करे'' (जामेअ़ तिर्मिज़ी 487) जब जिंदगी के सिर्फ़ एक पहलू यानी तिजारत और व्यापार के क़ायदे क़ानून जानने की यह ज़रूरत बयान की गई तो जिंदगी की दीगर बातों का इल्म और उसूल जानने की कितनी अहमियत होगी जो इससे कहीं ज़्यादा ज़रूरी है।

इस्लाम में इल्म की बड़ी फ़ज़ीलत *(Importance)* रखी है। आप ﷺ ने फ़रमाया कि ''जाहिलियत *(Ignorance)* के ज़माने में जो लोग शरीफ़ समझे जाते थे वही इस्लाम के ज़माने में भी शरीफ़ हैं बशर्ते कि वह इल्म हासिल करें'' (सहीह बुख़ारी, बदइल ख़ल्क़) यहां फ़रमाया जा रहा है कि

कोई शख़्स माल, दौलत, हुस्न व जमाल और नसब या ख़ानदान से शरीफ़ व इज़्ज़त दार नहीं हो सकता बल्कि इज़्ज़तदार और अफ़ज़ल वो शख़्स होगा जो इसके साथ साथ इल्म रखता हो। तभी उसके दिल में ख़ौफ़े इलाही और तक़वा *(Fear of God)* होगा और वह नेकी की तरफ़ चलेगा और बुराइयों से बचेगा।

आप ﷺ ने फ़रमाया कि जो शख़्स इल्म तलब करने की राह पर चलता है तो अल्लाह उसे जन्नत की राहों में से एक राह पर डाल देता है। फ़रिश्ते उसकी रज़ा के लिए पंख बिछा देते हैं और आलिम (इल्म वाला) के लिए ज़मीन व आसमान की हर मख़्लूक़ *(Creation)* और पानी में मौजूद मछलियां बख़्शिश तलब करती हैं। और आलिम की आबिद पर ऐसी फ़ज़ीलत है जैसे चौदहवीं रात के चांद को सितारों पर। (सुनन अबी दाऊद 3641)

कितनी बड़ी फ़ज़ीलत *(Superiarity)* अल्लाह ने इल्म सीखने वाले के लिए रखी है। इसके लिए जन्नत आसान, फ़रिश्ते उसकी ख़ुशी के लिए अपने पंख बिछा देते और हर जानदार चाहे आसमानों में हैं या ज़मीन पर या समंदर की गहराइयों में, सब इसके लिए अल्लाह से माफ़ी मांगते हैं कि इसे माफ़ कर दिया जाए और जन्नत का हक़दार बना दिया जाए। और वह एक बड़े इबादत गुज़ार शख़्स से भी बेहतर है। इतना ही नहीं बल्कि इसे दुनिया की माल दौलत से भी बेहतर बताया गया है। आप ﷺ ने फ़रमाया ''तुम में से कौन पसंद करता है कि वह सुबह वादिये बुतहान (जगह का नाम) जाए और कोई गुनाह किए बग़ैर मोटी ताज़ी दो ऊंटनी लेकर आए। हमने (सहाबी) ने कहा ए अल्लाह के रसूल ﷺ हम सब यह पसंद करते हैं। आप ﷺ ने फ़रमाया बस अगर तुम में से कोई शख़्स हर रोज़ मस्जिद में आकर क़ुरआन की दो आयतें सीख ले तो ये दो ऊंटनी से बेहतर है। और अगर तीन तो तीन ऊंटनी से बेहतर। बस वो जितनी ज़्यादा सीखेगा उसी क़दर ऊंटनियों से बेहतर होंगी। (सुनन अबी दाऊद 1456)

मुसलमान को चाहिए कि इल्म हासिल करने की जुस्तजू और कोशिश में लगा रहे और आजिज़ ना आ जाए, ना थका मांदा अफ़सोस और ग़मज़दा हो कर बैठा रहे। अल्लाह के नज़दीक क़वी यानी मज़बूत मोमिन कमज़ोर मोमिन

से बेहतर, अफ़ज़ल और महबूब है। (सहीह मुस्लिम, इब्ने माजा 4168) इसलिए हर नफ़ादार चीज़ को हासिल करने के लिए लालसा और हिरस करनी चाहिए। तो फिर इल्म की क्यों न की जाए जिससे बढ़कर नफ़ा बख़्श और क्या हो सकता है। आज के दौर में तो हर चीज़ इल्म के दायरे में सिमट कर रह गई है जिसमें हम और हमारा परिवार ही नहीं बल्कि क़ौम और मुल्क की भलाई और सलामती भी शामिल है।

अबू दरदा रजि. ने वसीयत की कि ईमान और इल्म अपनी अपनी जगह रहते हैं जो इनकी तलाश में निकलता है वही इनको पाता है। (जामेअ़ तिर्मिज़ी 3804) नबी ﷺ के सहाबियों *(Companions)* ने अपने नबी की हर बात को समझा और अपने हर अमल में अपनाया। सहाबी इल्म हासिल करने की हिरस रखते और कोशिश करते। एक एक हदीस़ को पाने के लिए उस ज़माने में लम्बे लम्बे सफ़र करते जिसमें महीनों का वक़्त लगता और रास्तों की तकलीफ़ देह दुशवारियां सहनी पड़तीं। एक शख़्स मदीना से दमश्क़ *(Syria)* आता कि सहाबी से एक हदीस़ सुन लूं। (सुनन अबी दाऊद 3641, तिर्मिज़ी 2682) नबी ﷺ ख़ुद दूसरी ज़बानों का इल्म रखते और अपने सहाबियों को भी हुक्म देते कि दूसरी ज़बानें सीखें। आप ﷺ ने ज़ैद बिन साबित रज़ि. को हुक्म दिया कि यहूदी ज़बान सीखो और उन्होंने उसको 15 दिन में सीख लिया। (जामेअ़ तिर्मिज़ी 2715) और आज के क़ौम के रहबर और रहनुमा ऐसे कि क़ौम व उम्मत को दूसरी ज़बानें सीखने से ही दूर कर दिया और उनका इल्म ही महदूद *(Limited)* कर दिया।

आख़िरत का दिन होगा और अल्लाह हर इंसान से उसके आमाल यानी कर्मों का हिसाब लेगा। आप ﷺ ने फ़रमाया कि आदम का बेटा (इंसान) क़दम नहीं हिला सकेगा जब तक पांच चीज़ों का जवाब नहीं देगा। अपनी उम्र कैसे बिताई, जवानी कैसे गुज़ारी, माल कहां से कमाया, माल कहां ख़र्च किया और किस तरह अपने इल्म के मुताबिक़ अमल किया। (तिर्मिज़ी 2416) और इब्ने कसीर रह. अपनी तारीख *(History)* की किताब अल बिदाया वन्निहाया में बयान करते हैं कि नबी ﷺ ने अबू दरदा रज़ि. से फ़रमाया कि ए अबू दरदा उस वक़्त तेरा क्या हाल होगा, जब क़यामत के दिन तुझसे सवाल

होगा कि तूने इल्म हासिल किया या नहीं? (तू जानने वालों में से था, या नहीं जानने वालों में से) अगर तू कहेगा कि जानने वालों में से था तो सवाल होगा फिर जो तू जानता था उसके मुताबिक़ क्या अमल किया। और अगर तू कहेगा कि नहीं जानने वालों में से था तो कहा जाएगा कि तेरा जाहिल *(Ignorant)* रहने का क्या उज़्र *(Excuse)* है? इल्म क्यों नहीं हासिल किया।

अल्लाह बहुत दयालु और रहम वाला है। उसने इंसान को पैदा करके और अच्छा बुरा दोनों राहों को समझा कर ही ऐसे ही नहीं छोड़ दिया बल्कि जिंदगी जीने के लिए ज़रूरी और काम आने वाली स़नअ़त, तकनीक और *Knowledge of Technology* भी सिखाई। जैसे कि क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

"तुम्हें और तुम्हारी बनाई हुई चीज़ों को अल्लाह ही ने पैदा किया है।"

(सूरह साफ़्फ़ात 37/96) और नबी ﷺ का फ़रमान है कि "अल्लाह हर क़िस्म का कारीगर है और उसका हुनर पैदा करता है।" (सिलसिला सहीहा 1637)

अल्लाह बेहतरीन पैदा *(Creator)* करने वाला है। उसने ज़माने और हालात की ज़रूरत के मुताबिक़ इंसान को तकनीक का इल्म *(Technology)* दिया और क़िस्म क़िस्म की चीज़ें बनानी सिखाई।

आदम अ़लैहिस्सलाम को ज़मीन पर उतारा तो ज़रूरी जानकारी के साथ। उनको सुई और हथोड़ा जैसी चीज़ें दी गई ताकि अपने जिस्म की हिफ़ाज़त कर सकें और अपनी रोज़ी रोटी कमा सकें। नूह अ़लैहिस्सलाम को उस वक़्त कश्ती की ज़रूरत थी ताकि पूरी दुनिया में अल्लाह के नाफ़रमान लोगों को इस ज़मीन से ख़त्म करके नूह अ़लैहिस्सलाम और उनके साथियों को बचा लिया जाए, तो अल्लाह ने अपनी नज़रों के सामने अपनी हिदायात और निर्देशों के मुताबिक़ कश्ती बनवा दी। दाऊद अ़लैहिस्सलाम को दुश्मन से लड़ते हुए हिफ़ाज़त करने के लिए लोहे का कवच बनाना सिखा दिया। इसी तरह नबी ﷺ ने भी अपनी उम्मत को *Technology* और तकनीकी इल्म हासिल करने के लिए प्रोत्साहित किया। आप ﷺ का फ़रमान है कि "भरपूर ताक़त के साथ उनके मुक़ाबले के लिए ख़ुद को तैयार रखो। आगाह रहो कि ताक़त से

मुराद तीर चलाना है। इसको आपने तीन बार फ़रमाया।'' (जामेअ़ तिर्मिज़ी 3083)

आप ﷺ ने फ़रमाया कि चंद रोज़ में कई मुल्क तुम्हारे हाथों फ़तह होंगे। अल्लाह तुम्हें काफ़ी है। फिर कोई तुममें से तीर चलाना ना छोड़े। (सहीह मुस्लिम, तीर मारने का सवाब) और फ़रमाया कि ''जो कोई तीर मारना सीखे फिर छोड़ दे वो हम में से नहीं हैं या वह गुनाहगार है।'' (सहीह मुस्लिम) और फ़रमाया गया है कि ''अल्लाह तीर की वजह से तीन लोगों को जन्नत में दाख़िल करेगा। एक तो उसे जो उसे बनाने वाला, दूसरा जमा करने वाला और तीसरा उसे चलाने वाला।'' (मुसनद अहमद 17233) अगर कोई मुसलमान अपने भाई को कोई दस्तकारी या तकनीक सिखा दे तो उसे सदके़ का सवाब का वायदा किया गया है। इसी तरह आप ﷺ ने घुड़ सवारी सीखने पर ज़ोर दिया। ये दानों ही उस वक़्त बड़ी ताक़त मानी जाती थी। तीर चलाने या मारने में अरबी शब्द फेंकना *(Shooting, Throw)* इस्तेमाल हुआ। आज के दौर में यह कहना मुनासिब होगा कि *Scince & Technology* का इल्म हासिल करो और *Missile* जैसी *Modern Warforce* को सीखो। इसी में ताक़त और कुव्वत है वरना क़ौम कमज़ोर होकर मग़लूब, पराजित व पसमांदा हो जाएगी।

इल्म दीन और तकनीकी हुनर सीखने और ख़ुद को इसमें ऊंचा मक़ाम हासिल करने के बाद, ख़ुद को और क़ौम को मज़बूत व ताक़तवर बनाने का हुक्म अल्लाह ने अपने क़ुरआन में भी नाज़िल फ़रमाया है। अल्लाह का फ़रमान है:

''तुम उनके मुक़ाबले के लिए अपनी ताक़त और कुव्वत से तैयारी करो....।'' (सूरह अनफ़ाल 8/60) और फ़रमाया गया है कि:

''ऐ मोमिनों अपने बचाव का सामान लेलो....।'' (सूरह निसा 4/71)

सहाबी और सलफ़े सालिहीन ने इस्लाम में इल्म दीन हासिल करना और तकनीक और हुनर को सीखना और ख़ुद व क़ौम को हर लिहाज़ से क़वी और मज़बूत बनाए रखने की ज़रूरत को अच्छी तरह समझा और उसपर अमल किया। वो लोग हक़ीक़त में इस्लाम के सच्चे सिपाही थे जो अल्लाह के

फ़रमान और नबी ﷺ के हर अमल व सुन्नत पर अमल करने के लिए अपनी जान व माल की क़ुर्बानी देते थे। उन्होंने नबी ﷺ की हिदायात के मुताबिक़ अपनी जिंदगी का हर पल बिताया। तभी अल्लाह ने दुनिया की बड़ी बड़ी ताक़तों और मुल्कों को उनके क़दमों में डाल दिया, जिनकी बेशुमार मिसालों से तारीख़ *(History)* के पन्ने भरे पड़े हैं। इतना ही नहीं बल्कि मुल्कों की जीत के अलावा उन्हें उनके कारोबार में इतनी बरकत दी कि चंद सालों में ही लाखों और करोड़ों दीनार व दिरहम के मालिक बन गए और उनके घरों के कोनों में इनके ढेर लगे पड़े रहते।

अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के इन फ़रमानों और हिदायतों के पढ़ने के बाद आप महसूस करेंगे और आपका दिल इस बात पर राज़ी होगा कि इस्लाम एक ऐसा दीन है जिसमें दीन, धर्म और ज़िंदगी के हर पहलू पर खोल खोल कर बयान कर दिया गया। इस्लाम सिर्फ़ दीन का ही नाम नहीं बल्कि तकनीक और हुनर की भी उतनी ही अहमियत रखता है। इस्लाम दीन और दुनिया को एक साथ लेकर चलता है। जिसमें साइंस और टेक्नोलोजी एक अहम किरदार *(Role)* अदा करते हैं। यही वजह रही कि इस्लाम बेशुमार सदियों तक दुनिया की हर तहज़ीब और सभ्यता में आगे रहा। उस दौर में साइंस की तरक़्क़ी शिखर पर थी। मुस्लिम मुल्कों के शहरों में लाइब्रेरी बनाई गई और किताबें लिखी गई ताकि लोग फ़ायदा उठाएं। बड़े बड़े डैम और नहरें बनाई। *Science, Mathematics, Astronomy, Cartography & Navigation* में कामयाबी क़ाबिले ज़िक्र रही। अल ब्रूनी ने दसवीं सदी में ज़मीन का *Radius* 6322.7 *Km* निकाला जो इसकी सहीह वेल्यू 6357 *Km* के बहुत क़रीब था। इदरीसी ने 1154 में *World map* बनाया। कहा जाता है कि मुसलमानों ने अमेरिका को 900 ई. के करीब ही खोज निकाला था।

Astronomy में काफ़ी तरक़्क़ी की। जिससे *Navigation* और नमाज़ के वक़्त मालूम करने में मदद मिलती। बड़ी बड़ी *Observatories* बनाई गई और सूरज व सितारों की *Study* के लिए *Astrolab* क़ायम की। उन्होंने *Trigonometry, Geometry, Arabic Numerals, Decimal*

Fractions और *Algebra* में बड़ी तरक़्क़ी की। *Algebra* तो अरबिक *Al-Jabr* से लिया गया है। *Medicine* और *Surgery* में नई खोज की गई। अस्पताल और *Training Centers* क़ायम किए गए। दसवीं सदी में अल ज़हरावी ने बहुत से *Surgical Instruments* बनाए और उनकी लिखी किताबें यूरोप की *Universities* में सदियों तक पढ़ाई गई। दसवीं सदी में *Hollow Syringe* बनाई गई जिससे आंख के मोतिया का इलाज किया जाता लेकिन अफ़सोस कि आज की मुस्लिम क़ौम की हालत एक सूखे रेगिस्तान की तरह है।

आज के हर मुसलमान को दिल की गहराइयों से ग़ौर फ़िक्र के साथ सोचना पड़ेगा कि क्या उम्मत की इस मग़लूबियत की हालत का ज़िम्मेदार अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के अहकाम और हिदायतों की नाफ़रमानी, इल्म व तकनीक से दूरी, और दुनिया की रीझ ही तो नहीं।

इस्लाम की तालीमात *(Teachings)* मुसलमान को दीन में कामिल और पूरा का पूरा दाखिल होने का तक़ाज़ा करती है। हर शख़्स को चाहिए कि वह इस्लाम को सीखने की कोशिश करे, उसका इल्म और समझ हासिल करे, *Science* और *Technology* में खुद को फिर उस मक़ाम पर लाए जहां वह अपना, अपनी क़ौम और मुल्क की तरक़्क़ी में अहम किरदार अदा कर सके।

मां बाप का आदर व सेवा

अल्लाह का फ़रमान है कि:

"और तेरा रब साफ़ साफ़ हुक्म दे चुका है कि तुम उसके सिवा और किसी की इबादत ना करना। और मां बाप के साथ एहसान करना। अगर तेरी मौजूदगी में उनमें से एक या दानों बुढ़ापे को पंहुच जाएं तो उनके सामने उफ़ तक ना कहना, ना उन्हें डांट डपट करना बल्कि उनके साथ अदब व एहतराम (आदर) से बात चीत करना।" (सूरह बनी इसराईल 17/23)

अल्लाह ने अपने हक़ इबादत के बाद मां बाप का ज़िक्र करके ये साफ़ कर दिया कि दुनिया में मां और बाप से बढ़कर हसन सुलूक और अच्छे व्यवहार का कोई दूसरा हक़दार नहीं। सबसे पहले मां बाप के साथ अच्छा

सलूक करने, नरमी से बर्ताव करने, उनकी आज्ञा पालन करने और उनकी देखभाल करने का हुक्म दिया। इसका कारण भी अल्लाह ने क़ुरआन में फ़रमाया:

"और हमने इंसान को अपने मां बाप के साथ हुसने सुलूक करने का हुक्म दिया है। उसकी मां ने उसे तकलीफ़ झेल कर पेट में रखा और तकलीफ़ बर्दाश्त करके उसे जना (पैदा किया)। उसके हमल (गर्भ) का और उसके दूध छुड़ाने का ज़माना तीस महीने का है....।" (सूरह अहक़ाफ़ 46/15) और दूसरी जगह फ़रमाया गया है कि:

"तू मेरी और अपने मां बाप की शुक्र गुज़ारी कर।" (सूरह लुक़मान 31/14)

मां बाप ही इंसान की पैदाइश का सबब होते हैं। मां अनगिनत तकलीफ़ों को झेलती और बच्चों को पेट में लिए और उसका बोझ लिए पूरे नौ महीने गुज़ारती है। फिर उसे जनने की असहनीय तकलीफ़ को उठाती है मानो दूसरा जन्म लेती है। फिर उसको दूध पिलाती और ये भी लम्बी मुद्दत के लिए। इंसान जब बच्चा होता, ना उसे कोई इल्म होता ना ज्ञान, ना उसे अपना होश होता ना फ़िक्र और ये भी पता नहीं होता उसे क्या खाना है और कैसे पेशाब वग़ैरह करना है। ऐसी हालत में मां बच्चे को बड़े लाड प्यार से, मुहब्बत से, मातृ प्रेम और अपने रहम के साऐ में तकलीफ़ पर तकलीफ़ उठा कर पालती पोसती है। इसे ये होश नहीं कि सर्दी लगी है तो कपड़ा ओढ़ लूं, या गर्मी की तेज़ी है तो अपनी हिफ़ाज़त करूं। पोटी पेशाब का इल्म नहीं कब किया और कहां किया। अगर मां साफ़ ना करे तो सड़ जाए। खाने की तमीज़ नहीं। अगर मां ना खिलाए तो मर जाए। सर्दी में गर्म कपड़े में ना छुपाए तो सिकुड़ जाए। ये मां ही है जिसने सख़्त सर्दी, घनघोर घटा और बारिश की ठण्डी रातों में तुझे ख़ुश्क गर्म कपड़ों में छुपाए रखा और ख़ुद तेरे पेशाब के गीले बिस्तर पर ठिठुरती रही। जिंदगी के हर मोड़ पर हर पल तेरी ख़ुशी और आराम पर अपनी ख़ुशी और आराम न्यौछावर करती रही। ख़ुद भूखी रही, बच्चे को खिलाती रही।

आईशा रज़ि. के पास एक औरत अपनी दो बेटियों को उठाए आई तो

उन्होंने उसे तीन खजूर दे दीं। उसने दानों को एक एक खजूर दी और तीसरी ख़ुद खाने लगी। उन बेटियों ने मां से वो भी मांग ली। उस औरत ने उस खजूर के दो हिस्से किए और ख़ुद खाने की बजाए अपनी बेटियों को दे दिए। आईशा रज़ि. को उस पर बहुत ताज्जुब हुआ और इसका ज़िक्र नबी ﷺ से किया। आप ﷺ ने फ़रमाया उन दो बेटियों के कारण उसके लिए जन्नत, स्वर्ग अनिवार्य कर दी गई। (तरग़ीब व तरहीब 1020)

एक दूसरी हदीस़ में अनस रज़ि. से वर्णित है कि रसूलुल्लाह ﷺ अपने सहाबी के पास से गुज़रे और वहां एक बच्चा रास्ते के बीच में खड़ा था। जब उसकी मां ने चौपायों को आते देखा तो उसे ख़तरा महसूस हुआ कि वह जानवर बच्चे को रौंद डालेंगे। इसलिए वह बेहोशी की हालत में ये कहते हुए भाग पड़ी मेरा बच्चा मेरा बच्चा। और उसने अपना बच्चा उठा लिया। (सिलसिला सहीहा)

ऐसे ही दूसरा क़िस्सा क़ैदी औरत का कि उससे उसका बच्चा बिछड़ गया तो वह तड़प उठी। बेसब्री और बदहवास सी उन क़ैदियों में अपने बच्चे को ढूंढती तलाश करती फिरती। कभी इधर कभी उधर। जैसे ही उसे उसका बच्चा मिला तो सीने से लगाकर चैन और राहत की सांस ली।

इन्ही बेमिसाल एहसानात की वजह से अल्लाह ने मां और बाप का बहुत बड़ा और बहुत ऊंचा मक़ाम रखा है। जैसा कि पहले गुज़र चुकी हदीस़ में बयान फ़रमाया गया है कि ''एक सहाबी ने नबी ﷺ से पूछा कि मेरे हुसने सुलूक (अच्छे व्यवहार) का सबसे ज़्यादा हक़दार कौन है? आप ﷺ ने फ़रमाया तेरी मां। सहाबी ने तीन बार यही पूछा और हर बार आप ﷺ ने यही जवाब दिया कि तेरी मां। चौथी बार यही पूछने पर फ़रमाया तेरा बाप, फिर दूसरे क़रीबी रिश्तेदार। (सुनन अबी दाऊद 5139)

यानी बीवी, बच्चे और दीगर रिश्तेदार का हक़ मां बाप के हक़ के बाद हैं। एक शख़्स ने रसूल ﷺ से पुछा कि कौन सा अमल अफ़ज़ल है? आप ﷺ ने फ़रमाया वक़्त पर नमाज़ पढ़ना और मां बाप के साथ अच्छा सुलूक करना और अल्लाह की राह में जिहाद करना (धर्म युद्ध जो धर्म की रक्षा के लिए किया जाता है) (सहीह बुख़ारी किताब तौहीद) एक दूसरी हदीस़ में

आता है कि एक शख़्स रसूल ﷺ के पास आया और कहा कि या रसूलुल्लाह ﷺ मैं इसलिए आया हूं कि आपके साथ जिहाद करूं। मैं अल्लाह की रज़ामंदी (ख़ुशी) और आख़िरत के सवाब (परलोक में अच्छा बदला) का तालिब हूं (उम्मीदवार हूं) और मैं जिस वक़्त चला तो मेरे मां बाप रो रहे थे। आपने फ़रमाया तू लौट जा और उनको हंसा जैसे तूने उनको रुलाया। (सुनन इब्ने माजा 2782)

जैसा कि अल्लाह का फ़रमान ऊपर लिखा जा चुका कि अपने मां बाप के साथ अच्छा बर्ताव करना और उनको उफ़ तक ना करना। उनकी इज़्ज़त व आदर के साथ ख़िदमत करना। क्योंकि मां बाप की ख़िदमत और सेवा, आदर और नरमी का बर्ताव करने का सवाब अल्लाह की राह में उसका दीन ग़ालिब करने के लिए किए गए जिहाद व धर्म युद्ध से बढ़कर है। नबी ﷺ ने बूढ़े मां बाप की ख़ुशी और उनकी देखभाल करने के लिए उस शख़्स को भी जिहाद की इजाज़त नहीं दी।

मां बाप का मक़ाम, दर्जा और स्थान इंसान के लिए सर्वोपरि है। मां बाप की सेवा और ख़िदमत करके और उनकी दुआएं हासिल करके जो सवाब उसको मिलेगा वह और दूसरे अच्छे अमल व कर्म करके भी हासिल और अर्जित नहीं कर सकता। जैसे कि फ़रमाया गया है कि ''एक शख़्स आया और नबी ﷺ से अर्ज़ किया कि मैं अल्लाह की ख़ुशी और आख़िरत में मिलने वाले सवाब की ख़ातिर आपके साथ जिहाद करना चाहता हूं। आपने फ़रमाया अफ़सोस क्या तेरी मां जिंदा है? उसने कहा जी हां जिंदा है। आप ﷺ ने फ़रमाया लौट जा और अपनी मां की ख़िदमत व सेवा कर। (वह शख़्स दाईं बाईं तरफ़ से आकर यही सवाल करता है और उसे यही जवाब मिलता है) आप ﷺ ने फ़रमाया अफ़सोस उसके पांव (पैरों) के पास रह वहीं जन्नत है। (सुनन इब्ने माजा 2781)

और फ़रमाया कि वालिद (बाप भी) जन्नत का दरमियानी दरवाज़ा है *(Middle Door)* अब तुझे इख़्तियार है कि इस दरवाज़े को ज़ाए *(Waste)* कर दे या इसकी हिफ़ाज़त कर। (सुनन इब्ने माजा 3663)

और फ़रमाया अल्लाह की रज़ामंदी (ख़ुशी) बाप की रज़ामंदी में है और

अल्लाह की नाराज़गी बाप की नाराज़गी में है। (सिलसिला सहीहा 516)

जब तक अल्लाह की नाफ़रमानी ना हो तब तक मां बाप की ख़ुशी और रज़ामंदी सर्वोपरि होना चाहिए और उनकी ख़िदमत करके उन्हें राज़ी और ख़ुश रखना चाहिए। इन सब बातों से मां बाप के मक़ाम और मरतबे *(Rank)* का आप ख़ुद अंदाज़ा लगा लें। अगर उनकी ख़िदमत और सेवा करोगे और उनसे नरमी से आदर के साथ अच्छा सुलूक करोगे तो वह ख़ुश होंगे और परलोक में बेहतरीन बदला यानी जन्नत हासिल करने के हक़दार बन जाओगे। और अगर उनसे बेरुख़ी इख़्तियार करोगे, उनका तिरस्कार करोगे, उनकी मुनासिब ख़िदमत व सेवा नहीं करोगे और उनसे नरमी से बर्ताव नहीं करोगे तो यही उनकी नाराज़गी का कारण बनेगा जो आख़िरत में बुरा बदले के साथ नरक में जाने का कारण बन सकती है। क्योंकि फ़रमा दिया गया कि ''मां बाप की नाफ़रमानी *(Disobediency)* करने वाला जन्नत में दाख़िल नहीं होगा।'' (सिलसिला सहीहा 3099) और ऐसे शख़्स को दुनिया में जल्दी सज़ा मिलेगी। जैसे कि फ़रमाया गया है कि ''मां बाप की नाफ़रमानी की दुनिया में बहुत जल्दी सज़ा देता है।'' (बुख़ारी अदब अल मुफ़रद 591)

यही कारण है कि इस दुनिया में ऐसे भी नेक लोग पैदा हुए जिनकी मिसालें *(Examples)* अल्लाह ने दूसरे और आने वाले लोगों की नसीहत के लिए छोड़ दीं। जैसे कि श्रवण का अपने बूढ़े मां बाप की ख़्वाहिश और इच्छा को पूरा करने के लिए उनको अपने कंधे पर उठा कर दूर दराज़ के इलाक़ों में लम्बा सफ़र पैदल तय करके तीर्थ स्थानों का दर्शन कराया। और इसी तरह एक शख़्स ने यमन से अपनी मां को कंधे पर बैठा कर एक लम्बा सफ़र तय किया और मक्का पहुंच कर उन्हें काबा का तवाफ़ कराया। वह शख़्स कहता जाता कि मैं अपनी मां के लिए फ़रमांबरदार और आज्ञाकारी ऊंट हूं। वो शख़्स सहाबी से पूछता है कि (ऐसा करके) क्या मैंने अपनी मां के एहसान का बदला चुका दिया? सहाबी ने जवाब दिया कि नहीं, बल्कि एक सांस का बदला भी नहीं चुकाया। (बुख़ारी अदब अल मुफ़रद 11)

दूसरी तरफ़ मां की नाफ़रमानी पर एक शख़्स को मिली सज़ा पर ग़ौर कीजिए। अव्वाम बिन हौशब रह. बयान करते हैं कि मैं एक मुहल्ले में पहुंचा।

जिसके एक तरफ़ क़ब्रस्तान था। अ़स्र की नमाज़ (दोपहर बाद) के बाद एक क़ब्र फटी और उसमें से एक शख़्स निकला जिसका सिर गधे जैसा और जिस्म इंसान जैसा था। उसने तीन बार गधे की आवाज़ निकाली और फिर क़ब्र बंद हो गई। वहां एक बुढ़िया रस्सी बना रही थी जो उस क़ब्र से निकलने वाले की मां थी। मैंने पूछा इसका क़िस्सा क्या है? एक औरत ने बताया कि यह आदमी शराब का आदी था। उसकी मां उसे समझाती कि मेरे बेटे अल्लाह से डर, आख़िर तू कब तक ऐसे ही शराब पीता रहेगा। वो आगे से कहता कि तू गधे की तरह आवाज़ निकालती है। ये शराबी अ़स्र के वक़्त मर गया। वो अब हर रोज़ अस्र के बाद क़ब्र फटती है और ये तीन बार गधे की तरह आवाज़ निकालता है फिर क़ब्र बंद हो जाती है। (सहीह तरग़ीब व तरहीब 1263)

अब देखिए उसने मां का कहा ना माना और बद ज़बान से कहा कि तू गधे की तरह आवाज़ निकालती है। इस की वजह से अल्लाह ने उसे अज़ाब में डाल दिया। इसलिए मां बाप को उफ़ तक नहीं कहना चाहिए उनकी ख़िदमत और आदर ना करना तो बड़ा गुनाह होगा। मां बाप को ख़ुश रखने की हर वक़्त कोशिश करते रहना चाहिए क्योंकि मां बाप की दुआ या बद दुआ क़ुबूल होती है। उनको सताने से अगर उन्होंने बद दुआ दे दी तो फिर इंसान दुनिया और आख़िरत में कामयाब नहीं हो सकता।

समाज तेज़ी से करवट ले रहा है। सामाजिक ढांचा भी बदल रहा है। *Nuclear Family* का दौर है। जिसमें नौजवान पूत की शादी होने के कुछ दिनों बाद ही अलग रहने की मांग ज़ोर पकड़ने लगती है। दूसरे रोज़गार की वजह से औलाद मां बाप से दूर दराज़ के शहरों में बस जाते हैं। अकसर देखा गया है कि बहू और सास के सम्बंध मधुर नहीं रहते और इसमें बहू की मां की अहम भूमिका रहती है। वह चाहती है कि मेरी बेटी घर की मालकिन और राजकुमारी बनकर रहे जबकि उसके ख़ुद के घर की बहू उसकी नौकरानी बन कर रहे। वह अपनी लड़की को उसके शौहर के मां बाप से दूर करने में लगी रहती है। इस तरह घरों में बहू के सास ससुर को वह आदर सम्मान नहीं मिल पाता जो कि एक आदमी या औरत के मां बाप को उनसे मिलना चाहिए। बहुत से घरो में तो मां बाप या सास ससुर को वृध आश्रमों *(Old age shelter)* में

रहने पर मजबूर होना पड़ता है। यह समाज में आम होता जा रहा है चाहे कोई मुल्ला हो या पंडित, चाहे ज्ञानी हो या आलिम या अरब हो या ग़ैर अरब, कम पढ़ा लिखा हो या ज़्यादा, सब इससे मुतास्सिर *(Affected)* हो रहे हैं। बल्कि जितना ज़्यादा पढ़ा लिखा उतना ही ज़्यादा इस बुराई में फंसता जा रहा है। दूसरे आज की लड़की ख़ुद सास ससुर की ख़िदमत और खाना पीना करने को बोझ समझती है और नहीं करना चाहती। वह कितनी ही ज्ञान या इल्म वाली हो या पढ़ी लिखी । उसे यह एहसास नहीं कि कल मैं भी बूढ़ी हो जाऊंगी तो मेरे साथ क्या सुलूक होगा और ना ही अल्लाह का डर दिल में रखती है।

औलाद की परवरिश

दुनिया में इंसान के लिए उसकी औलाद एक क़ीमती और बहुमूल्य निअ़मत *(Bounty)* है। वह उसकी आरज़ू और तड़प रखता है। और अपने रब से दुआ करता रहता है कि उसे नेक औलाद अता करे। जैसे कि ज़करिया अ़लैहिस्सलाम का ज़िक्र क़ुरआन में बयान हुआ है कि:

''और ज़करिया अ़लैहिस्सलाम को याद करो जब उसने अपने रब से दुआ की कि ऐ मेरे रब! मुझे तन्हा न छोड़, तू सबसे बेहतर वारिस है।'' (सूरह अम्बिया 21/89)

एक नेक और अपने रब का डर रखने वाला इंसान औलाद हासिल होने के बाद, उसको भी नेक स्वालेह बनाने की कोशिश में जुट जाता है और अपने रब से भी यही दुआएं उसके दिल की गहराइयों से निकलने लगती हैं जैसा कि फ़रमाया गया कि:

''और ये दुआ करते हैं कि ऐ हमारे रब! तू हमें हमारी बीवियों और औलाद से आंखों की ठण्डक अता फ़रमा और हमें परहेज़गारों का पेशवा (Leader) बना।'' (सूरह फ़ुरक़ान 25/74)

यानी ऐ हमारे रब! मेरी औलाद को ऐसा इल्म अता कर और उन्हें ऐसे अमल (कर्म) करने की तौफ़ीक़ दे जो तुझे पसंद हो। और जिनसे तू हमारे दिलों में सुकून और ख़ुशियां पैदा कर और हमारी आंखें उनकी कामयाबी पर ठण्डक और राहत महसूस करें। हर नेक मां बाप अपनी औलाद को नेक बनाने

की तमन्ना करते हैं, उसी की कोशिश करते हैं और उसके नेक होने पर ख़ुशी महसूस करते हैं। और अपनी औलाद को नेक अमल करने की तरबियत *(Teachings)* करते रहते हैं जैसे कि लुक़मान अ़लैहिस्सलाम ने किया।

"ऐ मेरे प्यारे बेटे तू नमाज़ क़ायम रखना, अच्छे कामों की नसीहत (Encourage) करते रहना, बुरे कामों से मना किया करना, और अगर तुम पर मुसीबत आ जाए तो सब्र (Patience) करना, ये बड़े ताकीदी कामों (हिम्मत के काम) में से है। लोगों के सामने अपने गाल ना फैला (गुरूर ना करना) और ज़मीन पर इतरा कर ना चल। किसी तकब्बुर करने वाले शेख़ी करने वाले को (Arrogant Boaster) अल्लाह पसंद नहीं करता। अपनी रफ़्तार में मियाना रवी इख़्तियार कर (Be Moderate) और अपनी आवाज़ पस्त (नीची) रख। यक़ीनन आवाज़ों में सब से बदतर आवाज़ गधों की आवाज़ है।" (सूरह लुक़मान 31/17-19)

क्या बेहतरीन नसीहत और अनमोल मोती हैं इसकी हर एक बात। यह है एक नेक स्वालेह बाप की नसीहत अपनी औलाद को। जब औलाद इनके मुताबिक़ अल्लाह के फ़रमानों *(Ruling)* की क़द्र करेगी और उन पर अमल करेगी तो नेक मां बाप की आंखों को ठण्डक और दिल को सुकून नसीब होगा। और ऐसे लोगों से बना मुआ़शरा *(Society)* एक बेहतरीन समाज होगा। याद रहे कि हर बाप अपने व परिवार का निगहबान है और उससे सवाल होगा कि उसने अपने मातहत लोगों (बीवी बच्चों) को क्या तालीम दी, क्या अदब सिखाया, कैसे उनकी देखरेख की और कैसे परवरिश की। इसी तरह मर्द की ग़ैर मौजूदगी में बीवी को इन ज़िम्मेदारियों का निभाव करना होता है। (देखिए सहीह मुस्लिम 4724)

मां पाप पर यह फ़र्ज़ हो जाता है कि वह अपने बच्चों को इस्लाम के बुनियादी अहकाम *(basic ruling)* और दुनिया में इज़्ज़त के साथ रहने की दूसरी बातें भी सिखाएं। सबसे पहले मां बाप को चाहिए कि वह बच्चों को अपने रब का हक़ अदा करना सिखाएं। ख़ालिस उसी की इबादत करने और शिर्क ना करने की तालीम दें। अपने बच्चों को हर उस गुनाह और बुराई से बचाएं जो उन्हें जहन्नम की आग की तरफ़ बुलाए। जैसे कि फ़रमाया गया है:

"ऐ ईमान वालों! तुम अपने आप को और अपने घर वालों को उस आग से बचाओ, जिसका ईंधन इंसान है।" (सूरह तहरीम 66/6)

बच्चों को अच्छी तरह समझाइए कि इस्लाम में क्या हराम *(Forbidden)* और नापसंदीदा है ताकि वह हर क़िस्म के गुनाह, पाप और बुराइयों से अपने आप को बचा सकें। अपने बच्चों को क़ाबिल तारीफ़ बातें और अच्छा अदब *(Manners)* सिखाएं। समाज में अपने रिश्तों, दोस्तों, पड़ोसियों और दूसरे लोगों से अच्छी तरह मेलजोल बनाए रखें। बच्चों पर रहम का साया रखें मगर साथ ही अदब और दीन का इल्म सिखाने में नरमी और लापरवाही ना बरतें। इस मामले में उनसे अगर सख़्ती करनी पड़े तो इससे गुरेज़ ना करें। जैसा कि सलफ़ का कहना है कि छड़ी को ऐसी जगह टांगे रखो ताकि वह दिखाई देती रहे। या उन पर छड़ी का इस्तेमाल करना पड़े तो उसको भी करना बेहतर है ताकि बच्चे इल्म और अच्छी बातें सीख सकें। (अदब अल मुफ़रद 18, 229)

बाप पर उनका ख़र्च उठाना वाजिब *(Obligatory)* है। नबी ﷺ का फ़रमान है कि "आदमी को यही गुनाह काफ़ी है कि जिन पर ख़र्च करना उस पर वाजिब है, उसे नज़रअंदाज़ करे या पूरा ना करे।" (देखिए सुनन अबी दाऊद 1692)

बच्चों में अ़दल और इंसाफ़ का मामला रखना ज़रूरी है। नबी ﷺ का फ़रमान है कि "अल्लाह से डरो, और अपने बच्चों के साथ अदल करो।" एक दूसरी हदीस़ में नोमान रज़ि. से रिवायत है कि "मेरे बाप ने मुझे कुछ हिबा *(Gift)* किया और नबी ﷺ के पास ले गए आपको गवाह बनाने के लिए। आप ﷺ ने पूछा, क्या तुमने सब लड़कों को ऐसा ही दिया है? मेरा बाप बोला नहीं। आप ﷺ ने फ़रमाया क्या तू नहीं चाहता कि तेरे सब लड़के नेक सुलूक करें जैसे तू इस लड़के को चाहता है? (सहीह मुस्लिम, हिबा)

लड़के को लड़की पर या लड़की को लड़के पर या किसी एक औलाद को दूसरों पर तरजीह *(Priority)* देना जायज़ नहीं। अगर आप गुनाह से बचना चाहते हों और यह पसंद करते हो कि सब औलाद तुम्हारी बराबर इ़ज़्ज़त करे तो सब के साथ अ़दल व इंसाफ़ के साथ बराबरी का सुलूक करें। उनकी

परवरिश *(Upbringing)*, खाना पीना व रहन सहन, गिफ़्ट देने और शादी का इंतज़ाम करने में एक सा सुलूक करें।

माल दौलत और जायदाद की तक़सीम मीरास़ *(Inferitance)* के क़ानून के मुताबिक़ होनी चाहिए। किसी एक औलाद को तरजीह देना और दूसरों का हक़ मारकर ज़ुल्म करना कबीरा (बड़ा) गुनाह है और इसमें जहन्नम के अज़ाब की ख़बर दी गई है। आजकल लड़कियों को इससे महरूम *(Neglect)* करना बड़े गुनाह का काम है।

बच्चों की तालीम *(Education)*, शादी का ख़र्च, बीमारी का इलाज, या क़र्ज़दार औलाद की मदद और ज़रूरत व वक़्त के मुताबिक़ किसी एक पर ज़्यादा ख़र्च किया जा सकता है। याद रहे कि यही औलाद इंसान की दुश्मन बन जाती है। यानी अल्लाह की नाराज़गी ख़रीद लेते हैं। जब मां बाप अपनी औलाद की दीन के मुताबिक़ सहीह तरबियत नहीं करते और बच्चे अपने रब के फ़रमानों के मुताबिक़ गुनाहों और बुराइयों से बचकर जिंदगी बसर नहीं करते। जैसे कि अल्लाह का फ़रमान है किः

"ऐ ईमान वालो। तुम्हारी बाज़ (Few) बीवियां और बाज़ बच्चे तुम्हारे दुश्मन हैं.... ।" (सूरह तग़ावुन 64/14)

मां बाप को चाहिए कि वह अपने बच्चों को ऐसी तालीम हासिल करने में मदद करें जिससे वह इज़्ज़त के साथ ज़िंदगी बसर करने के लिए हलाल और नेक तरीक़े से माल दौलत कमा सकें और गरीबी व मोहताजी से बच सकें। जैसा कि नबी करीम ﷺ का फ़रमान है कि "अगर तू अपने वारिसों को मालदार छोड़ जाए तो बेहतर है इससे कि तू उनको मोहताज छोड़ जाए, लोगों के सामने हाथ फैलाते फिरें।" (सहीह मुस्लिम, वसीयत)

बीवी के हुक़ूक़

माँ बाप के मक़ाम के बाद सबसे अहम रिश्ता बीवी और शौहर का होता है। अल्लाह सुबहानहु व तआ़ला ने बीवी के बारे में अपनी किताब अलक़ुरान की कई आयात में अहम अहकाम *(Ruling)* और नसीहतें अपने बंदों के लिए बयान फ़रमाई हैं। ये बीवी ही है जिसके साथ इंसान अपनी ज़िंदगी का

सबसे ज़्यादा वक़्त गुज़ारता है। उसी के साथ ये इंसान अपने नस्ब और ख़ानदान की नई नई शाख़ाएँ पैदा करके उसे आगे बढ़ाता है। यानी जो इंसान को दुनियां की बेहतरीन निअ़मत देने में बराबर का किरदार *(Role)* अदा करती है, जो उसके दुनियां की ज़ीनत और उसकी आँखों की ठंडक होती है। और जो इंसान के लिए उन्सियत (मौहब्बत व सुकून) का ज़रिया होती है। अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है–

''और उसी की निशानियों में से है कि तुम्हारी ही जिंस (नस्ल) से बीवियाँ पैदा कीं, ताकि तुम आराम पाओ उसने तुम्हारे दरमियान मुहब्बत और हमदर्दी क़ायम कर दी। यक़ीनन ग़ौर फ़िक्र करने वालों के लिए इसमें बहुत सी निशानियाँ हैं।'' (सूरा रूम, 30/21)

ये अल्लाह तआ़ला की कमाल रहमत है कि उसने इंसानों की बीवियाँ इंसान ही बनाई। मर्द बीवी से और बीवी मर्द से बेपनाह मुहब्बत करती है, ऐसी मुहब्बत दुनियां में और किसी भी दो शख़्सों के बीच नहीं होती। शौहर बीवी को हर मुमकिन सुहूलियतें पहुँचाता है जो उसके इख़्तियार में हों और अल्लाह ने उसको इनका मुकल्लिफ़ (ज़िम्मेदार) बनाया हो और ऐसी ही बीवी अपने शौहर को, जो उसकी क़ुदरत और दायरे *(Capacity)* में हो।

यहाँ एक बात का ज़िक्र करना निहायत ज़रूरी और अहम है। वो ये है कि इंसान को ये सुकून और आपसी मुहब्बत उन्हीं जोड़ों से हासिल होती है जो शरियत के कानून के मुताबिक़ आपसी निकाह से कायम होते हैं और इस्लाम उन्हीं को जोड़ा करार देता है। ग़ैर क़ानूनी जोड़ों को वो जोड़ा ही तसलीम नहीं करता बल्कि उन्हें ज़ानी और बदकार करार देता है। उनके लिए सख़्त सज़ा का इस्लामी निज़ाम क़ायम किया गया है। आजकल मग़रिबी तहज़ीब (पश्चिम की संस्कृति) की मज़मूम (घृणित) कोशिशें हो रही हैं जो निकाह को ग़ैर ज़रूरी क़रार देते हुए बदकार औरत मर्द को जोड़ा या बिना निकाह की औरत को पैदा हुए बच्चे की माँ या बिना निकाह में आए किसी ग़ैर औरत के हमल (पेट) को इस्तेमाल करके पैदा होने वाले बच्चे की माँ या माँ बाप तसलीम किया जाता है। और उनके लिए सज़ा के बजाय वो हुक़ूक़ मनवाए जा रहे हैं, जो एक क़ानूनी जोड़े को हासिल होते हैं।

बीवी के मक़ाम और मर्द की ज़िंदगी में उसके अहम किरदार को देखते हुए अल्लाह तआ़ला ने उनके ऐसे हुक़ूक़ क़ायम किए हैं जिनसे उनके बीच मुहब्बत क़ायम रहे। दीने इस्लाम की तालीमात पर क़ायम रहते हुए अपना घर पुर सकून तरह से चलाएँ, अपनी औलाद और दिगर क़रीबी रिश्तों और मुआशरे (समाज) में हुसने सुलूक और उम्दा अख़लाक़ का मुज़ाहरा (पालन) करते हुए अपनी औलाद और मातहत लोगों की अच्छी तरबियत *(Reaching)* करें जो मुआशरे की भलाई के लिए मुफ़ीद *(Beneficial)* हो और आख़िरत की कामयाबी व फलाह के मुस्तहिक़ *(Deserving)* बनें। अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है कि—

"उनके साथ अच्छी तरह रहो सहो। अगर वो तुम को नापसंद हों तो मुमकिन है कि तुम जिसे नापसंद करो और अल्लाह तआ़ला उसमें बहुत सी भलाई पैदा कर दे।" (सूरा निसा 4/19)

ये बीवी के साथ हुसने सुलूक का वो हुक्म है जिसकी क़ुरआन में बड़ी ताकीद की गई है और अहादीस़ में भी। नबी ﷺ की एक हदीस़ का मफ़हूम इस तरह बयान किया गया है कि "मोमीन मर्द (शौहर) मोमीना औरत (बीवी) से बुग़ज़ ना रखे। अगर उसकी एक आदत उसे नापसंद है तो उसकी दूसरी आदत पसंद भी हो सकती है" इसका मतलब ये हुआ कि बेहयायी के अलावा बीवी में अगर कोई कोताही (बुराई) हो जिसकी वजह से शौहर उसे नापसंद करता हो तो उसे चाहिए कि जल्दबाज़ी का मुज़ाहरा करते हुए उससे बदसुलूकी या जुदाई इख़्तियार ना करे बल्कि सब्र और बर्दाश्त से काम ले और अपने घर को बर्बाद होने से बचाए। हो सकता है अल्लाह तआ़ला उसमें उसके लिए ख़ैर कसीर पैदा फ़रमा दे या नेक औलाद दे दे या उसके कारोबार और रिज़्क में बरकत डाल दे।

अफ़सोस है कि आज का मुसलमान ज़रा ज़रा सी बातों पर और अक्सर बीवी के बेकसूर होने के बावजूद जाहिलियत का बर्ताव करते हुए उसको बेजुबान जानवर की तरह मारने पीटने और ज़लील करने लग जाता है जिसके बुरे असरात उसके बच्चों में भी पनप कर ज़ाहिर होते हैं। और कई बार उससे जल्दबाज़ी में जुदाई भी इख़्तियार कर लेता है। फिर बाद में पछतावा करता है

और कुछ लोग तो लानत भरे मुनकरात से भरे दूसरे आमाल में भी मुलव्विस (शामिल) हो जाते हैं।

ये एक अहम हक़ है जो अल्लाह ने बीवी के बारे में ख़ुद बयान फ़रमा दिया कि उनके साथ हुसने सुलूक करो और अ़दल के साथ मुहब्बत से रहो। बीवी के दिगर हुक़ूक़ को बयान करने से पहले ये देख लें कि बीवी का इंतिख़ाब करते वक़्त किस चीज़ को तरजीह *(Priority)* देनी चाहिए जिसका हुक्म रसूल ﷺ ने अपनी उम्मत को दिया है।

अबू हुरैरा रज़ि. से मरवी है कि रसूल ﷺ ने फ़रमाया, औरतों से चार ख़ुसूसियतों की वजह से निकाह किया जाता है। उसके माल, हस्ब व नस्ब, हुस्न व जमाल और दीन की वजह से। बस तेरे हाथ ख़ाक आलूदा हों तुम दीनदार औरत को तरजीह दो। (सुनन अबी दाऊद, 2047, सहीह)

और एक हदीस़ में फ़रमाया गया है कि जब तुम्हारे पास वो शख़्स (रिश्ता) आए जिसके अख़लाक़ और दीन को तुम पसंद करते हो तो उससे निकाह कर दो, अगर ऐसा ना करोगे तो मुल्क में फ़साद फैलेगा और बड़ी ख़राबी होगी। (सुनन इब्न माजा 1967, सहीह)

ये हुक्म नबी ﷺ अपने असहाब से फ़रमा रहे हैं कि अगर कोई ऐसा रिश्ता आए जिसके अख़लाक़ और दीन को तुम पसंद करते हो यानी उसका अख़लाक़ हसन हो और उसका दीन भी इस्लाम हो, तभी तो सहाबी उस दीन को पसंद करेंगे क्योंकि उनसे ये तसव्वुर ही नहीं किया जा सकता था कि वो आज कल के मुसलमानों की तरह मुख़्तलिफ़ दीन और तरीक़ा जिंदगी इख़्तियार कर लेंगे जिनके उसूल और मयार ही कुछ ऐसा होता जा रहा है जो इस्लाम से दूरी का सबब बन रहा है। उनके उस्वतुन हसना (बेहतरीन नमूना) तो रसूल ﷺ और उनकी पाक शरियत थी जिसको उन्होंने पूरी तरह मुकम्मल अपनी जिंदगी में उतार लिया था और वो चलते फिरते इस्लाम के नुमायंदे बन गए थे। आज के मुसलमानों का एक हिस्सा और ख़ासतौर पर *Convent* या *Public Schools* में तालीम पाने वाले अगर रिश्ता पसंद करेंगे तो ऐसा जिसकी चमड़ी गोरी चिट्टी हो, पोशाक जींस टॉप की तरह जिसमें ऊपर और नीचे से जिस्म का ज़्यादातर हिस्सा नुमायां हो, अलिफ़, बा ना जानती हो मगर

ABCD से बने लफ्ज़ों और Sentences को बोलने में माहिर हो और चाल व हाव-भाव बूट हैट के साथ ऐसे कि देखते ही क़ायल हो जाए तो बस वाह वाह और पूरी उम्मीदें पूरी हो गईं अगर फ़क़ीर की झोली भी भर दी गई हो। आज मुआशरे में दुल्हा की क़ीमत ऐसे लगाई जाती है जैसे बाजार में जानवर को बेचा जाता है। माल दौलत के भूके इंसानों में ये हैवानियत नज़र आती है। जो सरासर इस्लाम के ख़िलाफ़ है।

बीवी का हक़ है कि उसके मेहर में अपने दोनों की हैसियत का ख़्याल रखते हुए मुनासिब सी रकम तय की जाए और फिर तयशुदा रक़म उसको अदा कर दी जाए। अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है कि—

''औरतों को उनके मेहर राज़ी खुशी दे दो।'' (सूरा निसा, 4/4) *''और जिनसे तुम फ़ायदा उठाओ उन्हें उनका मुक़र्रर किया हुआ मेहर दे दो।''* (सूरा निसा 4/24)

आईशा रज़ि॰ ने कहा यतीम लड़की अपने वली की परवरिश में हो वो उसकी ख़ूबसूरती और मालदारी देखकर उसको निकाह में लाना चाहे मगर उस मेहर से कम पर जो वैसी लड़कियों का होना चाहिए तो ऐसी हालत में उसको निकाह करना मना हुआ जब तक पूरा मेहर इंसाफ़ के साथ मुक़र्रर ना करे। (सहीह बुख़ारी, किताब वसाया)

अब सोचिए क्या हमारे मुस्लिम मुआशरे में उस लड़की की हैसियत के मुताबिक़ मेहर मुक़र्रर होता है। दहेज में तो लाखों रुपयों का सामान हड़पने की कोशिश और मेहर के नाम पर चंद तोला चाँदी। क्या यह अ़दल और इंसाफ़ है? क्या इससे बीवी के हुकूक़ की अदायगी हो रही है? आज तुम जो कर रहे कल तुम्हारी बहन बेटी के साथ यही सुलूक किया जाएगा। ये ऐसा वायरस है जो किसी को नहीं बख़्शेगा।

अबू हुरैरा रज़ि॰ से मरवी है कि रसूल ﷺ ने फ़रमाया जिस श़ख़्स ने हक़ महर पर किसी औरत से इस इरादे से निकाह किया कि वो हक़ महर अदा नहीं करेगा तो वो ज़ानी (बदकार) होगा (तरग़ीब व तरहीब, 941 सहीह)

और आईशा रज़ि॰ से मरवी है कि रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि इंसान जिस चीज़ के ज़रिए किसी औरत की शर्मगाह को अपने लिए हलाल करता है

मसलन महर या और कोई चीज़ तो वो उस औरत की मिल्कियत में होता है। (मुसनद अहमद, शाकिर, सहीह 24790)

सलफ़ उम्मत के अक़्वाल हैं कि महर की अदायगी मर्द को अपनी बीवी से हमबिस्तर होने से पहले अदा करना चाहिए यानी ये मुस्तहब है। हुसने सुलूक, अ़द्ल और महर को इंसाफ़ व अदब के साथ मुक़र्रर करना और उसकी अदायगी के साथ-साथ बीवी के जो हक़ उसके शौहर पर आते हैं उनमें बीवी से हमबिस्तर होना, उसका दस्तूर और अपनी इस्तिताअ़त के मुताबिक़ ख़र्च उठाना, उसको अपने जैसा खाना लिबास मुहैया कराना और उसके ठहरने के लिए मुनासिब घर का इंतिज़ाम करना आता है। इनमें बीवी के हुक़ूक़ उसकी ससुराल के हुक़ूक़ से सबक़त लेते हैं। जैसा कि कुछ सलफ़े उम्मत का क़ौल है। ये सब शौहर पर वाजिब हैं। अल्लाह का फ़रमान है:

''*हाँ उन्हें इस माल से खिलाओ, पिलाओ, पहनाओ और उढ़ाओ और उन्हें माकूलियत से नरम बात कहो।*'' (सूरा निसा 4/5)

इमाम बुख़ारी रह. अपनी सहीह, में किताब नफ़क़ात (ख़र्च) में बाब लाए हैं कि अपनी बीवी बच्चों को ख़र्च देना वाजिब है जिसमें अबू हुरैरा रज़ि. से मरवी हदीस़ बयान करते हैं रसूल ﷺ ने फ़रमाया सदक़ा वो अफ़ज़ल है जिसको देकर सदक़ा देने वाला मालदार रहे। ऊपर वाला हाथ नीचे वाले हाथ से बेहतर है। और पहले उन लोगों का ख़र्च दे जिसका तू निगहबान है। बीवी कहती है मुझे ख़र्च दे नहीं तो तलाक़ दे दे। गुलाम कहता है मुझे रोटी दो मुझसे काम कराओ, बेटा कहता है मुझे खाने को दो तुम मुझे किस पर छोड़े जाते हो। (सहीह बुख़ारी, किताब नफ़क़ात)

आईशा रज़ि. से रिवायत है कि हिन्दा बिन्त अबि सूफ़यान रसूल ﷺ के पास आई और बोली अबू सूफ़यान एक कंजूस आदमी है। ना मुझे ख़र्च देता है ना मेरी औलाद को। क्या मैं उसके माल में से ले लूं? बग़ैर उसकी इजाज़त के। आपने फ़रमाया ले ले जिस क़द्र तुझको और तेरे बच्चे को काफ़ी हो। (सुनन निसाई, 5425 सहीह)

शौहर का अपनी बीवी से हमबिस्तर होना भी बीवी का एक अहम हक़ है जो उस पर वाजिब है। इससे औरत की नफ़सानी ख़्वाहिश और ज़रूरियात ही

की तकमील नहीं होती बल्कि मुआशरे को बदकारी के डर और शर से महफ़ूज़ रखने में भी कारगर होती है। और सबसे अहम बात ये है कि इससे नसब और ख़ानदान का सिलसिला जारी रहता है, जो आँखों की ठण्डक और दुनिया की ज़ीनत का सबब बनता है और रोज़े क़यामत नबी ﷺ अपनी उम्मत की कसीर तादाद पर फ़ख़्र करेंगे। इसकी इत्तबा और फ़रमांबरदारी को भी मर्द पूरा करता है।

इब्ने उमर रज़ि. से रिवायत है कि मेरे बाप ने मेरा निकाह एक ऊँचे ख़ानदान की औरत से कर दिया। तो वो (उमर रज़ि.) उस औरत के पास आते और उसके ख़ाविन्द (इब्ने उमर रज़ि.) का हाल पूछते। वो बोली बहुत अच्छा आदमी है आज तक हमारे बिछौने को नहीं रौंदा और हमारे पहलू को नहीं ढूंढा जब से हम इसके पास आए हैं। मेरे बाप ने इसका ज़िक्र रसूल ﷺ से किया। आप ने फ़रमाया उसको मेरे पास लेकर आओ। मैं अपने बाप के साथ रसूल ﷺ के पास गया। आपने फ़रमाया तू किस तरह रोज़ा रखता है? मैंने कहा हर रोज़। आपने फ़रमाया हर हफ़्ते में तीन ऱोजे रखा कर। मैंने कहा मुझे इससे ज़्यादा ताक़त है। आपने फ़रमाया दो दिन रोज़े रख और एक दिन इफ़्तार कर। मैंने कहा मुझे इससे ज़्यादा ताकत है। आपने फ़रमाया सब रोज़ों से अफ़ज़ल दाऊद अलै. के रोज़े हैं। एक दिन रोज़ा रख और एक दिन इफ़्तार कर। (सुनन निसाई 2393, सहीह)

यानी एक दिन रोज़ा रख और एक दिन नहीं और अपनी बीवी के हक़ की अदायगी कर। उसका भी शौहर पर हक़ वाजिब है जैसा दूसरी अहादीस़ से भी मालूम होता है।

मुआ़विया अल क़ुशैरी रज़ि. ने अ़र्ज़ किया या रसूलुल्लाह ﷺ बीवी के शौहर पर क्या हुक़ूक़ है? आपने फ़रमाया, जब तुम खाओ तो उसे भी खिलाओ, और जब पहनो तो उसे भी पहनाओ, ना उसके चेहरे पर मारो ना उसे बुरा भला कहो। और घर के सिवा उसे अलैहदा मत करो। (सुनन अबी दाऊद, 2142 सहीह)

इस हदीस़ से बीवी को अपने जैसा खिलाना, पहनाना के साथ-साथ इससे भी मना कर दिया गया है कि उसे गाली दी जाए, बुरा भला कहा जाए, ज़लील

किया जाए, मुंह पर मारा जाए या उसके साथ मारपीट की जाए। अगर किन्हीं वाजिब और शरअ़ी वुजूहात की बिना पर नाराज़गी या डराना धमकाना या नसीहत देना मुराद हो तो हल्की मार से तजावुज़ नहीं करना चाहिए और हर हालत में उसको घर से नहीं निकालना चाहिए बल्कि, उसका बिस्तर अलग कर सकते हैं। अगर बात ज़्यादा ख़तरनाक हालात इख़्तियार कर चुकी हो तो तब शरीअ़त के मुताबिक़ दूसरे अक़दाम और तरीक़े इख़्तियार करने चाहिएं।

मिक़दाम बिन मअ़दी करब रज़ि. बयान करते हैं कि रसूल ﷺ लोगों में खड़े हुए। अल्लाह तआ़ला की हम्द ओ सना बयान की फिर फ़रमाया, अल्लाह तआ़ला तुम्हें औरतों से हुसने सुलूक करने की वसीयत करता है। क्योंकि वो तुम्हारी माएँ, बेटियाँ और ख़ालाएँ हैं। (देखो) अहले किताब का आदमी कम उम्र और फ़क़ीर औरत से शादी करता है। फिर उनमें से कोई दूसरे से बेरगबती *(Ignore)* नहीं करता हत्ता के वो दोनों उम्र रसीदा होकर मर जाते हैं। (सिलसिला सहिहा, 2871)

इस हदीस़ में औरतों के साथ हमदर्दी और ख़ैरख़्वाही करने का हुक्म दिया गया है। हर औरत माँ, बहन, बीवी, बेटी, ख़ाला और फूफी जैसे मुक़द्दस रिश्तों में ढलती है। अगर एक आदमी अपनी बीवी के साथ अच्छा सुलूक नहीं करता तो उसे सोचना चाहिए कि ये भी किसी की बेटी बहन है। ग़ौर किया जाए कि उस आदमी की बहन बेटी भी किसी की बीवी बनेगी तो वो उनके बारे में कैसा सुलूक पसंद करता है।

इस हदीस़ में अहले किताब का ज़िक्र एक अच्छी मिसाल की तरह किया गया है। भले ही उनकी शरियत मंसूख हो गई और बदल दी गई। मगर इस मामले में ये अब भी दूसरी क़ौमों से बेहतर हैं। देखने में आता है कि वो एक ही बीवी के साथ अच्छी तरह जिंदगी भर निभाव करते हैं और अकसर उनमें गाली व बदसुलूकी और मारपीट के मामलात कम ही नज़र आते हैं भले ही दिगर वुजूहात की वजह से तलाक़ की तादाद काफ़ी है।

शौहर अपनी बीवी के लिए वक़्त मख़सूस करे जिसकी वजह से उसे मुहब्बत हमदर्दी और अच्छा रहन-सहन मुयस्सर आए ख़ासतौर पर जब वो घर में अकेली हो या उसके पास सिर्फ बच्चे हों। रसूल ﷺ का फ़रमान है कि

"तुममें से बेहतरीन वो शख़्स है जिसका अपनी बीवी से सुलूक अच्छा हो। और मैं तुम्हारी निसबत अपनी बीवियों से अच्छा सुलूक करता हूँ।" (जामेअ़ तिरमीज़ी 3895, सहीह)

शौहर अपनी बीवी से तवील मुद्दत के लिए जुदा ना रहे, ये उसका हक़ है कि वो अपने शौहर के साथ लुत्फ़ अंदोज़ हो जैसा कि बीवी के साथ मुबाशरत से लुत्फ अंदोज़ होना शौहर का हक़ है। अगर शौहर की जुदाई पर बीवी राज़ी हो जाए, भले ही तवील मुद्दत के लिए, तो बीवी की रज़ामंदी से शौहर के लिए इसमें कोई हरज नहीं। जैसा कि रिज़्क़ कमाने के सिलसिले में ये सूरते हाल पैदा हो जाती है। इस हालत में शौहर बीवी को ऐसे पुर अमन घर में छोड़ कर जाए जिसमें कोई ख़तरा ना हो। शौहर को चाहिए कि वो अपनी बीवी से इस तरह हमबिस्तर हो ताकि उसकी ज़रूरियात और हक़ पूरा हो सके। ये कहना मुनासिब नहीं कि हर चार महीने में एक बार हमबिस्तर होना काफ़ी है। उल्माए दीन ने ऐसी सोच को सहीह नहीं बताया।

ड़मर फ़ारूक़ रज़ि. का हुक्म जो उन्होंने सरहदों पर लगी फ़ौजों के लिए मुक़र्रर किया था, ये था कि वो अपनी बीवियों से चार महीने तक दूर रहे जब ये मुद्दत पूरी हो जाती तो उन्हें वापस बुला लिया जाता और उनकी जगह दूसरों को भेज दिया जाता। ये हुक्म सरहदों पर लड़ने वाले फ़ौजियों के लिए था इससे ये मतलब निकालना मुनासबि ना होगा कि आम हालात में भी चार महीने में सिर्फ़ एक बार हमबिस्तरी बीवी का हक़ है। बल्कि जैसे शौहर अपनी जरूरत को पूरा करता है वैसे ही बीवी की ज़रूरत को भी शौहर पर पूरा करना वाजिब है।

जैसे मर्द की ये आरजू रहती है कि उसकी बीवी उसके लिए सजधज कर रहे ताकि उसको अच्छी लगे और उसके लिए शौहर के दिल में मुहब्बत और रक्श पैदा हो ठीक इसी तरह बीवी की भी यही तमन्ना होती है कि उसका शौहर भी उसे ख़ूबसूरत लगे और उसके दिल को भाए।

इब्ने अब्बास रज़ि. फ़रमाते हैं कि मुझे ये बात पसंद है कि मैं औरत के लिए ख़ूबसूरत बनूं जिस तरह मुझे यह बात पसंद है कि वो मेरे लिए ख़ूबसूरती इख़्तियार करें। (इब्ने अबी शैबा, 19608 सहीह)

अपनी बीवियों से अपने काम-काज और उमूर में मशवरा भी लेना चाहिए इससे भी आपसी मुहब्बत और उल्फ़त बढ़ेगी। जैसा कि मशवरा के बारे में अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है कि—

"और काम का मश़वरा उनसे किया करें।" (सूरह आले इमरान 3/159) ये हुक्म आम है। और ऐसा हुक्मे आम सूरह शूरा की आयत 42/38 में भी बयान हुआ है। और बिल्क़ीस के बड़ों ने उससे फ़रमाया कि आगे आपको इख़्तियार है आप खुद ही सोच लीजिए यानी उन्होंने फ़ैसला बिल्क़ीस पर ही छोड़ दिया। *"और उनका काम आपस के मशवरे से होता है।"* (42/38)

ये कहना कि औरत से मशवरा नहीं लेना चाहिए और उनके मशवरे के ख़िलाफ़ करो, ऐसी सब रिवायतें कबूलीयत के द़र्जे को नहीं पहुंचती (सिलसिला ज़ईफा, 1/619)

शौहर को ये हलाल नहीं कि वो अपनी बीवी के साथ इज़्दिवाजी ज़िंदगी *(Marital life)* की बातें अपने क़रीबी या दोस्त व अक़रिबा को बयान करे।

रसूल ﷺ का फ़रमान है कि क़यामत के दिन अल्लाह के यहाँ सब से बदतरीन दर्जा उस शख़्स का होगा जो किसी औरत के साथ सोहबत करता और औरत उससे सोहबत करती है और फिर ये उसके राज़ को ज़ाहिर करता है। (सहीह मुस्लिम किताब निकाह)

आख़िर में यही कहा जा सकता है कि शौहर बीवी एक गाड़ी के दो पहिए की मिस्ल हैं। अगर दोनों पहिए दुरुस्त हैं और सहीह तालमेल से चल रहे हैं तो गाड़ी आसानी से बिना किसी तकलीफ़ के आरामदेह सफ़र के साथ अपनी मंजिले मक़सूद को पहुंचेगी। ठीक इसी तरह अगर शौहर बीवी के दरमियान अच्छा ताल-मेल है तो घर पुर सुकून रहेगा और हर काम मुहब्बत के साथ पूरा कर पाएंगे। रसूल ﷺ ने फ़रमाया औरत की तख़लीक़ (पैदाइश) पसली से हुई है, ये किसी तरह से भी तेरे लिए सीधी नहीं होगी। बस अगर तू इससे फायदा उठाना चाहता है तो उसी कमी की हालत में फ़ायदा उठाता रह। अगर तू उसे सीधा करने लगे तो उसे तोड़ डालेगा। और उसका तोड़ देना उसको तलाक़ देना है। (सिलसिला सहीहा, 3517)

मर्द बीवी के हुक़ूक़ को अदा करते करते अपने दिगर मातहतों और रिश्तों

के हुक़ूक़ को ज़ाए ना कर दें। कहीं ऐसा ना हो कि वो बीवी की मुहब्बत में इस क़दर दीवाना हो जाए कि औरों के साथ बेरुख़ी और क़ता रहमी और रिश्ते टूटने का सबब बन बैठे।

अबू दरदा रज़ि. से मरवी है कि रसूल ﷺ ने इरशाद फ़रमाया किसी चीज़ की मुहब्बत तुम्हें अंधा बहरा कर देती है। (मुसनद अहमद, शाकिर 27499 सहीह)

शौहर के हुक़ूक़

अभी आपके सामने बीवी के शौहर पर जो हक़ हैं, उसके बारे में जहाँ तक मुझे थोड़ी सी जानकारी रखने वाले के लिए मुमकिन हो सका, बयान किया। अब देखिए कुछ अहम हुक़ूक़ जो शौहर के बीवी पर होते हैं। बीवी के लिए शौहर का मक़ाम हर मज़हब और तहज़ीब में ऊँचा रखा गया है और इसकी कुछ वुजूहात भी हैं। इस्लाम में तो मर्द ही औरत पर आमतौर पर फौकियत (ऊँचा दर्जा) और फज़ीलत रखता है। इसलिए शौहर पर ही बीवी बच्चे और घर की जिम्मेदारी, देख-रेख, हिफ़ाज़त, ब्याह शादी और ख़र्च वग़ैरह की ज़िम्मेदारी डालकर उसको इसका (निभाने वाला) बना दिया गया। इसको मर्द अपनी ताक़त भर हैसियत से बख़ूबी निभा सके इसलिए उसको जिस्मानी, नफ़सानी, इल्म और दिमागी कुव्वत से नवाज़ा गया जो औरत को कम दी गई हैं। उसकी जिस्मानी और नफ़्सानी (मानसिक) बनावट ऐसी बनाई गई कि वो घर के कामकाज, बच्चों की परवरिश व देखभाल को मुख़्तलिफ़ हालात में सब्र और पुर सुकून तरीक़े से निभा सके।

आज का दौर आमतौर पर हर मज़हब के लिए दीन से दूरी का दौर है। मुआशरा तेज़ी से बदल रहा है और लोग दीन व तहज़ीब की पाबंदियों से ऊब कर उसे छोड़ते जा रहे हैं। बराबरी का नारा बुलंद है और कई शूबों में अच्छा बदलाव भी आया है। मगर इस हक़ीक़त को नज़र अंदाज करना नादानी होगी कि औरत हर तरह से मर्द की बराबरी करने के लायक़ (सक्षम, *Fit*) नहीं है। जिस तरह मर्द औरत का हर काम नहीं कर सकता ठीक उसी तरह एक औरत भी मर्द के करने वाले हर काम को नहीं कर सकती। ये एक क़ुदरती निज़ाम है

जिसे क़यामत तक कोई शख़्स तजावुज़ और बदलने की नाकाम कोशिश भी करने में कामयाब नहीं हो पाएगा।

शौहर के हुक़ूक़ की अहमियत का अंदाज़ा इस बात से कर लीजिए कि रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि अगर मैं किसी को सजदा का हुक्म देता तो औरत को हुक्म करता कि वो अपने शौहर को सजदा करे। (जामेअ़ तिरमिज़ी 1159 सहीह)

सजदा एक इबादत है जो ख़ालिस अल्लाह ही की की जा सकती है। इससे बढ़कर शायद ही कोई इबादत अल्लाह को पसंद हो कि बंदा ख़ालिस उसी को सजदा करे और उसी की इताअ़त *(Obediency)* में अपना सिर झुका दे। इस मुक़द्दस इबादत का भी बीवी के लिए शौहर को मुस्तहिक़ बना दिया जाता अगर इस्लाम में अल्लाह के सिवा और किसी को सजदा करने की इजाज़त दी जाती।

रसूल ﷺ ने एक औरत से शौहर के हुक़ूक़ के बारे में बयान करते हुए फ़रमाया कि "देख ले तेरा उसके यहाँ क्या मकाम है? क्योंकि वही तेरी जन्नत है और वही तेरी जहन्नम है। (सिलसिला सहिहा, 2612)

आईशा रज़ि. फ़रमाती हैं कि ए औरतों! अगर तुम्हें मालूम हो जाए कि तुम्हारे शौहरों का तुम पर क्या हक़ है तो तुम उनके चेहरों का ग़ुबार अपने चेहरों के ज़रिए साफ़ करने लगो। (इब्ने अबी शैबा, 17428 सहीह)

रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि तीन चीज़ों का ताल्लुक ख़ुश किस्मती से है (जिनमें एक) सआदत वाली वो बीवी है कि जब तू उसे देखे तो वो तुझे खुश कर दे और जब तू ग़ायब हो तो उसके नफ़्स और अपने माल के बारे में मुतमइन (संतुष्ट) हो। (और बदक़िस्मती वाली तीन चीज़ों का जिक्र करते हुए फ़रमाया) बद क़िस्मती वाली वो बीवी कि जब तू उस पर निगाह डाले तो तुझे बुरी लगे, वो तुझ पर ज़बान दराज़ी भी करे और जब तू ग़ायब हो तो उस पर उसके नफ़्स और अपने माल के बारे में मुतमइन ना हो (सिलसिला सहिहा, 1047)

ये है शौहर का हक़ कि बीवी की हर मुमकिन कोशिश रहे कि वो अपने शौहर को ख़ुश रखे। अपनी इज़्ज़त, शौहर के माल और बच्चों की अमानत व

ज़िम्मेदारी के साथ उनकी हिफ़ाज़त करे। ये ना हो कि अपना मिज़ाज और हुलिया ऐसा बनाकर रखे कि जब शौहर पास हो तो उसका दिल ही ना चाहे कि बीवी से मुहब्बत के कुछ पल बिताए और जब शौहर घर से बाहर हो तो उसे अपनी इज़्ज़त और माल में ख़यानत का डर सताता रहे। यानी बीवी बेहयायी के काम करे और शौहर के माल को नाजायज़ तरीके से ज़ाए करे।

बीवी पर शौहर का हक़ है कि वो उसके बच्चे और घर माल की हिफ़ाज़त करे क्योंकि शौहर की ग़ैर मौजूदगी में वो निगहबान है। रसूल ﷺ का फ़रमान है कि औरत अपने शौहर के घर वालों की निगहबान है उससे उनकी पूछगछ होगी (सहीह बुख़ारी, किताब अहकाम) और फ़रमाया कि जो शख़्स ऐसा हो कि अल्लाह तआ़ला ने उसको रिआ़या (प्रजा, *Dependant*) की निगहबानी पर मुक़र्रर किया हो वो ख़ैर ख़्वाही के साथ उनकी निगहबानी ना करे तो क़यामत के दिन वो जन्नत की खूश्बू भी ना सूंघेगा। (सहीह बुख़ारी, किताब अहकाम)

शौहर का हक़ है कि बीवी उसकी ग़ैर मौजूदगी में उसके बच्चों और दूसरे मातहत लोगों पर (छोटे बहन भाई वग़ैरह) पर निगहबान है अगर उनकी तरबियत और दूसरी ज़िम्मेदारियों से बेरग़बती रखेगी और ख़्याल नहीं करेगी तो आख़िरत में पूछगछ होगी और ख़सारा उठाने वाली हो सकती है।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि अपने शौहर से कशीदा (नाख़ुश) रहने वाली और ख़ुलअ़ा (जुदाई) करने वाली औरतें मुनाफ़िक़ और दग़ाबाज़ हैं। (सुनन निसाई, 3494 सहीह)

बीवी को शौहर से नाशुक्री और नाख़ुशी का इज़हार नहीं करना चाहिए और ग़ैर शरअ़ी वुजूहात पर उससे तलाक़ या जुदाई की तमन्ना भी नहीं करनी चाहिए। सहाबिया ने शौहर की नाशुक्री को बुरा जाना और इसकी मिसालें क़ायम कीं।

जमीला बिन्त सलूल रज़ि. रसूल ﷺ के पास आई और अ़र्ज किया कि क़सम ख़ुदा की मैं साबित (शौहर) पर किसी दीन या अख़लाक़ की बुराई से गुस्सा नहीं हूँ लेकिन मैं बुरा जानती हूँ कि मुसलमान होकर शौहर की नाशुक्री करूं। (सुनन इब्ने माजा, 2056 सहीह)

आज के मुआ़शरे में अक्सर देखा गया है कि शादी के बाद या शौहर से जुदाई इख़्तियार करने वाली औरतों को और कोई सम्भालने वाला भी नहीं होता। माँ बाप बेबस हो जाते हैं और भाई अपनी बीवी बच्चों की फ़िक्र में रहते हैं। लेकिन फिर भी वो अपने शौहर की नाशुक्री करें तो हालात बदतर हो जाते हैं। आज के बराबरी के हुक़ूक़ के दौर में भी दोनों शौहर बीवी को चाहिए कि एक-दूसरे की क़द्र व एहतराम के साथ हुसने सुलूक करते हुए मुहब्बत से साथ रहकर गुज़र बसर करें और एक-दूसरे की नाशुक्री व मलामत *(Critisize)* करने से गुरेज़ करें।

रसूल ﷺ का फ़रमान है कि अल्लाह तआ़ला उस औरत की तरफ़ नहीं देखता जो अपने ख़ाविंद का शुक्रिया अदा नहीं करती हालांकि वो इससे बे नियाज़ *(Independent)* नहीं हो सकती। सिलसिला सहीहा, 289)

ये सब अहकाम उस शख़्स और मुसलमान के लिए हैं जो ईमान रखता हो अल्लाह पर, क़यामत के हिसाब के दिन पर और अपने रब की मुलाक़ात पर। जो सिर्फ़ इंसान के आमाल (कर्म) की बिना पर उसके बारे में जन्नत या जहन्नम का फ़ैसला करेगा। और जो इन अहकाम से लापरवाह हैं तो उसके लिए दीन मज़हब की तालीम कोई मायने और हैसियत नहीं रखती। इस हालत में मुआशरे का एक हिस्सा अपने ख़्वाहिश नफ़्स को तकमील (पूरा) देने के लिए कुछ क़ायदे क़ानून बना लेता है और उसी में मगन रहते हैं। जैसे बीवी को छोड़ो या शादी ना करो और *Live in Partenship* का लुत्फ़ उठाओ। ना कोई ख़र्च का बोझ ना नाशुक्री और नाख़ुशी का डर। बात नहीं बनी तो दूसरा साथी। और हालत यहां तक पहुंची कि मग़रिब की *Celebrity* एक साथ 4-4 शौहर रखती। इसमें क़ौमों और इंसानियत की भलाई और ख़ैर नहीं। इसके बुरे असरात को जानने के लिए मेरी दूसरी किताब ''मुहम्मद ﷺ मोजज़ात और पेशीनगोइयां'' देखिए।

शौहर और बीवी एक साथ लम्बी उम्र बिता देते हैं, बच्चे वाले हो जाते हैं और अगर किसी बात पर ज़रा सा मनमुटाव हुआ तो एक दूसरे की नाशुक्री करने लग जाते हैं। रसूल ﷺ ने फ़रमाया, तुम अरसा दराज़ तक अपने मां बाप के पास बिना शौहर के ज़िंदगी गुज़ारती, फिर अल्लाह तआ़लातुम्हें ख़ाविंद

अता करे और उससे औलाद अता फ़रमाता है। फिर जब कभी गुस्से में आ जाती है तो नाशुक्री करते हुए कहती है, मैंने तुझसे कभी ख़ैर नहीं देखी। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 1048 सहीह)

जैसा बीवी का शौहर पर हक़ है उसी तरह शौहर का भी बीवी पर हक़ है कि वो उसकी जिस्मानी ज़रूरियात को पूरा करे और हमबिस्तरी के लिए जब बुलाई जाए तो इंकार ना करे। आज की तरह नहीं कि बीवी की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ शौहर का उससे फ़ायदा उठाना बदकारी *(Marital Rape)* की तरह मानने की मुहिम चलाई जा रही है।

रसूल ﷺ का फ़रमान है कि जब तुम से कोई आदमी अपनी ज़रूरत पूरी करने के लिए अपनी बीवी को बुलाए तो वो अपने शौहर के पास पहुंचे, अगरचै वो तनूर *(Cooking)* पर ही हो। (जामेअ़ तिर्मिज़ी, 1160 सहीह)

आप ﷺ ने फ़रमाया, जब तुममें से कोई मर्द अपनी बीवी को बिस्तर पर बुलाए और वा ना आए (इंकार करे) तो सुबह तक उस पर फ़रिश्ते लानत करते रहेंगे। (सहीह बुख़ारी, किताब निकाह) यही वजह है जिसके लिए बीवी को अपने शौहर की इजाज़त के बिना नफ़्ल रोज़ा रखने के लिए मना कर दिया गया। जिससे पता चलता है कि शौहर की ख़ुशी और फ़रमांबरदारी बीवी पर नफ़्ल इबादत से मक़द्दम *(Superior)* है।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया, कोई औरत शौहर की मौजूदगी में उसकी इजाज़त के बग़ैर रोज़ा ना रखे और उसकी मौजूदगी में वो उसकी रज़ामंदी के बग़ैर किसी को घर आने की इजाजत ना दे। (सुनन अबी दाऊद, 2458 सहीह)

यहाँ शौहर के दो हुक़ूक़ बयान हुए। एक जैसा कि पहले जिक्र किया, उसकी जिस्मानी ज़रूरत को पूरा करना और दूसरा शौहर की इजाज़त के बग़ैर किसी को भी (मर्द या औरत) घर ना बुलाए ना उसे आने दे।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया (नसीहत करते वक़्त) क्या कोई ऐसी औरत है जो लोगों को ख़ाविंद के साथ तन्हाई में होने वाले मामलात बताती हो? क्या कोई ऐसा मर्द है जो लोगों को बीवी के साथ तन्हाई में होने वाले मामलात बताता हो? चुनांचे उन औरतों में से एक गुबार आलूदा बिखरे बालों वाली एक औरत खड़ी हो गई और कहा, अल्लाह की क़सम। मर्द ऐसा करते हैं और औरतें भी।

आप ﷺ ने फ़रमाया, ऐसा मत करो, क्या मैं तुमको इसकी मिसाल ना बताऊँ? ऐसी बातें बयान करने वाला उस शैतान की तरह है जो सरेआम रास्ते पर शैतानी के साथ सोहबत करे और लोग उनको देख रहे हों। (सिलसिला सहिहा, 3153)

अब ज़रा ग़ौर कीजिए कितना घिनौना अमल है ये और ऐसे शख़्स का क़यामत में बदतर हाल होगा। मगर आज के मुआशरे का तो हाल ही कुछ और है। यार दोस्तों या सहेलियों में इसका ज़िक्र करके लुत्फ़ अंदोज होते हैं। और बात तो यहाँ तक पहुँच गई कि ऐसे अमल की *Video* और *Films* बनाने का धंधा करने वाली एक बड़ी तादाद में माल कमाने और मुआशरे में शौहरत व इज़्ज़त हासिल करके उस मुआशरे की *Celebrity* बन जाती हैं। तभी तो कुदरत अपनी विनाश लीला के नज़ारे इस मुआशरे को दिखा रहा है। अल्लाह हमें महफ़ूज़ रखे, आमीन।

जैसा कि सुनन अबी दाऊद की हदीस़ 2458 में ऊपर गुज़र चुकी कि बीवी शौहर की इजाज़त के बग़ैर किसी को घर ना आने दे। और ना ही शौहर की इजाज़त के बिना शौहर के घर से बाहर जाए, यहां तक कि अगर अपने मां बाप से भी मिलने जाना है तो इसके लिए भी बीवी को अपने शौहर से इजाज़त लेनी ज़रूरी है। जब आ़ईशा रज़ि. पर तोहमत लगाई गई और एक महीने तक बीमार रहीं, सख़्त रंज के दिन गुज़ार रही थीं। उस हालत में भी दिल को हलका करने और मां बाप का सहारा पाने के लिए आ़ईशा रज़ि. अपने घर नहीं गई, बल्कि रसूल ﷺ से इस हालत में इजाज़त तलब करती हैं। आ़ईशा रज़ि. ने अर्ज़ किया (रसूल ﷺ से) मुझे आप अपने मां बाप के पास जाने की इजाज़त दे दीजिए। (सहीह बुख़ारी, किताब अल ग़ाज़ी)

इस हदीस़ से दो बात मालूम होती हैं कि एक तो बीवी को शौहर की इजाज़त के बिना उसके घर से बाहर नहीं जाना चाहिए। दूसरे भले ही मां का मक़ाम सबसे ऊपर है मगर एक औरत के लिए मां के हक़ पर उसके शौहर का हक़ ज़्यादा होता है। ना बीवी बिना इजाज़त अपनी मां के घर जा सकती है और ना उसे या किसी और को अपने साथ रखने या बुलाने का हक़ रखती है। जब औरत का निकाह हो जाए तो उसकी ज़ात पर उसके मां बाप से ज़्यादा हक़

उसके शौहर का हो जाता है।

रसूल ﷺ ने शौहर की इजाज़त के बग़ैर बीवीयों से (उनके घरों में) गुफ़्तगू करने से मना फ़रमाया। (सिलसिला सहीहा, 652)

इसका मतलब ये हुआ कि अगर शादीशुदा औरतों से कोई गुफ़्तगू करनी हो तो पहले उनके शौहर से इजाज़त लेनी चाहिए।

शौहर का बीवी पर एक हक़ ये है कि वो ख़ुद को शौहर के लिए साफ़ सुथरी और सजावट के साथ रखे। ख़ास तौर पर जब शौहर काम से या सफ़र से घर वापस लोटे। इसकी तरग़ीब कई अहादीस़ में मिलती है। बीवी की इन ख़ुसूसियात का ज़िक्र अल्लाह ने क़ुरआन में भी किया है।

''*नौजवान कुंवारी हम उम्र औरतें।*'' (78/33) इसमें 'कवाअिबा' का मायने उभरी हुई छातियों से भी किया गया है। और सूरा ज़ुख़रूफ़ में फ़रमाया गया है कि ''*जो ज़ेवरात में पलीं।*'' (43/18) जब आ़ईशा रज़ि. की विदायगी का दिन आया तो उम्म रूमान आ़ईशा रज़ि. के पास आई और साथ ले गई और बनाव श्रंगार किया और फिर नबी ﷺ के पास लाया गया। (देखिए सुनन अबी दाऊद, 4933 सहीह)

लेकिन औरत का श्रंगार करके घर से बाहर जाना कि वो नुमायां हो, शौहर की ग़ैर मौजूदगी में बनाव श्रंगार करना और बाहर निकलना और मायल करने वाली चाल, हाव-भाव और तरीक़े इख़्तियार करना इस्लाम में सख़्त मना है। औरत का ख़ुश्बू लगाकर बाहर जाना बदकार औरत कहा गया है और जो बदन नुमायां करने वाला लिबास पहनकर बाहर निकले और मायल *(Attract)* करे उसे जहन्नमी कहा गया है।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि तीन आदमियों के बारे में मुझसे सवाल मत करो (जिनमें एक) ऐसी औरत कि उसका शौहर उससे ग़ायब हो और वो उसके दुनियावी ख़र्च पूरा करके गया हो फिर भी वो बन संवरकर बाहर निकले। (सिलसिला सहिहा, 542) मतलब ऐसी औरत बड़ी मुजरिम (गुनाहगार) है और इसके अज़ाब के बारे में सवाल मत करो।

पहले भी बयान किया गया कि शौहर का बीवी पर हक़ है कि वो उसके घर और माल की हिफ़ाज़त करे और किसी तरह से ना ज़ाए करे ना ख़्यानत।

दस्तूर के मुताबिक़ अपना और बच्चों का ख़र्च शौहर की इजाज़त के बग़ैर भी लेने का हक़ रखती है। जो दस्तूर और मामूल के मुताबिक़ ना हो तो उसे कोई हक़ नहीं कि वो किसी को खिलाए, सदक़ा या हदया *(Gift)* दे बिना अपने शौहर की इजाज़त के। हाँ अगर शौहर ने आमतौर पर मामूली खाना, सदक़ा या हदया देने की इजाज़त दे रखी है या वो इसे नापसंद नहीं करता तो बार-बार इजाज़त लेना ज़रूरी नहीं और इस तरह उसकी इजाज़त ही समझी जाएगी।

मुसनद अहमद की हदीस़ 27011 (अहमद शाकिर, सहीह) में बयान हुआ है कि रसूल ﷺ इस पर भी औरतों से बैअ़त लेते कि अपने शौहरों को धोखा नहीं देंगी, और इसका मतलब आपने ये फ़रमाया कि शौहर का माल ग़ैर पर इंसाफ से हट कर ख़र्च करना। शौहर के हक़ का ख़्याल रखने वाली एक अफ़ज़ल बीवी की मिसाल भी देख लें। रसूल ﷺ एक रात खड़े हुए और फ़रमाया "आयशा मुझे अपने रब की इबादत करने दो। मैंने कहा, अल्लाह की क़सम, मैं आप की कुरबत *(Nearness)* को पसंद करती हूँ, लेकिन वो चीज़ भी पसंद है जो आपको ख़ुश करे। (सिलसिला सहीहा, 68)

माशा अल्लाह! सुबहान अल्लाह! आज के शौहर और बीवियाँ इन अल्फ़ाज़ से नसीहत लें कि रसूल ﷺ बेहतरीन अख़लाक़ का मुज़ाहिरा करते हुए बीवी से मुहब्बत के साथ उसकी ख़ुशी के लिए उससे फ़रमाते हैं कि मुझे इबादत करने दो और बीवी साहिबा, जो दुनिया की औरतों में अफ़ज़ल हैं, ने भी क्या जवाब दिया कि ऐ मेरे शौहर (रसूल ﷺ) मुझे आप की सोहबत आपकी नज़दीकी बेहद पसंद है। लेकिन मैं वो पसंद करती हूँ जो आपको पसंद है। अगर ऐसा अख़लाक़ सब मर्द और औरतें अपने अन्दर इख़्तियार कर लें तो ये जन्नत के नज़ारा की यहीं दुनियां में झलक मिल जाए। अल्लाह तआ़ला हम सबको ऐसा अख़लाक़ अता करे। आमीन

बीवी पर उसके ससुराली रिश्तों यानी शौहर के माँ, बाप, बहन, भाई वग़ैरह का शरअ़ी कोई हक़ इस्लाम में मुक़र्रर नहीं किया जैसा कि उल्मा दीन का क़ौल है। बीवी पर अपनी सास सुसर की फ़रमांबरदारी करना वाजिब नहीं। मगर अपनी इस्तिताअ़त *(Capacity)* के दायरे में शौहर के साथ हुसने सुलूक, हमदर्दी और उसके फ़रायज़ *(Duties)* का एहतराम करते हुए अपने

क़रीबी ससुराली रिश्तों का उसे ख़्याल रखना चाहिए। (फतवा लजना अल दाइमाह, 19/264-5)। शौहर पर अपने माँ बाप का एहतराम, इकराम उनके साथ हुसने सुलूक और देखभाल करना फ़र्ज़ है। बीवी पर शौहर का हक़ है कि वो शौहर के साथ हुसने सुलूक करते हुए हर मामलात में शौहर की मदद करे।

ये एक मुआ़शरी निज़ाम है जो चला आ रहा है और एक अच्छे मुआ़शरे को क़ायम रखते हुए आगे भी चलता रहेगा। आज की बहू कल सास बनेगी, क्या वो पसंद करेगी कि आने वाली बहू भी उसके साथ ऐसा ही बर्ताव करे? शायद हरगिज़ नहीं। ये एक अच्छा दस्तूर है जिसको ख़ुशी ख़ुशी निभाना चाहिए। इस्लाम में तो वैसे भी बड़ों की इज़्ज़त का बड़ा मक़ाम रखा गया है। रसूल ﷺ का फ़रमान है कि वो हम में से नहीं, जो छोटों पर रहम और बड़ों का एहतराम ना करे। (मुसनद अहमद, 6733, शाकिर सहीह) सहाबी और सलफ़े उम्मत का भी यही दस्तूर रहा है।

जाबिर बिन अ़ब्दुल्लाह अंसारी रज़ि. से मरवी है कि उनके बाप मर गए और सात या नौ लड़कियाँ छोड़ गए। मैंने एक ऐसी औरत से निकाह किया जो ख़ाविंद कर चुकी थी (यानी *Widow*)। रसूल ﷺ ने मुझसे पूछा, जाबिर! क्या तूने निकाह किया है? मैंने अ़र्ज़ किया जी हाँ। आपने फ़रमाया कुंवारी से या बेवा से? मैंने कहा बेवा से। आपने फ़रमाया कुंवारी से क्यों ना किया, वो तुझसे खेलती तू उससे खेलता। वो तुझसे हंसी दिललगी करती तू उससे हंसी दिललगी करता। मैंने अ़र्ज़ किया या रसूलुल्लाह ﷺ मेरे बाप मर गए और बेटियाँ छोड़ गए। मैंने एक और लड़की उन्हीं की तरह ब्याह कर लाना मुनासिब ना समझा, बल्कि मैंने ऐसी औरत की जो उनकी ख़बर रखे (देखभाल) और उनको दुरुस्त करे (अदब सिखाए)। आपने फ़रमाया तुझको अल्लाह बरकत और ख़ैर अता करे। (सहीह बुख़ारी, किताब नफ़क़ात)

और इस हुसने सुलूक पर नबी ﷺ की दुआएँ और ख़ैर व बरकत की ख़ुशखबरी भी मिल गई।

औलाद के हुक़ूक़

ये दुनियां फ़ानी है, एक दिन इसे छोड़कर चले जाना है। जितना अरसा

चाहो जी लो आख़िर फ़ौत हो जाओगे और जिससे चाहो मुहब्बत करो आख़िर उसे छोड़कर जाना होगा। ये एक हक़ीक़त है मगर अक्सर लोग इससे ग़ाफ़िल हैं। जिसने इसको समझा और जाना उसने कामयाबी पा ली। ये तो सच है कि जिससे भी इंसान मुहब्बत करता है आख़िर उसे भी एक दिन अलविदा कहकर इस जहान से कूच कर जाता है। लेकिन एक ऐसी चीज़ भी अल्लाह ने इंसान को अता की है। जिससे वो बेइंतिहा मुहब्बत करता है, उसे छोड़कर चला भी जाता है मगर उसका साथ एक बेहतरीन उम्दा व फ़ायदेमंद शक्ल में उसके साथ हमेशा रहता है और उसके लिए नफ़ा बख़्श इनामात का ज़रिया आख़िरत में भी बना रहता है। यह है उसकी नेक सालेह औलाद, जो अपने मां बाप के हक़ में उनकी वफ़ात के बाद दुआ करती है और अल्लाह तआ़लाइससे उनके लिए जन्नत में दर्जे बुलंद करता जाता है। बशर्ते कि वो नेक सालेह हों और इसकी तारीफ़ यह की जा सकती है कि मां बाप औलाद के हुक़ूक़ की अदायगी करते हुए उन्हें दीने इस्लाम और दुनिया का इल्म सिखाएं, उनको सालेह मौमिन बनाने के लिए तरबियत करें, उम्दा अदब सिखाएं, हलाल हराम का शरअ़ी इल्म दें, फ़रायज़ की अदायगी और मुनकरात से बचने का फ़हम दिलाकर एक उम्दा अख़लाक़ का इंसान बनाने की कोशिश में लगे रहें।

ये औलाद ही है जिसको अल्लाह तआ़ला ने इस फ़ानी दुनिया की ज़ीनत (सूरह कहफ़, 18/46) और आंखों की ठण्डक बताया। (सूरह क़सस, 28/13) मां बाप औलाद के हक़ में दुआएं करते रहते हैं कि ए हमारे रब! तू हमारी औलाद को अपना फ़रमांबरदार बना और हमारा भी इताअ़त गुज़ार जिससे वो हमारी आंखों की ठण्डक और दिल का सुकून बनें और उनकी अच्छी तरबियत करा कर ख़ैर की एक अच्छी मिसाल के साथ नेक लोगों का इमाम बना।

''ऐ हमारे रब! तू हमें हमारी बीवियों और औलाद से आंखों की ठण्डक अता फ़रमा और हमें परहेज़गारों का पेशवा बना।'' (सूरह फुरक़ान 25/74)

यानी हमारी बीवियों और औलाद को अपना ताबेदार बना दे। मोमिन की आंख की ठण्डक इससे ज़्यादा किसी बात में नहीं होती कि उसका महबूब अल्लाह की इबादत में मसरूफ़ *(Busy)* रहे। उसकी आंख कैसे ठण्डी हो

सकती है जबकि उसे मालूम हो कि उसका अज़ीज़ आग में है यानी वो अल्लाह का नाफ़रमान है। इसीलिए अल्लाह ने ये फ़रमाया। इंसान क्या हर जानदार अपने बच्चों से बेहद प्यार करता है और इसकी मिसाल नबी ﷺ की हयात मुबारक में भी मिलती है।

रसूल ﷺ ख़ुतबा पढ़ रहे थे। हसन रज़ि. और हुसैन रज़ि. तशरीफ़ लाए, ये दोनों लाल कुर्ता पहने हुए थे, गिरते थे और उठते थे (छोटे बच्चे की वजह से) उनको देखकर आप ﷺ उतरे (मिम्बर से) और उनको उठा लिया और गोद में ले लिया। (सुनन इब्ने माजा, 3600 सहीह)

रसूल ﷺ ने फ़रमाया, सुन लो! तुममें से हर शख़्स हाकिम है और हर शख़्स से उसकी रअ़ीय्यत (प्रजा) की बाज़ पुरस होगी। बादशाह तो बड़ा हाकिम है उससे उसकी रिआ़या के बारे में बाज़ पुरस होगी लेकिन दूसरे लोग भी अपने-अपने घर वालों के हाकिम हैं उनकी बाज़ पुरस उनसे होगी। (सहीह बुख़ारी, किताब अहकाम)

जब ये आयत नाज़िल हुई कि ''*अपने क़रीबी रिश्तेदारों को डरा दें।*'' (सूरह शुअ़रा, 28/214) तो रसूल ﷺ खड़े हुए और फ़रमाने लगे ऐ क़ुरैश के लोगों तुम अपनी जानों को बचा लो। मैं अल्लाह के सामने तुम्हारे कुछ काम नहीं आऊंगा। ऐ अब्दुल मनाफ के बेटों अल्लाह के सामने मैं तुम्हारे कुछ काम नहीं आऊंगा। ऐ अब्बास रज़ि. अब्दुल मुत्तलिब के बेटे अल्लाह के सामने मैं तुम्हारे कुछ काम नहीं आऊंगा। ऐ सफ़िय्या मेरी फूफी मैं अल्लाह के सामने तुम्हारे कुछ काम नहीं आऊंगा। ऐ फातिमा रज़ि. मौहम्मद ﷺ की बेटी मेरे माल में से जो तू चाहे माँग ले मैं दे दूंगा मगर अल्लाह के सामने मैं तेरे कुछ काम नहीं आऊंगा। (सहीह बुख़ारी, किताब तफ़सीर)

इससे साफ़ मालूम हुआ कि औलाद का माँ बाप पर जो अहम हक़ है वो ये है कि उनकी तरबियत ऐसी हो कि वो हर तरह के गुनाह, अज़ाब, रुसवाई और जहन्नम की आग से महफ़ूज़ रहें। और ये तभी मुमकिन है जब औलाद को इल्म (दीने इस्लाम) सिखाया जाए ताकि वो उन आमाल (कर्म) को करे जिनसे अल्लाह राज़ी हो और उनसे दूर रहकर महफ़ूज़ रहें जिनमें अल्लाह की नाराज़गी हो। अल्लाह तआ़ला बंदो का हिसाब दुनिया के माल, असबाब और

इल्म व हुनर की बिना पर नहीं बल्कि शरियत इस्लाम के मुताबिक़ उनकी हसनात (नेकियाँ) और सयि्यआत (बुराइयों) की बिना पर करेगा।

इसकी एक मिसाल *(Example)* देखिए क़ुरआन में बयान की गई है। किस तरह अल्लाह के नेक, फ़रमांबरदार और आज्ञाकारी बंदे अपनी औलाद की परवरिश करते हैं।

''ऐ मेरे प्यारे बेटे! तू नमाज़ क़ायम रखना, अच्छे कामों की नसीहत (Encourage) करते रहना, बुरे कामों से (लोगों को) मना किया करना। और अगर तुम पर मुसीबत आ जाए तो सब्र करना। ये बड़े ताकीदी कामों (हिम्मत के कामों) में से है। लोगों के सामने अपने गाल ना फैला (ग़ुरूर ना करना) और ज़मीन पर इतरा कर ना चल। किसी तकब्बुर (ग़ुरूर) करने वाले, शैख़ी करने वाले (Arrogant & boaster) को अल्लाह पसंद नहीं करता। अपनी रफ़तार में मियाना रवी (Moderate) इख़्तियार कर और अपनी आवाज़ पस्त (नीची) रख। यक़ीनन आवाज़ों में सबसे बदतर आवाज़ गधों की आवाज़ है।'' (सूरह लुक़मान 31/17-19)

क्या बेहतरीन और अनमोल मोती हैं इसके हर लफ़्ज़ *(Words)*। यह है नेक मुसलमान लुक़मान की अपने बेटे को नसीहत और शिक्षा। जब औलाद अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ ऐसी नसीहतों और हुक्मों पर अमल करेगी तो नेक मां बाप की आंखों को ठण्डक और दिल को सुकून मिलेगा। और ऐसे लोगों से बना मुआशरा एक बेहतरीन मिसाली समाज होगा।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि तलबे इल्म फ़र्ज़ है हर मुसलमान पर। (इब्ने माजा, 224 सहीह) यहाँ इल्म से मुराद शरिअ़त इस्लाम का इल्म है। दुनिया का हुनर व जानकारी इससे मुराद नहीं। और हर मुसलमान से मुराद पूरी उम्मत है जिसमें औरत मर्द, छोटे-बड़े सब शामिल हैं।

अपने मातहत वालों को (बच्चे, नौकर वग़ैरह) को इल्म और अदब सिखाने का अल्लाह तआ़ला ने बड़ा अजर रखा है। इब्ने अब्बास रज़ि. से मरवी है कि रसूल ﷺ ने फ़रमाया, ऐसी जगह पर कोड़ा लटकाओ जहाँ से घर वालों को नज़र आ सके क्योंकि ये उनको अदब सिखाने का सबब है। (सिलसिला सहिहा, 1447)

सहाबा रज़ि. इस बात का बहुत ख़्याल रखते कि बच्चे इल्म और अदब सीखें और मुनकरात (गुनाह) से बाज़ रहें। अगर किसी को कोई नापसंदीदा अमल करते पाते तो उसको धमकाते, मारते और ऐसी मुनकरात चीज़ों को मिटा देते। बल्कि ये मुनकरात में डूबे लोगों की सोहबत, दोस्ती और पड़ोस को बुरा मानते और उनसे बचने की कोशिश करते।

इब्ने उमर रज़ि. जब अपने अहल में से किसी को देखते कि वो चौसर खेल रहा है, तो उसे मारते और चौसर को तोड़ देते। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 1273, सहीह)

आ़ईशा रज़ि. को ख़बर पहुँची कि एक घर वाले जो उनके घर में रहते हैं उनके पास चौसर *(Dice)* है। तो आपने उनकी तरफ़ पेग़ाम भेजा कि अगर तुमने इसको (चौसर) नहीं निकाला तो मैं तुम्हें ज़रूर-ज़रूर अपने घर से निकाल दूंगी और उनकी इस हरकत को नापसंद किया। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 1274, सहीह)

इस्लाम ने बीवी बच्चों के हक़ में नरमी बरतने का हुक्म दिया है लेकिन कभी इंसान अपनी तरबियत के लिए सख़्ती भी करता है। मगर कुछ शर्तों के साथ कि मार सख़्त ना होकर हल्की हो, मुँह पर ना मारा जाए और ऐसी मार ना हो जो चोट या नुक़सान पहुँचाए। घर के सरबराह का हिकमत से काम लेना ज़रूरी है। हर वक़्त की सख़्ती अच्छी नहीं होती और ना ही हर वक़्त की नरमी और प्यार मुहब्बत।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया, जब अल्लाह तआ़ला किसी घराने के लोगों से ख़ैर का इरादा फ़रमाता है तो उनमें नरमी पैदा फ़रमा देता है (मुसनद अहमद, शाकिर 24 308 सहीह)

बाप अपनी औलाद का निकाह करे अगर लड़का ग़रीब है और निकाह का ख़र्च नहीं उठा सकता। अल्लाह का फ़रमान है कि:

"*जिनके बच्चे हैं उनके ज़िम्मे उनका रोटी कपड़ा (ख़र्च) है जो मुताबिक़ दस्तूर के हों।*" (सूरह बकर 2/233)

रसूल ﷺ ने फ़रमाया, कि अपनी औलाद के अच्छे रिश्ते तलाश करो। (इब्ने अबी शैबा, 17710) अबी दाऊद की हदीस़ 2985 में भी इसी बात की तरग़ीब

दी गई है।

आज मुआ़शरे में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो लड़की के पैदा होने पर रंजीदा हो जाते हैं। इसकी एक वजह तो उम्मत मुस्लिमा में ग़ैर क़ौम की बुराई ने गहरा असर छोड़ा है और आज का मुसलमान लड़की वालों से भारी भरकम रक़म के जहेज़ का मुतालबा किया जाता है और अगर उनकी ये ख़्वाहिश उनकी मर्ज़ी के मुताबिक़ पूरी ना हो तो लड़की पर तरह-तरह के ज़ुल्म किए जाते हैं और उसकी जिंदगी को दूभर बना दिया जाता है। दूसरे हमारा मुआशरा लड़की होने से ख़ुश इसलिए भी नहीं होता कि वो एक वक़्त मुक़र्रर पर पराई हो जाएगी। इस तरह की सब बातें इस्लाम में मना हैं। इस्लाम ने जिस क़दर औरतों के हुक़ूक़ और उनके साथ हुसने सुलूक का हुक्म व तरग़ीब दी है ऐसा दुनिया के और किसी दीन या मज़हब में नहीं मिलता। उनके साथ हुसने सुलूक करने वालों के लिए बड़ा मक़ाम और अजर व सवाब की ख़ुशख़बरी दी गई है।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया, जिस शख़्स की तीन बेटियाँ हों और वो उनकी मुश्किलात, तकलीफें और ख़ुशियों पर सब्र शुक्र करे, अल्लाह उन बच्चों पर उसकी महरबानी के सबब उस शख़्स को जन्नत में अपने फ़ज़्ल से दाख़िल करेगा। किसी ने पूछा या रसूल ﷺ! अगर दो बेटियाँ हों तो? फ़रमाया तब भी यही हुक्म है। किसी ने पूछा या रसूल ﷺ! अगर किसी के एक बेटी हो तो? फ़रमाया तब भी यही हुक्म है। (मुसनद अहमद, 8406 शाकिर सहीह)

एक अहम हक़ जो औलाद का माँ बाप पर आता है और जिसको अदा करते हुए ना जाने कितने मुसलमान ज़ुल्म करते हैं वो है औलाद के दरमियान बराबरी का सुलूक और अ़द्ल का मामला करना। हमारे मुआशरे में तो अक्सर लोग मीरास के हक़ में इतना ज़ुल्म व ज़्यादती करते हैं कि लड़की को तो इससे महरूम ही कर दिया जाता है और लड़कों के साथ भी बराबरी का सुलूक नहीं करते। अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है कि

"तुम्हें नहीं मालूम कि इनमें से कौन तुम्हें नफ़ा पहुंचाने में ज़्यादा क़रीब है।" (सूरह निसा, 4/11)

ये तम्बीह है ऐसे लोगों के लिए। यानी तुम अपनी समझ के मुताबिक़ विरासत तक़सीम मत करो, बल्कि अल्लाह के हुक्म के मुताबिक़ जिसका

जितना हिस्सा मुकर्रर कर दिया गया है वो उनको दो।

नुअ़मान रज़ि. से मरवी है कि मेरे वालिद मुझे लेकर रसूल ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर हुए। अ़र्ज़ किया या रसूलुल्लाह ﷺ आप इस बात पर गवाह बन जाएँ कि मैंने नुअ़मान को फलां चीज़ बख़्श दी। रसूल ﷺ ने उनसे फ़रमाया क्या तुमने अपने सारे बेटों को भी दे दिया है, जैसे इसे दिया है? उन्होंने कहा नहीं, तो (रसूल ﷺ ने) कहा फिर किसी और को गवाह बना लो। थोड़ी देर बाद फ़रमाया, क्या तुम्हें ये बात अच्छी नहीं लगती कि हुसने सुलूक में ये सब तुम्हारे साथ बराबर हों? उन्होंने कहा, क्यों नहीं। (रसूल ﷺ ने फ़रमाया) वो इस तरह होगा। (मुसनद अहमद, शाकिर 18282, सहीह)

तुम्हें नहीं मालूम कि तुम्हारी औलाद में से कौन तुम्हारे साथ ज़्यादा हुसने सुलूक करेगा और कौन कम करेगा। इस मफ़हूम का अल्लाह का फ़रमान ऊपर बयान हुआ और इस हदीस़ में बयान कर दिया गया कि अगर इंसान अपनी औलाद के साथ बराबरी और इंसाफ के साथ अ़द्ल का मामला नहीं करता तो ये नामुमकिन है कि वो सब औलाद माँ बाप का पूरा एहतराम करें। और अक्सर होता भी यही है कि जिस औलाद के साथ ज़ुल्म किया जाता है उससे माँ बाप के ताल्लुकात बड़े कशीदा (तनाव पूर्ण) रहते हैं और वो अपने माँ बाप के साथ हमदर्दी और इज़्ज़त के साथ हुसने सुलूक नहीं करते। माँ बाप को चाहिए कि वो अपनी औलाद और दूसरे हकदारों के साथ अ़द्ल का मामला रखें और शरिअ़त में मुक़र्रर अहकाम के मुताबिक़ उनसे अ़द्ल करें। ऐसा ना करना हराम है जैसा कि उल्माए दीन ने फ़रमाया क्योंकि दूसरी सहीह अहादीस़ में आया है कि रसूल ﷺ ने इसको वापस लेने या अल्लाह से डरो और अपनी औलाद में अ़द्ल करो या फ़रमाया कि मैं ज़ुल्म पर गवाह नहीं बनता।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया जो लोग इंसाफ़ करते हैं वो अल्लाह के पास मिम्बरों पर होंगे (सहीह मुस्लिम, किताब इमारत) और फ़रमाया जो शख़्स किसी मुसलमान का हक़ मार ले क़सम खाकर तो अल्लाह ने उसके लिए वाजिब कर दिया जहन्नम को और हराम कर दिया जन्नत को। एक शख़्स बोला या रसूलुल्लाह ﷺ अगर वो ज़रा सी चीज़ हो? आपने फ़रमाया, अगरचे एक

टहनी हो पीलू की (सहीह मुस्लिम, किताब ईमान)

हद्या *(Gift)* देने में कोई शरअ़ी उज़्र के होते किसी एक वारिस को दूसरे पर तरजीह दी जा सकती है जैसे कोई एक माज़ूर, बीमार, इल्म हासिल करने में मशगूल या बड़े ख़ानदान *(Family)* के ख़र्च चलाना वग़ैरह। (फ़तवा लजना अल दाइमा, 16/193) ये अहकाम नफ़क़ा (ख़र्च) ग़ैर वाजिब के लिए हैं जबकि नफ़क़ा वाजिब (मीरास वग़ैरह) हक़ के मुताबिक़ दिया जाएगा। जैसे ये वाजिब नहीं कि हर बच्चे की शादी वग़ैरह के लिए बराबर का ख़र्च किया जाए। किसी नाबालिग़ बच्चे के लिए वसीयत करना कि ये माल उसकी शादी के लिए है जैसा बालिग़ बच्चे के निकाह पर ख़र्च किया गया, जो मेरी वफ़ात के बाद किया जाएगा तो ये जायज़ नहीं। (फ़तवा इस्लामिया, उसै़मीन) बीवी बच्चों का ख़र्च उठाना बाप पर वाजिब है।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया पहले उन लोगों का ख़र्च दे जिसका निगहबान है। बीवी कहती है मुझको ख़र्च दे नहीं तो तलाक़ दे दे, नौकर कहता है पेट को रोटी दो मुझसे काम कराओ, बेटा कहता है अब्बू मुझको खाने को दो तुम मुझको किस पर छोड़े जाते हो। (सहीह बुख़ारी किताब नफ़क़ात) रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि किसी शख़्स के गुनाहगार होने के लिए यही काफ़ी है कि वो अपनी या अपने मातहत लोगों की रोज़ी को ज़ाए करे। (सुनन अबी दाऊद, 1692 सहीह) एक तंदरुस्त और इस्तिताअ़त रखने वाले बाप को अपने मातहत लोगों का ख़र्च ना उठाना गुनाह है।

आख़िर में एक बुराई जो मुसलमानों में भी जड़ें जमाती जा रही है ये है कि एक शख़्स बे औलाद होते हुए या औलाद होते हुए भी किसी दूसरे शख़्स का बच्चा गोद ले लेता है और उसको सरकारी तौर पर अपनी औलाद भी मुक़र्रर कर लेता है। इस्लाम में नसब बदलना कुफ्र है और इस पर लानत की गई है। इसको मीरास का हक़ नहीं क्योंकि ये उस शख़्स के नसब से नहीं होता। ऐसा करना गुनाहे कबीर है।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया कुफ्र है ऐसे नसब का दावा करना जिसको आदमी नहीं पहचानता। (सुनन इब्ने माजा, 2744, सहीह)

बहन भाई के हुक़ूक़

बहन और भाई के रिश्ते तीन तरह के हो सकते हैं। एक माँ और बाप एक, दूसरा बाप एक माँ अलग और तीसरा बाप अलग माँ एक। एक और क़िस्म भी इन रिश्तों की हो सकती है जो रजाअ़त से साबित होती है।

अ़ाईशा रज़ि॰ से मरवी है कि नबी ﷺ ने फ़रमाया जो रिश्ते नसब की वजह से महरम हैं वही रिश्ते रज़ाअ़त की वजह से भी महरम हैं। (सुनन अबी दाऊद, 2055, सहीह)

रज़ाअ़त से महरम का रिश्ता तो क़ायम हो जाता है मगर उसे मीरास का हक़ नहीं पहुंचता। ऐसे ही पालक बच्चों *(Adopted Child)* को भी मीरास का कोई हक़ नहीं।

सगे भाई बहन *(Full siblings)* की मौजूदगी में सौतेले भाई बहन बाप या माँ की तरफ़ से *(Half siblings)* को मीरास नहीं मिलती। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2095 सहीह) और जैसा उल्माए दीन ने बयान फ़रमाया है।

हुसने सुलूक ने फ़रमाया देने वाले का हाथ ऊपर है और शुरू कर उनसे जिनका ज़िम्मा तुम पर है। तेरी माँ, तेरा बाप, तेरी बहन, तेरा भाई और फिर दूसरा क़रीबी रिश्तेदार फिर दूसरा (दर्जा बा दर्जा) (सुनन निसाई, 2533, सहीह)

इस हदीस़ से मालूम चलता है कि बहन का हक़ भाई से ज़्यादा है। और अगर बाप ग़रीब या फ़ौत हो गया हो तो फिर नाबालिग़ भाई बहनों के ख़र्च का ज़िम्मा बड़े बालिग़ भाईयों पर वाजिब हो जाता है।

अनस रज़ि॰ से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, जिसकी दो बहनें या दो बेटियाँ हों और वो जब तक उसके साथ रहें, वो उनसे हुसने सुलूक से पेश आए, तो मैं और वो जन्नत में इस तरह होंगे। फिर आपने अपनी दो अंगुलियों को मिलाया। (सिलसिला सहीहा, 1026)

सुबहान अल्लाह इस्लाम कितना प्यारा दीन है। जिसको इंसान बोझ समझता और जिनके पैदा होने पर उसका चेहरा ग़म से काला हो जाता उन्हीं के साथ हुसने सुलूक करने से जन्नत में हमारे महबूब नबी ﷺ के साथ की

ख़ुशख़बरी। अगर दीने इस्लाम के बताए गए इस हुसने अख़लाक को हर इंसान अपने गले लगा ले तो बेशुमार बेगुनाह और मासूम बहनों की जिंदगी सुधर जाए और वो हर दिन अपने ऊपर होने वाले ज़ुल्म और ज्याद्‌तियों से निजात पा लें। अगर अल्लाह तआ़ला माँ बाप के हक़ में बेटियों का फ़ैसला कर दे तो उसमें अपनी ख़ुश नसीबी समझें और उनकी तालीम व तरबियत *(Teaching)* पर पूरी तवज्जो दे। सहाबी रज़ि. ने इस्लाम को समझा उसे तसलीम किया और उसमें पूरे मुकम्मल दाख़िल होकर अपनी हर सांस, हर क़दम और हर अमल को रसूलुल्लाह ﷺ की सुन्नत की इत्तिबा *(Obediency)* में पूरा किया। यही वजह है कि अल्लाह ने उनको दुनिया का ख़लीफ़ा बनाया, बेशुमार माल दौलत अता किया और उनसे राज़ी होकर जन्नत की बशारतें यहीं उनकी जिंदगी में अपनी किताब क़ुरआन और प्यारे नबी ﷺ की जुबान मुबारक से करा दी। आजकल के मुसलमानों की तरह नहीं कि हर तरह से ग़म व ख़ौफ़ में परेशान, बेटी बहन से मायूस और दुनिया का थोड़ा सा माल कमाने में दिन-रात घुले जाते और दीन से बेरग़बती इख़्तियार किए रहते हैं।

जाबिर रज़ि. की हदीस़ पहले बयान हो चुकी। उनके वालिद शहीद हो गए और पीछे छोटी कई लड़कियाँ छोड़ गए जिनकी देख-रेख का ज़िम्मा जाबिर रज़ि. पर आ गया। जाबिर रज़ि. ने एक औरत से शादी की जिनकी पहले शादी हो चुकी थी (शौहर की मौत या तलाक़ शुदा)। रसूलुल्लाह ﷺ को मालूम चला तो दरयाफ़्त किया कि ए जाबिर! तूने शादी की है? कुंवारी से या बेवा से? जाबिर रज़ि. ने अर्ज़ किया बेवा से और उसकी वजह भी बताई कि ताकि वो मेरी छोटी बहनों की देखभाल करे और उनका ख़्याल रखे, अगर कुंवारी से करता तो उन्हीं की तरह उनसे खेल में मस्त रहती। आख़िर जाबिर रज़ि. भी हम उम्र कुंवारी से शादी करने की तमन्ना रखते होंगे जैसा कि हर शख़्स की होती है, मगर अपनी ख़्वाहिश नफ़्स को दबा दिया और अपनी बहनों की देखभाल और तरबियत को तरजीह दी। जो एक निगहबान होने के नाते बहनों का उन पर हक़ था और नबी ﷺ की हुसने सुलूक करने की नसीहत और उसकी इत्तबा।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि किसी आदमी का इकराम इस वजह से करना ज़्यादा हक़ बनता है कि उसकी बेटी या बहन की वजह से उसका इकराम किया जाए। (मुसनद अहमद, 6709, सहीह हसन शौएब)

यानी शादी के बाद बेटी या बहन का अपने बाप या भाइयों पर ये भी एक हक़ बनता है कि उसके ससुराल वालों का इकराम किया जाए। इससे उसकी ससुराल में इज़्ज़त और हमदर्दी में इज़ाफ़ा होगा और उसके साथ ससुराली ताल्लुक़ात में नरमी आएगी। आज का मुआशरा ही बदलता जा रहा है जिसमें लड़की के मायके वालों (भाई बहन वग़ैरह) की तरफ़ से इकराम या एहतिराम बेटी या बहन के शौहर तक ही महदूद होकर रह जाता है। और उसके दूसरे ससुराली रिश्तों से बेरुख़ी इख़्तियार कर ली जाती है।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि जन्नती लोग तीन तरह के हैं (जिनमें एक) हर वो शख़्स जो क़रीबी रिश्तेदार और मुसलमान के हक़ में नरम दिल और रहम दिल हो। (सिलसिला सहिहा, 3599)

अगर शादी के बाद बेटी या बहन पर कोई मुसीबत आ पड़े तो उसकी मदद करने की भी बड़ी फ़ज़ीलत है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया मिस्कीन और बेवाओं के लिए कोशिश करने वाला (मदद) दर्जे में मुजाहिद फ़ी सबील अल्लाह के बराबर है या उस शख़्स के बराबर जो (हर) दिन को रोज़ा और (हर) रात को इबादत में खड़ा रहता है। (सहीह बुख़ारी किताब अदब)

सूरह नूर आयत 24/61 में फ़रमाया गया है कि किसी शख़्स पर इसमें कोई हर्ज़ नहीं कि वो अपने भाई या अपनी बहन के घर से बिना इजाज़त खाए। यानी एक-दूसरे पर इतना हक़ है कि वो एक-दूसरे के घर से दस्तूर के मुवाफ़िक़ आम खाने-पीने की चीज़ खा सकता है।

बड़े भाइयों और बुजुर्गों का इकराम और एहतिराम करने की तरग़ीब (प्रेरणा) दी गई है। चाहे उनका ख़र्चा, देखभाल, अदब व अहतराम सबमें ये वाजिब है। इब्ने उमर रज़ि. से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, जिबरील अलै. ने मुझे हुक्म दिया है कि मैं बड़ों को मुक़द्दम रखूं (यानी उनको तरजीह दूं) (सिलसिला सहिहा, 1555)

अनस रज़ि. से मरवी है कि नबी ﷺ के ज़माने में दो भाई थे उनमें से एक

नबी ﷺ के पास आता रहता था (आपकी हदीस़ सुनता और मजलिस में हाज़िर होता) जबकि दूसरा भाई कमाई करता था। कमाई करने वाला भाई नबी ﷺ के पास आया और कहा, ऐ अल्लाह के रसूलुल्लाह ﷺ! ये मेरा भाई मेरी कोई मदद नहीं करता। आप ﷺ ने फ़रमाया, शायद तुझे इसकी वजह से रिज़्क दिया जाता है।

इंसान को चाहिए कि अपने मातहत लोगों की यानी माँ बाप बीवी औलाद और बहनों का ख़र्चा उठाने को बोझ महसूस ना करे। ना जाने अल्लाह किसकी बरकत से रिज़्क़ में बरकत देता है। दूसरे अल्लाह किसी नफ़्स पर उसकी इस्तिताअ़त *(Capacity)* से ज़्यादा बोझ नहीं डालता। जब उसकी इस्तिताअ़त थी तभी तो अल्लाह ने उसके छोटे भाई बहन और दिगर अहल की ज़िम्मेदारी उस पर डाली है।

हकीम बिन क़ैस बिन हाकिम रह. बयान करते हैं कि उनके वालिद ने अपनी मौत के वक़्त अपने बेटों को वसीयत की और फ़रमाया, तुम अल्लाह से डरते रहना और अपने बड़े को सरदार बनाना। क़ौम जब अपने बड़े को सरदार बनाती है तो अपने आबा *(Elder Generation)* की जानशीन बनती है और जब अपने छोटे को सरदार बनाती है तो ये चीज़ उन्हें अपने साथी लोगों की नजरों में ज़लील कर देती है। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 361 सहीह)

सल्फ़े उम्मत की अपनी औलाद को वसीयतें भी अनमोल मोती हैं। इसकी एक मिसाल इसमें भी बयान हुई है। हकीम को की गई वसीयत में अव्वलियत और तरजीह ख़ौफ़े इलाही को दी गई है जो हुसने सुलूक ही नहीं बल्कि हर हराम, मुनकरात और बुराइयों से बचने और अमले सालेह व नेकियों में सबक़त करने के लिए किसी शख़्स को हर लम्हा उकसाती रहती हैं। ये सब गुज़रे ज़माने की बातें हो गईं। अब तो माँ बाप की हर साँस यही कोशिश और जद्दो जहद रहती है कि दुनिया को तरजीह देते हुए दुनियावी तालीम और माल कमाई के लिए बच्चों को कैसे कामयाब करें। दीन का इल्म, शरियत की जानकारी और अदब व तहज़ीब की तरबियत तो भूलते ही जा रहे हैं। इसके बाद बड़े भाई या बड़ों की इज़्ज़त व इकराम पर माल को फ़ौक़ियत *(Priority)* दी गई है।

बादशाह ने तीन लोगों को क़त्ल करने का हुक्म दिया। वो देखता है कि एक औरत रोती पीटती है। उसने पूछा ये क्या है? वो कहने लगी ये मेरा बेटा है ये मेरा भाई और ये मेरा शौहर है। उसने कहा इनमें से एक को मुंतख़ब (चुन ले) कर ले मैं उसे तेरी ख़ातिर छोड़ दूंगा। उसने कहा इस जैसा शौहर भी मिल सकता है, इस जैसा बेटा भी मिल सकता है और भाई का कोई बदल नहीं। उसने इस बात पर खुश होते हुए तीनों को छोड़ दिया। (अल बिदाया वन्निहाया, वाक़्या हिजरी 624)

इब्ने उमर रज़ि. से मरवी है कि जो शख्स अपने रब से डरे और सिला रहमी करे उसकी उम्र दराज़ कर दी जाती है, उसके माल में इज़ाफा होता है और उसके अहल उससे मुहब्बत करते हैं। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद़, 59, सहीह)

ख़ाला फूफी के हुक़ूक़

माँ की बहन ख़ाला, बाप की बहन फूफी, बाप का भाई चाचा ताऊ और माँ का भाई मामा ये सब रिश्ते अर-हाम में आते हैं। ये सब माँ और बाप के ख़ून से जुड़े रिश्ते हैं। इनके साथ हुसने सुलूक की बड़ी तरग़ीब की गई है और बहुत फ़ज़ीलत है। सि़ला रहमी एक ऐसा हुसने सुलूक है जो उम्र माल और आपसी मुहब्बत में इज़ाफ़ा का सबब बनती है। जैसा कि ऊपर हदीस़ बयान हुई है। दूसरी रिवायतों में इसके और भी फ़ायदे बयान हुए हैं जैसे मौत की सख़्ती से बचाव, मुसीबत का टल जाना, गुनाह माफ़ और उनके हक़ में नरम दिल रखने से जन्नत की बशारत। खाला माँ की ग़ैर मौजूदगी में उस का मक़ाम रखती है।

अली रज़ि. ज़ैद रज़ि. और जाफ़र रज़ि. हमज़ा रज़ि. की साहिब ज़ादी (बेटी) की परवरिश के लिए झगड़ने लगे। अली रज़ि. ने कहा मेरी चाचा ज़ाद बहन है, जाफ़र रज़ि. ने कहा मेरी भी चाचा ज़ाद बहन है और उसकी ख़ाला मेरे निकाह में है। ज़ैद रज़ि. ने कहा मेरी भतीजी है। रसूलुल्लाह ﷺ ने उसे उसकी ख़ाला के हवाले किया और फ़रमाया ख़ाला माँ की तरह है। (सुनन अबी दाऊद, बुख़ारी किताब सुलह)

रसूलुल्लाह ﷺ ने बच्ची की परवरिश की ज़िम्मेदारी उसकी ख़ाला को दी और फ़रमाया कि ख़ाला का मक़ाम माँ के बराबर है। इससे ख़ाला के रिश्ते और उसके साथ हुसने सुलूक की फ़ज़ीलत मालूम चलती है।

एक शख़्स ने नबी ﷺ की ख़िदमत में हाज़िर होकर अ़र्ज़ किया, या रसूलुल्लाह ﷺ मुझसे एक बहुत बड़ा गुनाह हो गया। क्या मेरे लिए तौबा की कोई सूरत है? रसूलुल्लाह ﷺ ने ख़ाला के बारे में पूछा उसने कहा वो हैं। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जाओ उनसे हुसने सुलूक करो। (जामेअ़ तिरमीज़ी 1904 सहीह)

जाबिर रज़ि. की हदीस़ ऊपर बयान हुई जिसमें उन्होंने अपनी छोटी बहनों की परवरिश को तरजीह दी। कुछ रिवायात में बयान हुआ है कि उनमें उनकी कुंवारी फूफियाँ भी शामिल थीं जिनकी परवरिश की उन्हें फ़िक्र रही।

जब ये आयत नाज़िल हुई *"अपने करीबी रिश्तेदारों को डराओ"* (26/214) तो रसूलुल्लाह ﷺ ने अपने क़रीबी रिश्तेदारों को फ़रमाया, ऐ कुरैश के लोगों! तुम अपनी जानों को अल्लाह से मोल लो (नेक आमाल के बदले) मैं अल्लाह के सामने तुम्हारे कुछ काम नहीं आ सकता। ऐ अब्दुल मुत्तलिब के बेटों मैं तुम्हारे कुछ काम नहीं आ सकता अल्लाह के सामने, ए अब्बास बेटे अब्दुल मुत्तलिब के, मैं तुम्हारे कुछ काम नहीं आ सकता अल्लाह के सामने। ऐ सफ़िय्या फूफी रसूलुल्लाह ﷺ की, मैं तुम्हारे कुछ काम नहीं आ सकता अल्लाह के सामने। ऐ फातिमा बेटी मौहम्मद की तू मेरे माल में से जो चाहे माँग ले पर ख़ुदा के सामने मैं तेरे कुछ काम नहीं आ सकता। (सहीह मुस्लिम, किताब ईमान)

रसूलुल्लाह ﷺ ने सबसे पहले जिन क़रीबी रिश्तेदारों को दावत दी उनमें आपके दिल का टुकड़ा और महबूब फ़ातिमा रज़ि. के साथ अपनी फूफी सफ़या और चाचा अब्बास रज़ि. भी शामिल किए। जिससे दूसरे रिश्तों पर उनकी फ़ज़ीलत ज़ाहिर होती है।

चाचा ताऊ और मामा के हुक़ूक़

ये सब अर–हाम क़रीबी रिश्तों में शामिल हैं। इनसे सिला रहमी और अदब व एहतिराम की बड़ी फ़ज़ीलत यानी महत्ता है।

अबू बुरदा रज़ि. कहते हैं कि मैं मदीना मुनव्वरा आया। इब्ने ड़मर रज़ि. मेरे पास आए और पूछा, क्या आप जानते हैं कि मैं आपके पास क्यों आया हूँ? मैंने कहा नहीं! उन्होंने कहा, मैंने रसूलुल्लाह ﷺ को ये कहते हुए सुना है कि जो अपने फ़ौतशुदा बाप से हुसने सुलूक करना चाहता है वो उसके बाद उसके भाइयों से सिला रहमी करे। मेरे बाप उमर रज़ि. और तेरे बाप के बीच भाई चारा और मुहब्बत थी। मैंने चाहा कि इसका तक़ाज़ा पूरा कर दूं। (सिलसिला सहिहा, 1432)

रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान कि अपने बाप के भाइयों से सिला रहमी करो और सहाबी इब्ने उमर रज़ि. का जज़बए इत्तिबाए रसूल ﷺ कि बाप के दोस्त से हुसने सुलूक और मुलाक़ात को कई सौ किमी का सहरा *(Desert)* का सफ़र उस ज़माने में जब रेल बस या दूसरे असबाब (साधन) मुहैया ना थे।

एक बार इब्ने उमर रज़ि. की सफ़र में एक शख़्स से मुलाकात हुई, उसको सलाम किया, उसे अपने गधे पर बिठाया और अपनी पगड़ी दे दी। कुछ लोगों ने इस पर एतराज़ किया कि आप ख़ुद पैदल और बिना पगड़ी के और इस बद्दू को गधे पर सवार कर दिया और सिर पर पगड़ी रख दी। इब्ने उमर रज़ि. ने कहा ये बद्दू मेरे बाप उमर रज़ि. का दोस्त था और मैंने रसूलुल्लाह ﷺ से सुना है कि सबसे बड़ी नेकी ये है कि आदमी अपने बाप के दोस्तों के साथ नेकी करे। जब बाप के दोस्त का ये मक़ाम हो तो बाप के भाइयों का क्या दर्जा होगा?

रसूलुल्लाह ﷺ का अपने चाचा अब्बास रज़ि.के बारे में ग़ज़वा बदर में ग़मगीन होना, उनका सूद माफ़ करना, उनके और उनकी औलाद के लिए दुआ बख़्शीश करना (जामेअ़ तिरमीज़ी, 3762) अहादीस़ में मौजूद है। इसी तरह आपका अपने चाचा अबू तालिब के बारे में फ़िक्रमंद रहना कि चाचा एक बार ''ला इलाहा इल्लल्लाह'' कह दें ताकि मैं उनके लिए सिफ़ारिश कर सकूं और

अल्लाह तआ़ला उनको जहन्नम की आग से बचा ले।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि चाचा बाप के समान है। (जामेअ़ तिरमीज़ी, 3760) माँ के बहन भाई से भी सिला रहमी और हुसने सुलूक का हुक्म है।

मुआ़शरा और उसके हुक़ूक़

अल्लाह सुबह़ानहू व तआ़ला ने अपनी किताब अल क़ुरआन में फ़रमाया:

"ए लोगों हमने तुम सबको एक मर्द और औरत से पैदा किया है। और इसलिए कि तुम आपस में एक-दूसरे को पहचानो कुनबे (Nations) और क़बीले (Tribes) बना दिए हैं। अल्लाह के नज़दीक तुम सब में बाइज़्ज़त वो है जो सबसे ज़्यादा डरने वाला है। यक़ीन मानो कि अल्लाह दाना (इल्म वाला) और बाख़बर है।" (सूरह हुजुरात, 49/13)

दुनिया के तमाम इंसान एक ही माँ बाप (आदम और हव्वा) की नस्ल से पैदा हुए हैं। सब बराबर हैं इंसानियत के लिहाज़ से पैदायश और मौत, खाना पीना, सोना जागना और सब इसी मिट्टी से पैदा होते हैं, ज़मीन की पैदावार ही उन सबका ज़रिया हयात है और आख़िर में इसी में सबको समा जाना है। किसी इंसान को पैदायशी तौर पर एक-दूसरे पर कोई फ़ज़ीलत *(Superiority)* नहीं, अगर है तो उनके किरदार *(Character)* और उनके आमाल *(Deeds)* के मुताबिक़, वो कैसे हैं।

ज़मीन वसीअ़ है इसमें मुख़्तलिफ़ क़ौम *(Nations)* और *(Tribes)* बसते हैं। किसी इंसान की इस्तिताअ़त नहीं कि वो पूरी इंसानियत के हुक़ूक़ का ख़्याल रख सके इसलिए हमारे ख़ालिक़ *(Creator)* ने इंसानों को कुन्बों क़ौम *(Nations)* क़बीलों और खानदानों *(Family)* में तक़सीम कर दिया ताकि वो एक-दूसरे को उनके साथ क़रीबी रिश्तों से पहचानें, उनके साथ हुसने सुलूक करें जिससे एक ऐसा मुआशरा *(Society)* वजूद में आए जिसमें सब वक़ार *(Dignity)* इज़्ज़त व एह़तिराम के साथ रह सकें और किसी पर कोई जुल्म व ज़्यादती भी ना हो।

अल्लाह ऐसा है जिसने तुमको ज़मीन में ख़लीफ़ा बनाया *(Inheritors)* और एक-दूसरे पर रुतबा *(Rank)* बढ़ाया ताकि तुमको आज़माए उन चीज़ों में जो तुमको दीं। (सूरह आराफ़, 6/165)

अल्लाह ने सब इंसानों को एक सी सलाहियतें और निअ़मतें अता नहीं की मगर उनमें अलग-अलग दर्जे बना दिए। कोई अमीर है तो कोई ग़रीब, कोई आलिम है तो कोई अनपढ़, कोई डॉक्टर है तो कोई इंजीनियर और कोई मालिक हाकिम है तो कोई उसका नौकर वग़ैरह। इसका भी कोई मक़सद रहा होगा कि सब इंसानों को यकसां और बराबर क्यों नहीं बनाया।

"हमने ही उनकी ज़िंदगानी दुनिया की रोज़ी उनमें तक़सीम की है और एक को दूसरे से बुलंद (Superiority) किया है ताकि एक-दूसरे को मातहत (Command work) कर ले।" (सूरह ज़ुख़रूफ़, 43/32)

अक़्ल फ़हम, माल दौलत, मंसब व ओहदा वग़ैरह में ये दर्जे व फ़र्क़ इसलिए रखा है कि ज़्यादा माल वाला कम माल वाले से, बड़े ओहदे वाला अपने मातहत वालों से और ज़्यादा इल्म रखने वाला कम इल्म वाले से काम ले सके, जिससे इस कायनात (संसार) का काम बख़ूबी चलता रहे। अगर सब इल्म, माल, ओहदा और पेशे से बराबर होते तो कौन किससे काम लेता? मिसाल के तौर पर अगर सब आलिम हो जाएँ तो वो अपने इल्म से किसे फ़ायदा पहुंचाएंगे, सब इंजीनियर हो जाते तो तकनीशियन और मज़दूर का काम कौन करता और अगर सब अमीर हो जाते तो उस माल का फ़ायदा कैसे उठाते।

इसके अलावा बतौर इंसानियत सब बराबर हैं, कोई बड़ा छोटा, ऊँचा नीचा, सफ़ेद काला वग़ैरह नहीं। अगर कोई इंसान किसी दूसरे इंसान पर बरतरी रखता है तो वो उसके तक़वा, किरदार, हुसने सुलूक और अख़लाक़ की वजह से हो सकती है। सबसे अफ़ज़ल इंसान वो है जो अपने रब से ज़्यादा डरता है और जिसका अख़लाक़ उम्दा हो। यानी उसे ये ख़ौफ़ हो कि अगर मैं किसी पर कोई किसी भी तरह का जुल्म करूंगा तो मेरा रब सब देख रहा है मुझे पकड़ेगा और सख़्त सज़ा देगा तो इस डर से वो बुराई और जुल्म से बाज़ रहेगा। और उसको ये भी मालूम है कि अगर मैं उससे डर कर उसके अहकाम

को मानते हुए नेक सालेह आमाल और नेकियाँ करूंगा तो मुझसे ख़ुश होकर इनामात देगा और उसे जन्नत की उम्मीद रहेगी तो वो मुआ़शरे की भलाई और हमदर्दी में दिन-रात अपना वक़्त लगाता रहेगा।

अपने नसब ख़ानदान या किसी और ख़ुसूसियात की वजह से इंसान का ख़ुद पर फ़ख़्र करना और दूसरे इंसान को कमतर मानना जाहिलियत *(Ignorance)* की रस्म रिवाज है। इस्लाम में इससे सख़्ती से मना किया गया है। इब्ने उमर रज़ि. से मरवी है कि एक आदमी नबी ﷺ के पास आया और कहा कि ए अल्लाह के रसूल, कौन से लोग अल्लाह को ज़्यादा महबूब हैं? और कौन से आमाल अल्लाह को ज़्यादा पसंद है? रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, वो लोग अल्लाह को ज़्यादा महबूब हैं जो दूसरे लोगों के लिए ज़्यादा फ़ायदेमंद हों। और अल्लाह तआ़ला के यहाँ सबसे ज़्यादा पसंदीदा आमाल ये हैं कि मुसलमान को अपने भाई को ख़ुश रखना, उससे कोई तकलीफ़ दूर करना, उसका कर्ज़ चुकाना और उसे खाना खिलाना। मुझे किसी भाई की ज़रूरत पूरा करने के लिए उसके साथ चलना इस मस्जिद नबवी में एक महीना एतकाफ़ करने से ज़्यादा महबूब है। जिसने अपने गुस्सा को रोक लिया अल्लाह उसकी ख़ामियों पर पर्दा डालेगा। जो शख़्स अपने गुस्सा को नाफ़िज़ (लागू) करने की इस्तिताअ़त (ताक़त) रखने के बावजूद पी गया, अल्लाह तआ़ला रोज़ क़यामत उसके दिल को उम्मीदों से भर देगा जो अपने भाई के साथ उसकी ज़रूरत पूरी करने को चला, अल्लाह तआ़ला उसको उस दिन साबित क़दम रखेगा जिस दिन क़दम डगमगा जाएंगे। और बुरा अख़लाक़ आमाल को यों तबाह करता है जैसे सिरका शहद को बिगाड़ देता है। (सिलसिला सहिहा, 906)

इस एक हदीस़ पर ही ग़ौर कर लीजिए और देखिए इस्लाम क्या चाहता है इंसान से और कैसे मुआशरा क़ायम होगा अगर आदमी इन अनमोल तालीमात पर अमल कर ले। ये एक छोटी सी मिसाल है इस्लाम में मुआशरे के लिए ही बेशुमार हिदायात का ज़ख़ीरा भरा पड़ा है। यहाँ तो सिर्फ आठ नेक आमाल का ही जिक्र है। जिनका ताल्लुक इंसान के हुक़ूक़ से है। ये किसी शख़्स की ख़ुश नसीबी होगी कि दूसरों के दुःखों में शरीक हो, दूसरों का सहारा बने और अपने

साथ ज़ुल्म की सूरत में सब्र करे। पाठकों से अर्ज़ है कि इस्लाम को जानने और समझने के लिए खुले दिल दिमाग़ से क़ुरआन और सुन्नत नबी को जानें जिसके लिए सिर्फ़ सहीह अहादीस़ का सहारा लेना होगा। आज के दौर के मुसलमानों पर नज़र ना डालें जो दुनियां में रीझ कर दीन से दूर होते जा रहे हैं। और अगर इस्लाम को उसके मानने वालों से ही पहचानना मतलब हो तो उस सुनहरे दौर को देख लीजिए। जिसमें हमारे उस्वतुन हसना मुहम्मद ﷺ उनके असहाब रज़ि. अजमओ़ीन और दूसरे सलफ़े सालेहीन का दौर। जब अल्लाह ने अपनी इत्तबा (पैरवी) करने वालों को दुनिया की निअ़मतों से नवाज़ा और आख़िरत की कामयाबी व फ़लाह पाने वाले नेक आमाल कराए। अल्लाह उन्हें जन्नत में आला मकाम अता करे। आमीन

मुस्लिम मुआशरा बाहमी शफ़क़त, हम आहंगी, रहम और हमदर्दी का मुआशरा है। जिसमें कोई शख़्स मोमिन हो ही नहीं सकता जब तक कि वो दूसरों के लिए वो पसंद ना करे जो वो ख़ुद के लिए पसंद करता हो। बहुत रहम करने वाला अल्लाह उस शख्स पर रहम करता है जो दूसरों पर रहम करता है। मुस्लिम मुआशरा आपसी तआवुन और मदद का मुआशरा है। जो मुसलमान अपने भाई की तकलीफ़ को यहाँ दुनियां में दूर करता है तो अल्लाह तआ़ला उसकी तकलीफ़ को क़यामत में दूर करेगा जबकि सब नफ़्सा नफ़्सी के आलम में डूबे होंगे कि ना जाने हमारा हिसाब का क्या होगा? यहाँ जिसके नेक आमाल उसकी बुराइयों पर भारी पड़ेंगे वही कामयाब होगा।

रसूलुल्लाह ﷺ ने मदीना में एक पुर अमन मुआशरे की बुनियाद रखी जो मुसलमानों को एक साथ मिल-जुलकर रहने, ग़रीब की मदद करने और बीमार के पास जाने जैसे नेक आमाल के लिए मुफ़ीद (फ़ायदेमंद) साबित हुई। अगर किसी ग़रीब के पास खाने को ना होता और भूख लगी होती तो किसी के पेड़ से खजूर खा लेता। मदीना के रहने वाले (अंसारी) लोगों और मक्का से हिजरत करके गए (मुहाजिर) लोगों और दिगर क़बीलों के बीच आपसी भाईचारा क़ायम किया जो पहले एक-दूसरे के ख़ून के प्यासे रहते थे। यहाँ तक कि एक अंसारी भाईचारा की बुनियाद पर एक मुहाजिर को कहता कि आप मेरे माल को तक़सीम करके आधा ले लें और मैं अपनी एक बीवी

को तलाक़ देता हूँ तुम उससे निकाह कर लो। हिजरी 2 में ज़कात को फ़र्ज़ कर दिया गया जिससे ग़रीबों को बड़ी मदद मिली और अमीर ग़रीब के दरमियान फ़र्क़ को कम करना और बराबरी व आपसी भाईचारा कायम करने में मददगार हुई। मुहाजिर को हर चीज़ से मदद की और अपने माल दौलत फलों में शरीक किया यहाँ तक कि मुहाजिरों को ये एहसास होने लगा कि अपने इन नेक आमाल की वजह से अंसार ही सारा अजर सवाब ना ले लें।

रसूलुल्लाह ﷺ सबसे आला और अशरफ़ नसब (ऊंचा ख़ानदान) रखते थे, जिसकी तसदीक़ उनके दुश्मन भी देते थे। जब अबू सुफ़यान जो अभी मुसलमान नहीं हुए और नबी ﷺ के ख़िलाफ़ जंग व क़िताल करते थे, ने रोम के बादशाह के सामने गवाही दी कि उसकी क़ौम सबसे आला व अशरफ़ है उसका क़बीला भी सबसे अशरफ़ है और फिर उस क़बीले की शाख़ में जो सबसे अशरफ़ शाख़ है उससे उसका ताल्लुक़ है। रोम के बादशाह ने जब पूछा कि वो तुम्हें किस बात का हुक्म देता है तो अबू सुफ़यान ने बताया कि वो हमें हुक्म देता है कि हम अल्लाह वाहिद की इबादत करें और उसके साथ किसी को भी शरीक ना ठहराएँ, इससे मना करते हैं जिसकी हमारे आबा इबादत करते हैं, नामज़ पढ़ने, सदक़ा देने, इफ़्फ़त व असमत, *(Chastity)* अहदो पैमाने का पास करना और अमानत अदा करने का हुक्म देता है।

मुसलमानों पर जो मुसीबतें और तकलीफ़ें आ रही हैं वो सिर्फ़ इस वजह से हो रही हैं कि उन्होंने अल्लाह तआ़ला के फ़रामीन (हुक्मों) को तर्क कर दिया है। वो अल्लाह की मदद नहीं करते तो अल्लाह उनकी मदद क्यों करें। हालांकि मुसलमान मुसीबतों से गुज़र रहे हैं और एक बहुत बड़ा नुकसान उठा रहे हैं लेकिन यूरोप और दूसरे मुल्क अपने मुआशरे में जिस चीज़ का सामना कर रहे हैं वो इससे भी बदतर है। हाज़िर दौर में औरतों से मुताल्लिक़ मामलात ले लें। एक रिपोर्ट के मुताबिक़ 30 प्रतिशत औरतों को जिस्मानी तौर पर हरासां *(Sexual Harassment)* किया गया। स्पेन में 66 प्रतिशत जर्मनी में 68 प्रतिशत और फ्रांस में 30 प्रतिशत और स्वीडन में 81 प्रतिशत। 2017 में *UK* में मर्द की मर्द से और औरत की औरत से शादियां 3900 रही जो 2017 में होने वाली शादियों का 3 प्रतिशत है। ग़ैर शरअ़ी शादियों का *Percentage*

2008 में शुमाली यूरोप में 64 प्रतिशत मग़रिबी यूरोप में 42 प्रतिशत रहा और तेज़ी से बढ़ रहा है। और शादी करने वाले जोड़ों की तादाद तेज़ी से कम हो रही है। *UK* में 1972 में 4,26,000 शादियाँ हुईं और 2017 में 2,43,000 ही शादियाँ हुईं जबकि *UK* की आबादी 1972 में 5.6 करोड़ और 2017 में 6.5 करोड़ थी। अब आप अंदाजा लगा लें कि वो मुआशरा किधर जा रहा है।

हुसने अख़लाक़

उम्दा अख़लाक़ *(Manners)* सबसे बेहतरीन निअ़मत है जो अल्लाह अपने बंदे को अता करे। ये इंसान को ज़ीनत दार बना देती है। मीज़ान *(Balance)* में सबसे भारी और उसके लिए जन्नत का रास्ता आसान कर देती है।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि क़यामत के दिन मोमिन की मीज़ान में सबसे वज़नी हुसने अख़लाक़ है। (सुनन अबी दाऊद, 4799 सहीह)

अबू हुरैरा रज़ि. से रिवायत है कि रसूलुल्लाह ﷺ से पूछा गया कि अक्सर लोग किस चीज़ की वजह से जन्नत में जाएंगे? आपने फ़रमाया, तक़वा (अल्लाह से डरना) और हुसने अख़लाक़। (सुनन इब्ने माजा, 4246 सहीह)

और आप ﷺ ने फ़रमाया कि तुममें बेहतर वो लोग हैं जिनके अख़लाक़ अच्छे हैं। (सहीह मुस्लिम, किताब फ़ज़ीलतें)

हुसने अख़लाक़ अम्बिया की सिफ़त *(Quality)* है। हुसने अख़लाक़ ये है कि अच्छा सुलूक करना, किसी को तकलीफ़ ना देना, ख़ुश दिली से लोगों से मिलना, मुहब्बत रखना, गुस्सा को क़ाबू में रखना, नापसंद चीज़ पर सब्र करना, जुबान दराजी ना करना और मुसीबत व आज़माइश के अय्याम में बर्दाश्त और सब्र से काम लेना। हर इंसान जो अपने को मुसलमान होने का दावा करता है वो अपने हर अमल और काम में अपना नमूना *(Ideal)* हमारे महबूब नबी मुहम्मद ﷺ को बना ले और ये तभी मुमकिन है जब वो क़ुरआन को समझें और नबी की 23 साल की हयाते नबूवत से वाक़िफ़ हो और उस पर अमल करता हो। क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने फ़रमा दिया कि नबी ﷺ हमारे लिए उस्वतुन हसना हैं और एक बेहतरीन मिसाल हैं और आपका अख़लाक़

ऐन क़ुरआन के मुताबिक था यानी आप चलते फिरते क़ुरआन के एक बेहतरीन नमूना थे।

साद बिन हिशाम रज़ि. ने आ़ईशा रज़ि. से मालूम किया कि ए उम्मुल मोमीनीन मुझे रसूलुल्लाह ﷺ के अख़लाक़ के बारे में बताएं। उन्होंने फ़रमाया "क्या आप क़ुरआन नहीं पढ़ते? क्योंकि रसूलुल्लाह ﷺ के अख़लाक़ क़ुरआन के मुताबिक़ थे" (अबूदाऊद, 1342 सहीह) इसकी तसदीक़ अल्लाह के नाज़िल कर्दा आयत क़ुरआन से भी होती है जिसमें फ़रमाया गया है कि *"और बेशक तू बहुत बड़े अख़लाक़ पर है।* (68/4)" यानी नबी ﷺ उस अख़लाक़ पर हैं जिसका हुक्म अल्लाह ने क़ुरआन में या दीने इस्लाम में दिया है। आप नबुव्वत से पहले भी मुमताज़ थे और नबुव्वत के बाद उसमें और बुलंदी और इज़ाफ़ा हुआ। जिसकी तारीफ़ और तसदीक़ आपके दुश्मनों ने भी की है जैसा अबू सुफ़ियान के बारे में पहले बयान हुआ। आपके अख़लाक़ की चंद मिसालों पर ग़ौर कीजिए और अपने अख़लाक़ को तकमील (पूर्णता) तक पहुंचाने के लिए इन्हें और क़ुरआन के फ़रामीन को अपनी जिंदगी में उतारने की कोशिश में अपनी सलाहियतें और वक़्त लगाएं।

- नबी ﷺ मेलजोल और मुआशरत में बहुत ही अच्छे थे।
- आप किसी से मुख़ातब होते तो पूरे तौर पर उसकी तरफ़ तवज्जो फ़रमाते।
- आप तमाम लोगों से ज़्यादा सख़ी और दान देने वाले थे।
- आप जुबान व कलाम में इंतहा सादिक़ और सच्चे थे।
- आप नरमी व आसानी इख़्तियार करते, जब तक वो ग़ैर शरअी ना होता। (गुनाह ना होता)
- आप बिला ज़रूरत कलाम ना करते।
- आप सख़्त दिल और ज़ालिम नहीं थे।
- खाने पीने की किसी चीज़ में ऐब ना निकालते।
- ग़ुस्सा ना करते, हाँ अगर हद से तजावुज़ *(Exceed)* की जाती तो इंतिक़ाम लिए बग़ैर ग़ुस्सा को ना रोकते।
- अपनी ज़ात के लिए कभी ग़ुस्सा ना होते और ना इंतक़ाम लेते।

* आपका ज़्यादा से ज़्यादा हंसना मुस्कराहट तक होता।
* लोगों को आपस में जोड़ने और सुलह कराने की कोशिश करते।
* अपने साथियों के हालात मालूम करते।
* हक़ पसंद करते, हक़ को हक़ और नाहक़ को बुरा कहते।
* हर काम में मियाना रवी *(Moderate)* इख़्तियार करते।
* मजलिस में जहाँ जगह मिलती बैठ जाते।
* अच्छे और पसंदीदा अख़लाक़ व किरदार वालों को अपने क़रीब रखते।
* सवाल करने वाले को कभी ख़ाली वापस ना करते और ज़रूरतमंद की मदद करते।
* बड़े की इज़्ज़त और छोटों पर रहम करते।
* हमेशा हंसमुख और ख़ुश अख़लाक़ से मिलते।
* बिला वजह किसी की बुराई, एब ज़नी ना करते।
* अपने अहल के लिए उ़म्दा सुलूक हंसी खेल का बर्ताव करते।

नबुव्वत से पहले और बाद में आपका अख़लाक़ अफ़ज़ल था और आपको सादिक़ व अमीन कहा जाता। आपके हुसने अख़लाक़ से मुतास्सिर *(Influenced)* होकर लोग ईमान लाते। नजद के एक सरदार व सुमामा बिन उसाल को क़ैद करके लाया गया और मस्जिद नबी के सतून से बाँध दिया गया। रसूलुल्लाह ﷺ उसके पास तशरीफ़ लाए और फ़रमाया, ए सुमामा! तुम्हारा क्या ख़्याल है? तेरे साथ किस क़िस्म का सुलूक किया जाए? उसने कहा, ऐ मुह़म्मद! मैं आपके बारे में अच्छा गुमान रखता हूँ, अगर आप मुझे क़त्ल कर देंगे तो आप एक ऐसे शख़्स को क़त्ल करेंगे जिसका ख़ून का बदला। और अगर मुझ पर एहसान करोगे तो आप एक शुक्र गुज़ार पर एहसान करोगे। और अगर माल दौलत चाहिए तो माँगें, आपको मिल जाएगा। बस रसूलुल्लाह ﷺ ने उसको छोड़ दिया। अगले रोज़ आपने फिर यही फ़रमाया और उसने यही जवाब दिया और उसे छोड़ दिया। तीसरे रोज़ भी उसने यही कहा। बस आप ﷺ ने फ़रमाया, सुमामा को आज़ाद कर दो। वो मस्जिद के पास ही खजूर के बाग में गए और गुस्ल करके आए तो ईमान ले आए।

(देखिए सुनन अबी दाऊद, 2679 सहीह)

एक यहूदी औरत ने आप ﷺ को खाना पर दावत दी और ज़हर मिला गोश्त खाने को दिया जिससे आपको और आपके असहाब (साथी) को काफ़ी नुक़सान उठाना पड़ा, मगर आपने दरगुज़र फ़रमाई और उस यहूदी औरत को कोई सज़ा ना दी। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि आईशा तेरी क़ौम की तरफ़ से जो तकलीफ़ें मैंने उठाई वो मेरा दिल ही जानता है। सबसे ज़्यादा सख़्त दिन मुझ पर अकवा का दिन गुज़रा जिस दिन मैंने बताना (तायफ़ का रईस) को दावते इस्लाम पेश की और उसने कहा ना माना (नबी को तकलीफ़ दी गई और जख़्मी व लहू लुहान किए गए) जिबरील अलै. तशरीफ़ लाए और फ़रमाया कि अल्लाह ने सुन लिया जो आपकी क़ौम ने आप से कहा आपको जवाब दिया। अब अल्लाह तआला ने पहाड़ के फ़रिश्ते को भेजा है तुम जो चाहो उससे काम ले सकते हो। पहाड़ के फ़रिश्ते ने आप ﷺ को सलाम किया और फ़रमाया कि अगर आप चाहो तो मक्का के दोनों तरफ के पहाड़ों को मिला दूं (ये सब चकनाचूर हो जाएंगे) आपने फ़रमाया (नहीं) मुझको उम्मीद है इनकी औलाद में से अल्लाह ऐसे लोग पैदा करेगा जो अकेले अल्लाह की इबादत करेंगे उसके साथ किसी को शरीक नहीं करेंगे। आपने सख़्त तकलीफ़ बर्दाशत करते हुए उनसे दरगुज़र का मामला फ़रमाया। ऐसे ही जब मक्का फ़तह हुआ तो आपने एलान फ़रमा दिया कि जिसने भी अपने घर का दरवाज़ा बंद कर लिया या अबू सुफ़ियान के घर पनाह ले ली सब अमान में है यानी महफ़ूज़ हैं। सब के साथ दरगुज़र का मामला फ़रमाया जबकि मक्का वालों ने आप और आप के असहाब के साथ क्या-क्या ज़ुल्म ना ढाए। सहाबी बिलाल, सुमय्या और अम्मार रज़ि. अजमअ़ीन पर होने वाले ज़ुल्म और सितम से किताबें भरी पड़ी हैं।

अनस रज़ि. बयान करते हैं कि मैंने 10 साल आपकी ख़िदमत की और एक बार भी आपने मुझे उफ़्फ़ तक नहीं कहा और ना ये पूछा कि ये काम क्यों नहीं किया। आ़ईशा रज़ि. फ़रमाती हैं कि आप घर में घर के कामकाज़ करते रहते। अहल के साथ हुसने सुलूक करते हंसी ख़ुशी से रहते। एक रोज़ मदीना के लोग दुश्मन के डर से घबरा गए और आवाज़ की तरफ़ चले। क्या देखते हैं

सामने से रसूलुल्लाह ﷺ लौटकर आ रहे हैं। आप उनसे पहले ही आवाज़ की तरफ़ रवाना हो गए थे। फ़रमाते जाते कि कोई डर की बात नहीं। (इन सबके लिए देखिए सहीह बुख़ारी, किताब अदब।)

सच बोलना

अल्लाह तआ़ाला का फ़रमान है कि:

''ऐ ईमान वालो! अल्लाह तआ़ाला से डरो और सीधी (सच्ची) बातें किया करो।'' (सूरह अहज़ाब 33/70)

यानी ऐसी बात कहो जिसमें कोई ज़ोर, टेढ़ापन, धोखा और फ़रेब ना हों। तुम्हारी जुबान से निकला हुआ हर बोल, बात और तुम्हारा किरदार सच्चाई पर आधारित हो। सूरह तौबा में मोमिन को हुक्म दिया कि सच्चों के साथ रहो।

''ऐ ईमान वालो! अल्लाह तआ़ाला से डरो और सच्चों के साथ रहो।'' (2/119)

तुम्हारा उठना बैठना, दोस्ती और मेल-जोल सच्चे लोगों के साथ होना चाहिए। आप ﷺ का फ़रमान है कि "आदमी अपने दोस्त के दीन पर होता है, इसलिए देख लो कि तुम किसके साथ दोस्ती कर रहे हो।" (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2378, सहीह) जब कोई शख्स किसी को अपना रफ़ीक़ बना लेता है उसके साथ अपना वक़्त गुज़ारता है और मेल-जोल में लगा रहता है तो उसके अच्छे बुरे आमाल का असर उस पर होना लाज़िम है। अगर मेल-जोल नेक लोगों के साथ होगा तो नेकी ही साथ लेकर आओगे और अगर बुरे लोगों से दोस्ती रखोगे तो कुछ ना कुछ बुराई और उसके बद आमाल का असर तुम्हारे किरदार पर भी पड़ेगा। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया अच्छी सोहबत (दोस्ती) और बुरी सोहबत की मिसाल ऐसी है जैसे मुश्क (खुश्बू) और लुहार की भट्टी की। मुश्क वाले के पास जाए तो फ़ायदे से ख़ाली नहीं आता या तो मुश्क ख़रीदे या ख़ुश्बू सूंघता है और लुहार की भट्टी या तो कपड़ा जला देती है या बदबू सूंघता है। (सहीह बुख़ारी, किताब तिजारत)

सच्चाई इंसानी मुआशरे की एक ज़रूरत, उसकी ख़ूबी है जो बहुत फ़ायदेमंद होती है। जबकि झूठ बोलना मुआशरे में बद उनवानी का सबब है

और मुआशरे का सांचा ढांचा, आपसी मुहब्बत और मेल–मिलाप के रिश्तों को बिगाड़ देता है। ये बुरे सुलूक की बड़ी ख़ुसूसियत है और बड़े पैमाने पर नुक़सान का सबब है। लिहाज़ा इस्लाम ने सच्चाई और सदाक़त का हुक्म दिया और झूठ बोलने से मना किया।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया सच्चाई आदमी को नेकी की तरफ़ ले जाती है और नेकी जन्नत की तरफ़ ले जाती है और आदमी सच बोलता–बोलता आख़िर में सादिक़ (सच्चा) का मरतबा हासिल करता है। और झूठ बदकारी (बुराई) की तरफ़ ले जाता है और बदकारी जहन्नम की तरफ़ ले जाती है और आदमी झूठ बोलते–बोलते आख़िर को अल्लाह के नज़दीक झूठा लिख लिया जाता है। (सहीह बुख़ारी, किताब अदब)

फ़रमाया गया है कि सच्चाई आदमी को नेकी की तरफ़ ले जाती है जो हर तरह की भलाई और नेक आमाल को शामिल है। झूठ बेहयाई और बदकारी को पैदा करता है जो हक़ से इनहराफ़ (भटकाव) की तरफ़ ले जाता है और बद अख़लाक़ी शख़्स वो होता है जो हिदायत के रास्ते से हट जाता है। सच्चाई और हक़परस्ती ये है कि आदमी ख़ालिस अल्लाह की इबादत करे, उसके क़वानीन (हुक्म) पर अमल करते हुए अपने नफ़्स को पाकीज़गी अ़ता करे, लोगों के साथ सच बोलना, अहद और वायदा का ख़्याल रखते हुए अपने हर मामलात को हक़, अ़द्ल और सच्चाई के साथ निभाए। धोखा फ़रेब झूठ वग़ैरह से बचे। मोमिन दूसरे मोमिन के लिए एक आयना के मानिंद होता है जिसका बातिन *(Inner)* और ज़ाहिर *(Outer)* में यकसां (बराबर) होता और उसमें कोई खोट या मिलावट नहीं होती।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि अगर तुम ये पसंद करते हो कि अल्लाह और उसका रसूल तुम से मुहब्बत करें तो इन तीन आदतों की हिफ़ाज़त करो। सच्ची बात, अमानत की अदायगी और अच्छा पड़ोसी बनना (सिलसिला सहिहा, 2998)

ये सब ख़सलतें एक बेहतरीन मुआशरे के लिए अहम और ज़रूरी हैं। अगर हर शख़्स इन पर अमल करे तो यक़ीनन पूरा मुल्क अमन का गहवारा बन जाए। ना उसमें कोई झगड़ा फ़साद हो ना क़त्ल ग़ारत। सच्चाई और हक़

इंसान के दिल में सुकून व इतमिनान को पैदा करता है। अल्लाह उसको ग़िना अता करता है वो झूठों की तरह कशीदगी और बेचैनी के साथ भटकता नहीं फिरता। जैसाकि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि शक शुब्हा वाली चीजों को छोड़कर ग़ैर शुब्हा चीज़ों को इख़्तियार करो। सच्चाई में इतमिनान है और झूठ शक है। (मुसनद अहमद, 1723 सहीह) इंसान को चाहिए कि अपनी ज़ुबान को सच पर क़ायम रखे। ज़ुबान आमाल की सरदार है इसे रोककर क़ाबू में रखना चाहिए। लुक़मान से किसी ने पूछा कि तुम्हें ये फ़हम *(Wisdom)* और शऊर कैसे हासिल हुआ? उन्होंने फ़रमाया, सच्चाई व अमानतदारी इख़्तियार करने, फालतू बातों से बचने और ख़ामोशी की वजह से। उन्हीं से एक बार उनके मालिक ने एक बकरी ज़िबाह करके उसके दो बेहतरीन हिस्से लाने के लिए कहा तो वो ज़ुबान और दिल निकाल कर ले गए। फिर दूसरे मौक़े पर उनसे बकरी ज़िबाह करके दो सबसे बदतरीन हिस्से लाने के लिए कहा तो वो फिर ज़ुबान और दिल लेकर गए। पूछने पर उन्होंने बताया कि ज़ुबान और दिल अगर सही हों तो ये सबसे बेहतर हैं और अगर ये बिगड़ जाएँ तो उनसे बदतर कोई चीज़ नहीं।

आप ﷺ ने फ़रमाया, आदमी जब सुबह करता है तो उसके जिस्म के सब हिस्से ज़ुबान से आ़जिज़ी करते हैं कि तू हमारे बारे में अल्लाह से डर क्योंकि हम तेरे साथ हैं। अगर तू सीधी हुई तो हम सब सीधे हुए और अगर तू टेढ़ी हुई तो हम सब टेढ़े हुए। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2407, सहीह) और फ़रमाया कि जो मुझे ज़मानत दे अपने दोनों जबड़ों और दोनों टांगों के बीच की चीज़ का तो मैं जमानत देता हूँ उसको जन्नत का। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2408, सहीह)

यहाँ दोनों जबड़ों के बीच ज़ुबान और दोनों टांगों के बीच शर्मगाह मुराद हैं। और ये दोनों ही ज़्यादातर बुराइयाँ, बदकारी, फ़हश और झगड़ा फ़साद का सबब बनती हैं। जिसने इन पर क़ाबू पा लिया वो कामयाब हुआ और फ़लाह पा गया। ज़ुबान का ज़ामिन होने से मतलब ये है कि आदमी सच और साफ़ गोयी का दामन थाम ले, झूठ बोहतान गाली और बद कलाम से इजतिनाब (बचना) करे। और शर्मगाह की जमानत से मुराद है कि वो अपनी ख़्वाहिशे नफ़स को काबू में रखकर ज़िना और लिवातत *(Sex)* जैसे बदतरीन आमाल

से खुद को महफ़ूज़ रखे। अगर आदमी जुबान और शर्मगाह की बुराइयों और फ़ितनों में गिरफ़्त हो गया तो फिर वो मुआशरे की नज़रों में ज़लील हो जाएगा, उसका कोई वकार नहीं रहेगा। बुराइयाँ उस पर सज़ा की मार भी मुसल्लत कर देंगी जिससे जिस्म के दूसरे हिस्से मुतअस्सिर होकर नुकसान उठाएंगे। यही वजह हो सकती है कि जिस्म के तमाम आज़ा जुबान से आजिज़ होकर हर सुबह अ़र्ज़ करते हैं कि सही सलामत रहना और हमारा ख्याल रखना कि हम पर मसायब ना आन पड़ें।

उक्बा बिन आ़मिर जुहन्नी रज़ि. ने अ़र्ज़ किया या रसूलुल्लाह ﷺ निजात क्या है? आपने फ़रमाया अपनी जुबान को क़ाबू में रखो, तुम्हारा घर तुम्हें अपने अंदर समा ले और अपनी ग़लतियों पर रोया करो। (सिलसिला सहीहा, 890) इस हदीस़ में तीन आमाल की वसीयत की गई है। सबसे अव्वल जुबान पर क़ाबू रखना, जैसा कि ऊपर बयान हुआ इससे होने वाली हर बुराई से बचा जाए। तुम्हारा घर तुम्हें अपने अंदर समा ले से ये भी मुराद ली जा सकती है कि बिला वजह फ़ालतू मेल-जोल और मजलिसों से बचा जाए। जो अक्सर फ़ायदा ना देने वाली गपशप, एक-दूसरे के एब टटोलना और ग़ीबत का सबब बनती हैं। इंसान को चाहिए कि वो अपना फ़ालतू और क़ीमती वक़्त दीन और दुनिया का नफ़ा बख़्श इल्म व जानकारी हासिल करने, अहल के साथ ख़ुश अख़लाक़ी और निगहबानी व उनकी उम्दा तरबियत में गुज़ारे। अपना मुहासबा करे और अपनी ख़ताओं पर नादिम और शर्मिंदा होकर उनको दूर करने की कोशिश में लगा रहे। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला के यहाँ क़यामत के रोज़ वो शख्स लोगों में से बदतरीन दरजे पर होगा जिसकी फ़हश गोई (बदकलामी) से बचने के लिए लोगों ने उसे छोड़ दिया। (सुनन अबी दाऊद, 4791 सहीह) जो चुप रहा, बद कलाम से बचा रहा और साफ़ गोयी को इख़्तियार किया वो निजात पा गया। सच बोलने से बुजुर्गी हासिल होती है। लोग उसकी इज़्ज़त व इकराम करते हैं।

झूठी गवाही, क़सम और बोलने से बचना

झूठ सच्चाई की ज़िद है जो बातिल पर मबनी होता है। ये हलाकत करने

वाले कबीरा गुनाहों का सबब बनता है। और जहन्नम की तरफ़ ले जाता है। अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है–

"बल्कि हम सच को झूठ पर फेंक मारते हैं बस सच झूठ का सिर तोड़ देता है और वो उसी वक़्त नाबूद हो जाता है तुम जो बातें बनाते हो वो तुम्हारे लिए बाअ़से ख़राबी है।" (सूरह अम्बिया, 21/18)

यानी इस तख़्लीक़ का एक मक़सद ये भी है कि यहाँ जो हक़ व बातिल (झूठ) की जद्दो जहद और ख़ैर व शर (अच्छाई-बुराई) के दरमियान जो टकराव है उसमें अल्लाह ख़ैर व हक़ को ग़ालिब और बातिल व शर को मग़लूब करेगा। और हक़ को बातिल पर या सच को झूठ पर या ख़ैर को शर पर मार देता है। जिससे बातिल, झूठ और शर नाबूद हो जाता है और मिट जाता है। ये कभी कामयाब नहीं होता भले ही वक़्ती तौर पर कुछ कामयाबी नजर आए। इसलिए अल्लाह तआ़ला ने झूठ से बचने और परहेज करने का हुक्म दिया है। "*और झूठी बात से भी परहेज़ करना चाहिए।*" (सूरह हज, 22/30) सबसे शदीद और तबाह कुन जो झूठ है वो अक़ीदा की ख़राबी यानी अल्लाह के साथ दूसरों को शरीक करना जो कभी हरगिज़ माफ़ नहीं होगा। इस बातिल से हर इंसान को ख़ुद को बचाना चाहिए।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, चार सिफ़ात (गुण) जिस शख़्स में हों वो ख़ालिस मुनाफ़िक़ है। और जिसमें उनमें से एक हो उसमें निफ़ाक़ का एक हिस्सा है। हत्ता कि उसको छोड़ दे। जब बात करे तो झूठ बोले, जब वायदा करे तो ख़िलाफ़ वर्ज़ी करे, जब अहद व पैमाना बांधे तो उसे तोड़ दे और जब कोई झगड़ा हो जाए तो गाली पर उतर आए। (सुनन अबी दाऊद, 4688, सहीह) मुनाफ़िक़ सबसे बदतर इंसान होता है जिसमें ईमान नहीं होता और धोखा फ़रेब से काम लेता है। जहन्नम के सबसे निचले तबक़े में इसको अज़ाब दिया जाएगा। ऐसे लोगों की सिफ़ात में से है झूठ, वादा खिलाफ़ी, अमानत ज़ाए करना। मुसलमान दूसरे मुसलमान का भाई है। ना वो ख़यानत करे उसकी, ना झूठ बोले उससे और ना धोखा दे उसको। और मुसलमान की मुसलमान पर सब चीज़ें हराम हैं, इज़्ज़त उसकी, माल उसका और ख़ून उसका। तक़वा यहाँ है यानी इशारा किया आपने दिल की तरफ़। और आदमी

के लिए ये शर (गुनाह) काफ़ी है कि वो अपने भाई मुस्लिम को हक़ीर समझे। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 1927 सहीह)

एक मुरसल हदीस़ में बयान हुआ है कि मोमिन बुज़दिल हो सकता है, बख़ील हो सकता है लेकिन झूठा नहीं हो सकता। (मफहूम हदीस़) और ऊपर हदीस़ में बयान हुआ है कि मोमिन झूठ नहीं बोलता। क्योंकि झूठ निफ़ाक़ की निशानी है और सच ईमान की। हदीस़ पहले बयान हुई जिसमें फ़रमाया गया है कि झूठ बुराई की तरफ़ ले जाता है और बुराई जहन्नम की तरफ़। ऐसी ही एक और हदीस़ देखिए। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि लाज़िम कर लो अपने ऊपर सच बोलने को और वो नेकी के साथ है और जन्नती है। और बचो तुम झूठ से वो बुराई के साथ हैं और ये दोनों जहन्नम में हैं। (सुनन इब्ने माजा, 3849 सहीह)

मुआ़शरे में झूठ और उसको फैलाना बड़ा गुनाह है। इससे लोगों के बीच संगीन परेशानियाँ पैदा हो सकती हैं। ये एक क़ाबिले मज़म्मत *(Condemn)* और इल्ज़ाम तराशी की ख़ुसूसियत है। ये किसी भी हालत में जाइज़ नहीं चाहे वो मुख़लिस हो या मज़ाक़ में और इसके लिए कोई रियायत नहीं दी जा सकती सिवाय शरई़ मक़सद पूरा करने के लिए। मिसाल के तौर पर दो शख़्स के बीच सुलह कराना या ऐसे ख़तरों और बुराइयों को दूर करना जो सच बोलने से दूर नहीं हो सकते। अगर मक़सद हासिल करने या किसी फ़ितना और शर से बचने के लिए झूठ से बचकर सच का सहारा लेना मुमकिन हो तो फिर झूठ का सहारा लेने की कोई सूरत जायज़ नहीं।

हक़ीक़त में ख़ासतौर पर उन मुसलमानों को क्या करना चाहिए जो ग़ैर मुस्लिम मुआशरे के साथ रहते हैं। सबसे पहले तो अमन चैन, अपसी भाईचारा, मुहब्बत और एक-दूसरे पर एतिमाद व यकीन का माहौल बनाना निहायत ज़रूरी है जो एक अच्छे मुआशरे के लिए ना गुज़ीर है और इसी में सबके लिए हिफ़ाज़त है। मुसलमान को ईमानदारी से सुलूक करना चाहिए और झूठ बोलने से बचना चाहिए क्योंकि उसका ईमानदार और सच्चा होना इस्लाम के लिए उनके दिलों में मुहब्बत पैदा करेगा। जब इस्लाम की उम्दा ख़ुसूसियात उन पर ज़ाहिर होंगी तो मुसलमानों के लिए भी उनके दिलों में रग़बत और मुहब्बत

बढ़ेगी और आजकल की मुआशरती कशीदगी और नफ़रत को दूर करने में बड़ी मदद मिलेगी। और मुल्क में अमन क़ायम करने और उसको बनाए रखने में भी मददगार साबित होगा जो एक मज़बूत और ख़ुशहाल मुल्क के लिए अहम और बेहद ज़रूरी है।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया मैं तुम्हें बड़े-बड़े गुनाह बतलाऊँ? लोगों ने अर्ज़ किया बतलाइये या रसूलुल्लाह। आपने फ़रमाया अल्लाह के साथ किसी को शरीक करना, माँ बाप की नाफ़रमानी करना और झूठ बोलना झूठी गवाही देना, सुन लो झूठ बोलना और झूठी गवाही देना और बराबर यही बोलते रहे। (सहीह बुख़ारी, किताब अदब) और ऐसे शख़्स को क़यामत के क़ायम होने तक अज़ाब में मुबतला कर दिया जाता है। ऐसे शख़्स जो झूठा हो और झूठी बात बयान करता हो (अफ़वाह) जिसे सुनकर लोग चारों तरफ़ मशहूर करदें और फैला दें, ऐसे शख़्स का क़यामत तक जबड़ा चीरा जाता रहेगा।

झूठ की हर शक्ल क़ाबिले मज़म्मत *(Condemn)* है। अगर किसी शख़्स के पास कोई चीज़ नहीं, वो उसका मालिक नहीं या उसकी इस्तिताअ़त (क्षमता) नहीं रखता और उसका दावा करना कि ये मेरी है या मेरे पास ऐसी चीज़ है ये झूठ है। इसी तरह किसी बच्चे को ये कहकर बुलाना कि ले फ़लां चीज़ या मेरे पास आ तुझे फ़लां चीज़ मिलेगी या किसी जानवर को झूठा बहलाना या किसी भी शक्ल और सूरत में किज़्ब ब्यानी और झूठ का सहारा लेना ग़लत है और एक बुराई है इंसान को हर हालत में साफ़ गोयी, हक़ और सच्चाई का दामन थामे रहना चाहिए जो नेकियाँ बटोरने में मददगार होता है।

आप ﷺ ने फ़रमाया जो शख़्स किसी चीज़ के मिलने का बयान करे जो उसको नहीं मिली तो उसकी मिसाल उस शख़्स की है जो फ़रेब का लिबास पहने हो। (सहीह बुख़ारी, किताब निकाह)

अब्दुल्लाह बिन आमिर रज़ि॰ बयान करते हैं कि एक दिन मेरी वालिदा ने मुझे बुलाया उस वक़्त रसूलुल्लाह ﷺ हमारे घर में मौजूद थे। उन्होंने कहा, आओ ले लो तुम्हें दूंगी। रसूलुल्लाह ﷺ ने उन्हें कहा, तुमने उसे क्या देने का इरादा किया है? उन्होंने कहा, मैं उसे खजूर दूंगी। आपने फ़रमाया, अगर तुम उसे कोई चीज़ ना देतीं तो तुम्हारे ऊपर एक झूठ लिख लिया जाता। (सुनन

अबी दाऊद 4991 सहीह)

हंसी मज़ाक और दिल बहलाने के लिए भी झूठ ना बोला जाए जैसे *(Jokes)* वग़ैरह जो लोगों को हंसाने के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं। ये सब इस्लाम में मना हैं। आप ﷺ ने फ़रमाया कि उस शख़्स के लिए वैल (जहन्नम, हलाकत) है जो झूठी बात करता है ताकि उससे लोग हंसें। उसके लिए वैल है, वैल है (सुनन अबी दाऊद 4990 सहीह)

कुछ लोग अपनी ज़ुबान को बड़ी चालाकी से इस्तेमाल करते हैं, फ़सीह और बलीग़ होते हैं और अपने दलायल पेश करने में माहिर होते हैं। जैसा कि अक्सर झगड़ों के फ़ैसले सुनने या क़ाज़ी की अ़दालतों में देखने को मिल जाता है। वो अपनी ज़ुबान की ही कमाई खाते हैं।

रसूलुल्लाह ﷺ ने अपने घर के दरवाज़े पर एक फ़ैसला सुना और बाहर तशरीफ़ लाए और फ़रमाया, देखो में आदमी हूँ (ग़ैब का इल्म नहीं रखता) मेरे पास एक फ़रीक़ आता है। कभी ऐसा होता है कि एक फ़रीक़ की बहस दूसरे फ़रीक़ से उम्दा होती है, मैं समझता हूं कि वो सच्चा है और उसके हक़ में फ़ैसला कर देता हूँ। लेकिन अगर मैं उसको किसी मुसलमान का हक़ दिला दूं तो जहन्नम का एक टुकड़ा उसको दिला रहा हूँ, वो ले या छोड़ दे। (सहीह बुख़ारी, किताब अल मज़ालिम) यानी वो अपनी फ़सीह ज़ुबान से झूठी दलील को इस तरीक़े से पेश करता है कि सुनने वाला उससे मुतास्सिर होकर उसे सच्चा मान लेता है और फ़ैसला उसके हक़ में कर दिया जाता है। जबकि वो झूठा होता है और इससे दूसरे फ़रीक़ पर ज़ुल्म होता है और उसका माल नाहक़ उससे छीन लिया जाता है। इस तरह पहले शख़्स ने ज़ुल्म किया और जहन्नम का अज़ाब हासिल किया।

झूठ की दूसरी मिसाल आदमी का थोड़े से माल के बदले झूठ बोलना या झूठी क़सम उठाकर दूसरे आदमी का एतिमाद और विश्वास हासिल करके उसे धोखा देना है। ये एक ऐसी बुराई है कि इसकी सज़ा भी अल्लाह ने क़ुरआन में सख़्त नाज़िल फ़रमाई। इसमें झूठ है जो ख़ुद कबीरा गुनाह है दूसरे इससे आदमी दूसरे आदमी का माल नाहक़ हासिल करता है तीसरे इससे मुआ़शरे में आपसी एतिबार भरोसा और एतिमाद को बड़ा नुकसान पहुंचता है जो मुआ़शरे

में अख़लाक़ी पस्ती और दूसरे बिगाड़ व बुराइयों का सबब बनता है। अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है:

"*बेशक जो लोग अल्लाह तआ़ला के अहद और अपनी क़समों को थोड़ी क़ीमत पर बेच डालते हैं उनके लिए आख़िरत में कोई हिस्सा नहीं अल्लाह तआ़ला ना तो उनसे बातचीत करेगा, ना उनकी तरफ़ क़यामत के दिन देखेगा, ना उन्हें पाक करेगा और उनके लिए दर्दनाक अज़ाब है।*" (सूरह आले इमरान 3/77)

इसको समझने से पहले एक बार फिर इस्लाम के बुनियादी अक़ीदे की तरफ़ ग़ौर करना पड़ेगा। इस्लाम दुनिया को अहमियत देता है, ये कहना बातिल और गुमराह करने वाला है कि इस्लाम दुनिया से बेरग़बती (नफ़रत) इख़्तियार करने की तरग़ीब और तालीम देता है। अगर ऐसा होता तो अल्लाह तआ़ला दुनिया को बनाता ही क्यों, और क्यों उसकी ज़ीनत औलाद व माल से इंसान को नवाज़ता, और क्यों उसके नबियों ने दुनिया का सवाल भी अपनी दुआओं में शामिल किया और क्यों उसने और उसके रसूलुल्लाह ﷺ ने अपने बंदों को दुनिया की भलाई कसीर माँगने का हुक्म दिया और क्यों नबी ﷺ से कहलवा दिया कि अल्लाह को क़व्वी मोमिन ज़्यादा पसंद है। इस तरह की बहुत सी दलीलें दी जा सकती हैं जिनसे दुनिया की अहमियत का होना भी मालूम चलता है। मगर इस्लाम ये नहीं चाहता कि उसके मानने वाले दुनिया में रीझ कर इस्लाम के दूसरे अहकाम को भूल जाएँ। हराम तरीक़ों से नाहक़ माल कमाएँ और उसको गिन-गिन कर समेट कर रखें ना ख़ुद पर ख़र्च करें ना अहल पर ना ग़रीब मिस्कीन पर।

बल्कि इस्लाम चाहता है कि दुनिया से फ़ायदा उठाते हुए एक मिसाली मुआ़शरा क़ायम किया जाए, एक-दूसरे की मदद में आगे रहें, माल या दीगर आमाल से नेकियों में सबक़त करके भलाई इकट्ठी करें। दुनिया का लुत्फ़ उठाएँ मगर इन सबका मक़सद आख़िरत की तैयारी करने का हर लम्हा ज़हन नशीं (हर पल ध्यान में) होना चाहिए। क्योंकि इस्लाम में आख़िरत की हक़ीक़त और उस पर यक़ीन के साथ ईमान रखना फ़र्ज़ है। इस्लाम ये सिखाता है कि ये दुनिया फ़ानी है ना किसी की हुई ना होगी ना कोई इसका ज़र्रा बराबर

ही साथ ले गया। अगर हमेशा हमेशा रहने वाली कोई चीज़ है तो अल्लाह तआ़ला की ज़ात के बाद वो आख़िरत की ज़िंदगी है। जो अबक़ा, ना ख़त्म होने वाली। इस दुनिया से उस आख़िरत को हासिल करने के लिए इंसान को अच्छे अमल करके नेकियाँ बटोरनी चाहिए।

आख़िरत हमेशा रहने वाली है। उसका एक दिन दुनिया के बेशुमार दिनों के बराबर है। यहाँ के 50-60 साल की जिंदगी वहाँ के चंद सेकण्ड हो सकते हैं। इसलिए चंद सैकण्ड के लुत्फ़ और फ़ायदे के लिए लम्बी और ना ख़त्म होने वाली जिंदगी को कौन भूलना चाहेगा और कौन इससे गुमराह होगा। ये एक नादान, कम अक़्ल और भटका हुआ इंसान ही सोच सकता है।

अब सवाल ये उठता है कि उस आख़िरत की ज़िंदगी को कैसे हासिल किया जाए, जिसमें जन्नत है यानी ऐसी निअ़मतें जो ना किसी ने देखीं, ना सुनीं और ना ही कभी दिल में कोई तसव्वुर आया। इसमें जहन्नम भी है। जिसके अ़ज़ाब की अगर एक नज़र इंसान देख भी ले तो पूरी दुनिया की माल दौलत के बदले उससे छुटकारा पाना चाहेगा। अब इंसान की आख़िरत कैसी हो? जन्नत वाली या जहन्नम वाली। एक इंसान किसको पसंद करेगा? समझ यही आता है कि बिना वक़्त गुज़ारे जन्नत वाली आख़िरत हर कोई चाहेगा। ये कैसे मिलेगी। इस्लाम ने इसके लिए दो कुंजी रखी हैं। एक क़ुरआन दूसरी हदीस़। सबसे अव्वल अपने पैदा करने वाले की इबादत करो बिना किसी को उसके साथ शरीक किए। दूसरे क़ुरआन के अहकाम और क़वानीन को तसलीम करते हुए उनपर अमल करो। तीसरे मुह़म्मद ﷺ की 23 साल की हयाते नबुव्वत को अपने लिए मिसाल बना लो, यानी मुह़म्मद ﷺ को अपना नमूना मानते हुए आपकी सुन्नत के मुताबिक़ अमल करो और हर लम्हा उसी के मुताबिक़ गुज़ारो। इस तरह किए गए अमल नेकियां और इसके ख़िलाफ किए गए गुनाह या बुराइयाँ हैं।

आख़िर में ये यक़ीन रखो कि आख़िरत के दिन हिसाब होगा जिसमें अच्छे बुरे अमल देखे जाएंगे और सीधे से हिसाब के मुताबिक़ जो ज़्यादा होंगे उसके मुताबिक़ आख़िरत की ज़िंदगी दे दी जाएगी। नेकियाँ ज़्यादा हुईं तो जन्नत वाली आख़िरत और गुनाह या बुराइयाँ ज़्यादा हुई तो जहन्नम वाली बुराइयाँ। और

इसका फ़ैसला कौन करेगा? वो जो हमेशा से है और हमेशा रहेगा। जिसने सब कुछ पैदा किया और सब कुछ मिटा देगा। वही हिसाब करेगा। अब अगर वो नज़रे रहमत से देख ले तो ख़ुशनसीबी अगर वो ख़ुश हो तो ख़ुश नसीबी। और अगर वो किसी से नाराज़ हो या रहमत की नज़र से ना देखकर गुस्से में देखे तो एक इंसान क्या सोच सकता है? क्या उसे किसी अच्छे नतीजे की उम्मीद हो सकती है? नहीं! बल्कि उसे जहन्नम के अज़ाब वाली आख़िरत मिलेगी।

अब कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनका नज़रिया ये है कि आख़िरत कुछ नहीं ये सब पुराने अफ़साने हैं। सब कुछ यही दुनिया है। इस्लाम में इसको कुफ़्र यानी हक़ का इंकार कहा गया है और है भी। दो मिसाल देना चाहता हूँ एक शख़्स अपना माल दौलत लेकर दूसरी जगह जाने का सफ़र कर रहा है रास्ते में सुनसान सहरा में उसे लूट लिया जाता है। ना काई देखने वाला, ना कोई सुनने वाला ना कोई गवाह ना कोई मदद। आख़िर माल खो कर परेशान बदहाल मायूस ज़िंदगी गुज़ारता और फ़ौत हो जाता है। तो क्या उसके साथ अच्छा हुआ या बुरा? उसको इंसाफ मिला या नहीं? क्या तुम चाहते हो कि उसे इंसाफ़ मिले या नहीं? और अगर इंसाफ़ मिलना चाहिए तो कैसे? वो तो फ़ौत हो चुका, ना गवाह मौजूद। लगता यही है कि इस सोच का इंसान भी यही चाहेगा कि उसे इंसाफ़ से उसका हक़ मिलना चाहिए। ऐसे ही मिसाल लीजिए एक नाबालिग़ लड़की सर्दी की ठिठुरती सुबह में सुनसान सड़क पर स्कूल जा रही और रास्ते में उससे बदकारी हो जाती। यहाँ भी ना किसी ने देखा ना सुना ना गवाह। वो बेबस मजबूर अपनी दास्तां किसे सुनाए उसे कौन इंसाफ़ देगा? उसे कब इंसाफ मिलेगा? इसका भी जवाब इन लोगों के पास नहीं होगा।

इस्लाम इतना बेहतरीन, अ़द्ल और हक़ पसंद दीन है कि हर श्ख़्स को उसका हक़ दिलाता है। ये कौन देगा, अल्लाह। ये कैसे देगा, इंसान के अ़मल के मुताबिक़। अमल कैसे देखेगा, लिखे जा रहें। कब देखें जाएंगे, यौमुद्दीन यानी हिसाब के दिन, क़यामत। हक़ कैसे मिलेगा, अल्लाह की रहमत से जन्नतों वाली आख़िरत नेक लोगों को और मुसीबतों व अज़ाब वाली जिंदगी अल्लाह के दुश्मनों को।

इसको ज़हन में रखते हुए थोड़े से माल की ख़ातिर झूठी क़सम खाने की

बुराई को देखिए जो इसमें बयान हुई है। वो ये हैं कि उसके लिए आख़िरत में कोई भलाई नहीं, अल्लाह उससे इस क़द्र नाराज़ होगा कि ना उसकी तरफ़ देखेगा ना बात करेगा, ना उसे बुरे अमल से पाक करेगा, और उसके लिए अज़ाब होगा। तो इन सब मुसीबतों और अज़ाब को देखते जानते भी क्या कोई झूठी क़सम से दूसरे का माल नाहक़ कमाना चाहेगा।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, जो शख़्स किसी का माल हथियाने के लिए झूठी क़सम खाए, वो अल्लाह से इस हाल में मिलेगा कि अल्लाह उससे गज़ब नाक होगा। (सहीह बुख़ारी, किताब अल मसाका)

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि बचो तुम बहुत क़सम खाने से फ़रोख़्त में (तिजारत में) इसलिए कि पहली क़सम से माल बिकता है (नफ़ा होता) फिर बरकत खो देती है। (सुनन निसाई 4466 सहीह)

यानी जब लोगों को मालूम हो जाता है कि ये हर बात में क़सम खाता है तो उसकी क़सम का भी एतबार नहीं होता। और आज ऐसा ही बाज़ारों में देखने को मिलता है कि बेचने वाला ताजिर ज़रा ज़रा सी बात पर कहता है कि क़सम से इतने में तो मैंने ख़रीदी है। भला सोचिए ये उसकी आदत बन गई और अगर उसने इतने में ही ख़रीदा जितना वो माँग रहा तो इस पर आने वाले दूसरे इख़राजात (ख़र्च) और अपना मुनाफा कहां से लाएगा। इसलिए ख़रीददारों को भी अब ये रास आ गया और उस पर यक़ीन नहीं करते हुए सौदेबाज़ी पर उतर आते हैं।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया बेचने वाले और ख़रीदने वाले दोनों को इख़्तियार है जब तक जुदा ना हों। फिर अगर वो दोनों सच बोलेंगे और जो कुछ एब *(Fault)* हो बयान कर देंगे तो उनको उस बैअ़ (तिजारत) में बरकत होगी और अगर छुपाएंगे, झूठ बोलेंगे तो बैअ़ की बरकत उठ जाएगी। (सहीह बुख़ारी, किताब अल बैअ़)

अगर झूठ बोलेंगे, झूठी कसम से ख़रीददार को एतमाद (विश्वास) में लेंगे या उसकी कमी और नुक़्स को छुपाकर बेचेंगे तो उस बिक्री में उसके लिए बरकत नहीं होगी। यानी वो माल उसका फ़ायदा नहीं देगा उसकी ज़िंदगी पुर सुकून नहीं रहेगी, टेंशन और हाय हाय का शिकार रहेगा, मुसीबतें घेर लेंगी या

अहल व अयाल *(Family)* नेक और कामयाब नहीं होंगे। ऐसे बहुत सी मिसाल हो सकती है बरकत ना होने की। जो आज के मुआ़शरे में नज़र आती है। माल काफ़ी है, नौकरी ज़्यादा पैसे देती, ताजिर काफ़ी मुनाफ़ा कमाता। माल की बहुतात होते हुए भी आदमी को चैन नहीं, सुकून नहीं। ना जाने किस दौड़ में शामिल है। कहीं *(Heart Attack)* तो कहीं *(Hypertension)* तो कहीं दूसरी ज़हनी बीमारियों का शिकार।

इस्लाम ने तिजारत में झूठ बोलना, नुक़्स या कमी को छुपाने से मना किया है। ताजिर को चाहिए कि वो जिस माल को बेच रहा है अगर उसमें कोई नुक़्स या कमी है तो उसको ख़रीदार को बेचने से पहले बता दे। दोनों ही तरफ़ से सच्चाई और ईमानदारी का मुज़ाहरा होना चाहिए तभी वो बरकत की निअ़मत के हक़दार हो सकते हैं।

एक आदमी ने बाज़ार में बिक्री के लिए एक सामान रखा और क़सम खाई कि मैंने ये इतने में ख़रीदा है हालांकि इतने में नहीं ख़रीदा था। उस वक़्त ये आयत नाज़िल हुई (3/77 ऊपर बयान हुई) अ़ब्दुल्लाह बिन अबी औफ़ रज़ि॰ ने कहा नजश करने वाला गोया सूद खोर ख़ाइन है। (सहीह बुख़ारी, किताब शहादात)

झूठ बोलकर मुनाफ़ा जो कमाया जाता है उसे सूद और ख़यानत कहा गया जो दोनों ही हलाकत करने वाली कबीरा गुनाह हैं। इनसे बचना चाहिए। मुआ़शरा की तामीर सच्चाई और ईमानदारी पर होनी चाहिए जहाँ हर इंसान बिना किसी ख़ौफ़ व डर के किसी से कहीं ख़रीद फ़रोख़्त कर सके, मेल-जोल कर सके और अपने काम के सिलसिले में बेरोकटोक अपनी अमली हरकतों को सर अंजाम दे सके और पूरी कर सके।

जब तिजारत जैसे मामलात में झूठ बोलना इस्लाम में मना कर दिया गया हो और उसे कबीर गुनाहों में शामिल कर दिया गया हो तो भला सोचिए तो सही कि इस्लाम में झूठी गवाही की कितनी मज़म्मत की गई होगी, उसके करने वालों को किन-किन मुसीबतों और अ़ज़ाब की वअ़ीद (धमकी) दी गई होगी। झूठी गवाही से नाहक़ दूसरे के माल को हड़पने के साथ अ़द्ल और इंसाफ़ को भी पामाल यानी बरबाद किया जाता है। दूसरे शख़्स के हुक़ूक़ पर ज़ुल्म किया

जाता है और मुल्कों के अमन चैन को भी तहस–नहस कर सकता है। एक नाहक़ फ़ैसला सदियों से चला आ रहा मुआ़शरे का भाईचारा मुसावात और अमन चैन को तबाह कर सकता है। ऐसी बहुत सी बुराइयों को पैदा कर सकती है झूठी गवाही। अल्लाह तआ़ला ने इससे सख़्ती से मना किया है और फ़रमाया है कि—

"ए ईमान वालों तुम अल्लाह की ख़ातिर हक़ पर कायम हो जाओ, इंसाफ़ के साथ गवाही देने वाले बन जाओ, किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें खिलाफ़े अ़द्ल पर आमाद ना करे, अ़द्ल किया करो जो परहेज़गारी के ज़्यादा क़रीब है, और अल्लाह तआ़ला से डरते रहो, यक़ीन मानो कि अल्लाह तआ़ला तुम्हारे आमाल से बाख़बर है।" (सूरह माअदा 5/8)

अल्लाह के इन अहकामात से साफ़ मालूम चलता है कि इस्लाम में सच्ची और ईमानदारी के साथ दी गई गवाही की कितनी अहमियत है। इसका अंदाज़ा एक इस हदीस़ से ही कर लीजिए जिसमें एक बाप का अपनी औलाद को दिए गए हदया *(Gift)* में बराबरी ना करने को नबी ﷺ ने बहुत बुरा जाना और उसकी शहादत देने से इंकार कर दिया और उसको हुक्म दिया कि इसको वापस ले लो वरना मैं इस पर गवाह नहीं हो सकता।

नोअ़मान बिन बशीर रज़ि. कहते हैं कि मेरे बाप ने मुझे हदया *(Gift)* दिया तो मेरी वालिदा ने कहा कि इस हदया पर जब तक रसूलुल्लाह ﷺ को गवाह ना बना लो मैं राज़ी नहीं हूंगी। लिहाज़ा मेरे वालिद नबी ﷺ की ख़िदमत में आए। आपने पूछा क्या तुमने अपनी सारी औलाद को इसी तरह हदया दिया है? उन्होंने इंकार में जवाब दिया, तो आपने फ़रमाया, अल्लाह से डरो! और औलाद के दरमियान अ़द्ल व इंसाफ करो और फ़रमाया कि मैं ज़ुल्म पर गवाह नहीं बनूंगा। (सहीह बुख़ारी किताब हब्बा)

यही नहीं, इस्लाम सच्चाई ईमानदारी अ़द्ल व इंसाफ़ का हुक्म मुसलमानों के दरमियान आपस में ही करने का नहीं देता बल्कि ये हुक्म आम है। मुसलमान या दूसरे मजहब के मानने वाले, गोरे या काले, अमीर या ग़रीब, बड़ी जाति या छोटी जाति यानी पूरी इंसानियत के साथ अ़द्ल के मामले में बराबरी का सुलूक क़ायम करता है और सबको बराबर के हुक़ूक़ अता करता

है। और अल्लाह ने अपनी तरफ़ रुजूअ़ करने वाले अपने नेक बंदो की ये एक सिफ़त (गुण) बयान की है। और फ़रमाया है कि और जो लोग झूठी गवाही नहीं देते (सूरह फ़ुरक़ान 25/72)

ये कामयाब और फ़लाह पाने वाले जन्नतियों की सिफ़्त बयान की गई है। साथ ही ये भी फरमा दिया गया है कि सच्ची गवाही को मत छुपाओ जो ऐसा करेगा वो गुनाहगार है और अल्लाह देख रहा है यानी वो इसकी सज़ा देगा।

''अल्लाह तआ़ला से डरता रह जो उसका रब है और गवाही को ना छुपाओ और जो उसे छुपाए वो गुनाहगार दिल वाला है। और जो कुछ तुम करते हो उसे अल्लाह तआ़ला ख़ूब जानता है।'' (सूरह बक़रा 2/283)

सच्ची गवाही का छुपाना कबीराा गुनाह है और इस पर अज़ाब भी सख़्त है। और सच्ची गवाही की बड़ी फ़ज़ीलत है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया वो सबसे बेहतर गवाह है जो गवाही तलब करने से पहले ही ख़ुद गवाही के लिए पेश हो जाए। (सहीह मुस्लिम, फ़ैसलों के अहकाम)

तौबा करने और लोगों के हक़ की बहाली करने के अलावा झूठी गवाही का कोई दूसरा कफ़्फ़ारा *(Expiation)* नहीं। ये इंसान के हुक़ूक़ का मामला है। जिससे उसको बेदख़ल कर दिया और उस पर ज़ुल्म हुआ। इसलिए इसकी बहाली से ही मज़लूम को अ़द्ल मिल सकता है। सच्चाई पर जमे रहने और हक़ बात कहने की तरग़ीब दी गई है और सहाबी इन पर नबी ﷺ से बैत लेते थे *(Oath)* । हदीस़ में बयान हुआ कि और बातों के अलावा इन पर भी बैत ली जाती थी कि—हम सच बात कहेंगे जहाँ होंगे अल्लाह की राह में हम किसी मलामत करने वाले की मलामत से नहीं डरेंगे। (सहीह मुस्लिम, किताब अल इमारह)

मुआ़शरे में अ़द्ल क़ायम रहे और रिश्तों या कुरबत के सबब पैदा होने वाली मुहब्बत भी अ़द्ल को मुतास्सिर *(Influence)* ना करे इसके लिए इस्लाम में कुछ एहतियाती अहकाम भी गवाही के ताल्लुक़ से नाफ़िज़ *(Implement)* किए हैं। जैसे भाई बेटे की गवाही, नौकर की गवाही या चोर वग़ैरह जिसका किरदार साफ़ और सच्चाई पर मबनी ना हो ऐसे लोगों की गवाही को फ़ैसला करते हुए क़बूल नहीं किया जाता।

आप ﷺ ने फ़रमाया कि अब वही आना बंद हो गयी अब हम तुमको तुम्हारे ज़ाहिरी आमाल पर पकड़ेंगे। जो कोई ज़ाहिर में अच्छा काम करेगा उस पर हम भरोसा करेंगे। उसके दिल की बात से हमें गर्ज़ नहीं उसका हिसाब अल्लाह लेगा। जो कोई ज़ाहिर में बुरे आमाल करेगा हम ना उस पर भरोसा करेंगे ना उसको सच्चा समझेंगे अगरचे वो दावा करे कि मेरा बातिन *(Inner heart)* अच्छा है। (सहीह बुख़ारी, किताब शहादात)

दीन और मज़हब की दूरी से तो मुआशरा ही बदल गया। चाहे मुसलमान हो चाहे हिन्दू या ईसाई वग़ैरह तमाम मज़हबों के मानने वाले अपने-अपने मज़हब के अहकाम और क़वानीन को नज़र अंदाज़ करते जा रहे हैं। दीन और मज़हबों की तालीमात जो उनकी किताबों में महफ़ूज़ हैं उनसे दूर होते जा रहे हैं। बहुत सी मिसालें आपके सामने मौजूद हैं। मिसाल के तौर पर *(Adult films)* बनाने वालियां आज *Pornstar* कहलाती और मुआशरे में आला मक़ाम हासिल किए हुए हैं। कई *(Celebrity)* खुद को *Gay* होने का इक़रार कर चुके और *Gayism* या *Lesbianism* को क़ानूनन क़ुबूल कराने वाले *Celebrity* मौजूद हैं जिनकी हर बात को अवामुन नास *(Public)* क़ुबूल कर लेता है। मज़हब या दीन ये नहीं सिखाता। और इस्लाम में बुरे अमल करने वाले की गवाही को क़ुबूल नहीं किया जाता। जिसके आमाल ही ठीक नहीं उसका किरदार कैसा होगा? और क्या वो हक़ को हक़ और बातिल को बातिल क़ुबूल करता है?

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया ख़ाइन (अमानत ज़ाए करने वाला, चोर वग़ैरह) की गवाही जाइज़ नहीं है मर्द हो या औरत या जिसको इस्लाम में हद *(Capital Punishment)* पड़ी हो या भाई के लिए अदावत रखने वाले की। (इब्ने माजा, 2366, सहीह) और फ़रमाया कि बस्ती मे *(Rural area or desert)* रहने वाले की शहर में रहने वाले के लिए गवाही जाइज़ नहीं (इब्ने माजा, 2367 सहीह) इसी तरह भाई की गवाही भाई के लिए भी जाइज़ नहीं (दाऊद, 3600)। इस तरह की सब गवाहियाँ फ़ैसले को अ़द्ल के साथ करने में रुकावट डाल सकती हैं और दूसरे फ़रीक़ पर ज़ुल्म हो सकता है। इसलिए इनको क़ुबूल ना करने को कहा गया है।

अ़द्ल (इंसाफ़) करना

पिछले सफ़हात में इसके बारे में भी बयान हुआ है। अ़द्ल और इंसाफ़ की इस्लाम में बड़ी अहमियत है और फ़ज़ीलत भी बयान की गई है। अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआन में फ़रमा दिया कि अ़द्ल और इंसाफ़ किया करो। सच्चाई का साथ थामे रहो। और इंसान की ख़्वाहिश नफ़्स, उसकी ज़ात खुद, उसके बीवी बच्चे, माँ बाप, माल दौलत या दूसरे फ़ायदे उसे अ़द्ल और सच्चाई से ना डगमगाएँ। यानी हर हालत में अ़द्ल का साथ दो चाहे वो ख़ुद तुम्हारे अपने या माँ बाप बीवी बच्चों के ही ख़िलाफ़ क्यों ना हो।

"_ऐ ईमान वालों अ़द्ल पर मज़बूती से जम जाने वाले और अल्लाह की ख़ुशनूदी के लिए सच्ची गवाही देने वाले बन जाओ। चाहे वो तुम्हारे अपने ख़िलाफ़ हो या अपने माँ बाप के या क़राबतदारों के। वो शख़्स अगर अमीर हो तो और फ़क़ीर हो तो, दोनों के साथ अल्लाह को ज़्यादा ताल्लुक़ है। इसलिए तुम ख़्वाहिशे नफ़्स के पीछे पड़कर इंसाफ़ ना छोड़ देना। और अगर तुमने कज बयानी या पहलू तही (खोट वाली पेचीदा) की तो जान लो कि जो कुछ तुम करोगे अल्लाह उससे पूरी तरह बाख़बर है।_" (सूरह निसा 4/135)

देखिए इस्लाम की ख़ूबी और अ़द्ल व इंसाफ़ के बारे में अहकाम। अगर आदमी जिंदगी के हर शोअबे में अ़द्ल व इंसाफ़ से काम ले, चाहे वो अपने अहल के साथ हो या मुआ़शरे के बारे में तो इसका अज्र सवाब भी बहुत अ़ज़ीम रखा है। दुनियां में भी उसे बुजुर्गी व इज़्ज़त हासिल होगी और आख़िरत में भी। दुनियां की कामयाबी तो वक़्ती है, पाएदार और हमेशा रहने वाली आख़िरत है। दुनिया उसका घर है जिसका आख़िरत में घर नहीं यानी जो दुनिया ही को अहमियत देते हैं और अ़द्ल से इनहिराफ़ करके आख़िरत को भूल जाते हैं उनके लिए आख़िरत में कुछ नहीं बस यहीं दुनिया में थोड़ा सा फ़ायदा उठा लेते हैं।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जो लोग इंसाफ़ करते हैं वो अल्लाह तआ़ला के पास मिम्बरों पर होंगे। (सहीह मुस्लिम, किताब इमारात) अगर इंसान इंसाफ़ करेगा और हर एक के हुक़ूक़ शरियत के मुताबिक़ अदा करेगा तो उसे

आख़िरत में आला मक़ाम हासिल होगा। अ़द्ल व इंसाफ का ये मतलब भी नहीं कि उसके लिए उस आदमी की हैसियत या मक़ाम देखा जाए। यानी अमीर है तो उसके लिए कुछ ख़ास क़ानून और ग़रीब है तो दूसरे। आला मकाम पर है तो कुछ और अहकाम और नौकर मजदूर ताबेदार हैं तो कुछ दूसरा बर्ताव, नहीं। हुक़ूक़ सबके यकसां और बराबर हैं। इसी का हुक्म अल्लाह ने कुरआन की सूरत नहल की आयत 16/90 में भी बयान किया है।

''*अल्लाह तआ़ला अ़द्ल का, भलाई का और क़राबतदारों के साथ हुस्ने सुलूक करने का हुक्म देता है और बेहयाई के कामों, नाशायस्ता हरकतों और ज़ुल्म व ज़्यादती से रोकता है। वो खुद तुम्हें नसीहतें कर रहा है कि तुम नसीहत हासिल करो।*'' (16/90)

जब अ़द्ल नहीं होगा तो ज़ुल्म होगा, किसी के हुक़ूक़ को ज़ाए और बरबाद किया जाएगा। यहाँ अल्लाह के इस फ़रमान कि वो खुद तुम्हें नसीहतें कर रहा है से अ़द्ल करने की, बेहयाई और नापसंदीदा चीजों से बचने की, और ज़ुल्म से रुकने की ज़रूरत और अहमियत का अंदाज़ा आप ख़ुद लगा सकते हैं। इस्लाम ने ऐसी सब नेकियों को करने की और बुराइयों से बचने की तरग़ीब दी है। इंसाफ़ का मतलब हुक़ूक़ की अदायगी से है और इससे मसावात या बराबरी मक़सद नहीं। दीने इस्लाम मसावात का नहीं बल्कि अ़द्ल का दीन है। इस्लाम अ़द्ल का हुक्म देता है। कभी अ़द्ल से मुराद बराबरी का भी ले लिया जाता है।

मगर ख़्याल रहे कि हर सूरत में अ़द्ल होना ज़रूरी है। दीन मज़हब का अलग होना, किसी से दुश्मनी होना, क़रीबी रिश्ते रखना या अमीर-ग़रीब सबके साथ अ़द्ल से काम लेना चाहिए। जैसा कि अल्लाह तआ़ला ने सूरह मायदा की आयत 5/8 और 5/42 जैसी आयतों में बयान फ़रमाया है।

आ़ईशा रज़ि. से मरवी है कि आप ﷺ ने फ़रमाया कि ए उसामा तू सिफ़ारिश करता है अल्लाह तआ़ला की हद में? फिर आप खड़े हुए और ख़ुतबा दिया। फ़रमाया ए लोगों! तुमसे पहले लोग इन्हीं करतूतों से तबाह हुए। जब कोई अच्छा शरीफ़ आदमी उनमें का चोरी करता तो उसको छोड़ देते और जब कोई कमज़ोर ऐसा करता तो उस पर हद क़ायम करते। क़सम ख़ुदा की

अगर फ़ातिमा मुहम्मद की बेटी चोरी करे तो उसका भी हाथ काट डालूंगा (सहीह मुस्लिम, किताब हूदूद) सुबहानल्लाह ये है अ़द्ल और इंसाफ़ कि अगर नबी ﷺ की बेटी भी किसी का हक़ ज़ाए करेगी तो उसे भी वही सज़ा मिलेगी जो एक कमज़ोर और आम लोगों के लिए मुक़र्रर की गई है। जो शरीअ़त और क़ायदा कानून बनाया जाए उसे सब पर बिना किसी लिहाज़ के नाफ़िज़ करना चाहिए वरना मुल्क बर्बाद होगा हुकूमत तबाह हो जाएगी। अफ़सोस कि मुसलमान जो एक ज़माने से कानून इलाही के पाबंद थे अब सब क़ौमों से बढ़कर क़ानून की ख़िलाफ़ वर्ज़ी कर रहे हैं। उम्मते मुस्लिमा में ना मज़हबी क़ानून बाक़ी रहा ना मुल्की! बल्कि अपने-अपने मुनाफ़े के हासिल करने में बिला ख़ौफ़ मशगूल हैं और अ़द्ल व इंस़ाफ तो उठता ही जा रहा है। वैसे भी ये आख़िर ज़माने की निशानियों में से है जो ज़ाहिर हो रही हैं। रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान है कि इस्लाम की एक-एक रस्सी को चुन-चुन कर तोड़ दिया जाएगा और जब एक रस्सी टूट जाया करेगी तो लोग दूसरी के पीछे पड़ जाया करेंगे। सबसे पहले टूटने वाली रस्सी इंसाफ़ की होगी और सबसे आख़िर में टूटने वाली नमाज़ होगी (मुसनद अहमद, शाकिर 22060, सहीह) और फ़रमाया कि जो क़ौम अल्लाह तआ़ला के नाज़िल करदा हुक्म के ख़िलाफ़ फ़ैसला करें तो उन पर फ़क़ीरी मुसल्लत कर दी जाती है। (तरग़ीब व तरहीब, 421, सहीह) तो आज मुसलमान अपना मुहासबा ख़ुद कर लें और देख लें कि उम्मत का ये बदहाल क्यों हो रहा। यही नहीं दूसरी क़ौमों के लिए भी इसमें नसीहत है कि जब किसी क़ौम या वतन से अ़द्ल व इंसाफ़ उठ जाए तो वहाँ बद अमनी और ख़ाना जंगी जैसी सूरते हाल पैदा हो जाती हैं। इसलिए हर इंसान को चाहिए ख़्वाह वो किसी भी दीन मज़हब का हो, किसी भी क़ौम का हो, गोरा हो या काला हो, अमीर हो या ग़रीब, हर हालत में एक-दूसरे के साथ अ़द्ल व इंसाफ़ का मामला रखें और एक-दूसरे के हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त करें। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि तीन चीजें निजात देने वाली हैं (जिसमें से एक) ख़ुशी या नाख़ुशी हर हाल में अ़द्ल करना। (तरग़ीब व तरहीब, 258 सहीह)

इस्लाम में अ़द्ल व इंसाफ़ और एक-दूसरे के हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त करने

के क़वानीन मौजूद हैं। जिन पर सहाबा और बाद के दौर के सलफ़े उम्मत ने अपनी ज़िंदगी में अमल किया और दूसरे लोगों के सामने इस्लाम की उम्दा तस्वीर पेश की जिससे मुतअस्सिर होकर उन लोगों ने इस्लाम क़ुबूल किया। सुमामा बिन उसाल का किस्सा पहले बयान हुआ। कुछ वाक़िआत बाद के दौर के भी देख लेते हैं।

उमर फ़ारुक़ रज़ि॰ मस्जिदे नबवी में बैठे थे कि उनके पास से एक मिस्री शख़्स का गुज़र हुआ जो मिस्र के गवर्नर की शिकायत कर रहा था कि आप अपने हुक्काम को मुक़र्रर तो करते हो मगर उनका मुहासबा नहीं करते कि उन्होंने शराइत पूरी की हैं या नहीं? मिस्र के हाकिम ने आपकी शराइत को फ़रामोश करके उन बातों को किया है जिनसे आपने मना फ़रमाया। उमर फ़ारुक़ रज़ि॰ ने दो अंसारियों को फ़ौरन मिस्र रवाना किया कि तहक़ीक़ करें और अगर इसकी बात सही पाओ तो हाकिम को बिना देरी किए मेरे सामने पेश करो। दोनों अंसारियों को वही रिपोर्ट मिली जो उस शख़्स ने कही थी लिहाज़ा हाकिम मिस्र को उ़मर फ़ारुक़ रज़ि॰ के सामने पेश किया गया। उन्होंने फ़रमाया, तेरा नाश हो, जिस बात से तुझे मना किया गया था उसको तूने गले लगाया और जिसका हुक्म दिया गया था उसको फ़रामोश किया। फिर उ़मर रज़ि॰ ने एक फटा हुआ ऊन का लिबास, एक लाठी और तीन सौ बकरियाँ मंगाई और फ़रमाया, ये लिबास पहन ले लाठी उठा और फ़लां चरागाह में जाकर बकरियों को चराओ।

कूफ़ा (इराक़) के हाकिम के महल के पास एक शख़्स का बाग था जिसको वो ख़रीदना चाहता था ताकि उसका महल वसीअ़ और खुला हो जाए। हाकिम *(Governor)* ने उस शख़्स को पेशकश की मगर वो नहीं माना। उस शख़्स की मौत हो गई और पीछे तीन लड़के और एक लड़की छोड़ गया। हाकिम ने फिर उनके सामने बड़ी रकम पेश की जिसपर तीनों लड़के मान गए मगर लड़की नहीं मानी। एक दिन हाकिम ने नौकरों से दीवार को गिरवाकर उस बाग को अपने महल में शामिल कर लिया। उधर लड़की ने हाकिम के ख़िलाफ क़ाज़ी शरीक की अदालत में मुकद्मा पेश कर दिया। जिस पर हाकिम ने अदालत में पेश होने में अपनी तौहीन समझी और इंकार कर दिया।

क़ाज़ी शरीक ने जवाब दिया कि अदालत की नज़र में तमाम आम व ख़ास बराबर हैं। क़ाज़ी शरीक ने अपने ओहदे को छोड़ने की पेशकश की और बग़दाद की तरफ रवाना हो गए। जब गवर्नर को मालूम चला तो घबरा गया कि कहीं ख़लीफ़ा को ख़बर हो गई तो मेरी गवर्नरी ख़त्म हो जाएगी और क़ाज़ी शरीक को मनाने लगा। क़ाज़ी शरीक ने कहा कि तुम्हें उस औरत के साथ अदालत में खड़ा होना पड़ेगा। क़ाज़ी ने बयान सुनने के बाद फैसला सुनाया कि गवर्नर को दीवार बनानी पड़ेगी, जमीन को वापस करना पड़ेगा और उसे ज़मीन बेचने पर मजबूर ना किया जाए।

मुख़्तसर सा किस्सा ये है कि समरक़ंद पर मुसलमानों का क़ब्जा हो गया। उसका राजा एक बड़ा काहिन भी था और हर वक़्त कोशिश में लगा रहता कि किसी तरह मुसलमानों का क़ब्ज़ा ख़त्म हो जाए मगर मुसलमान ताक़तवर होते गए। आख़िर उसके ज़हन में आया कि सुना है इनका बादशाह जो दमिश्क़ में रहता है निहायत आ़दिल शख़्स है। (ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज रह.) उनके पास अपना एलची भेजते हैं। एलची दमिश्क़ पहुंचकर एक सराय में ठहरा और उसके मालिक से दरयाफ़्त किया कि उसे अमीरुल मोमिनीन से मिलने का क्या तरीक़ा है। मालिक ने जवाब दिया कि हमारे अमीरुल मोमिनीन से मिलना बहुत आसान है। मालिक ने उसे मिलने का रास्ता बता दिया। वो शख़्स एक ख़ूबसूरत मस्जिद पहुंचा जहाँ उसकी मुलाक़ात एक और शख़्स से हुई जिसने उससे नमाज़ पढ़ने के बारे में और उसके दीन के बारे में दरयाफ़्त किया। वो शख़्स उससे बात करके इतना मुतअस्सिर हुआ कि इस्लाम में दाख़िल हो गया और ईमान ले आया। वो आदमी उस शख़्स को एक गली में लाया और एक निहायत ही सादा से दरवाज़े की तरफ़ इशारा करके बताया कि ये हमारे अमीरुल मोमिनीन का घर है। उस शख़्स को ताज्जुब हुआ, उसका ख्याल था कि बड़ा आलीशान महल होगा। उसने दरवाजा खटखटाया। अमीरुल मोमिनीन ने उस का हाल पूछा और आने का मक़सद मालूम किया। उसने समरक़ंद के सिपहसलार *(Governor)* के ख़िलाफ़ मुक़द्मा दायर किया कि हमारे मुल्क पर मुसलमानों ने क़ब्ज़ा किया है। ये धोखे से क़ब्ज़ा हुआ है। ना तो एलाने जंग हुआ और ना हमें इस्लाम की दावत दी गई, हमारे

साथ ज़ुल्म हुआ है। उ़मर बिन अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ रह. फ़रमाने लगे कि अल्लाह के नबी ने हमें ज़ुल्म करने का हुक्म नहीं दिया बल्कि हमें अ़द्‌ल और इंसाफ़ करने की तलक़ीन की है। इसमें मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम की कोई तख़्सीस (ख़ुसूसियत) नहीं। आवाज दी, ऐ गुलाम! कागज़ और क़लम लाया जाए। उस पर दो सतरें लिखी, मोहर लगाई और बंद करके उस शख़्स को दिया कि इसे अपने शहर के हाकिम के पास ले जाओ।

वो सफ़र को चला, रास्ते में रुकता नमाज़ पढ़ता और मुसलमानों से मुलाक़ात करता जो उसकी मेहमानी करने में होड़ में लगे रहते। सफ़र पूरा करके वो समरक़ंद पहुंचा और काहिन को पूरी बात बताई कि ख़लीफ़ा की तरफ से हुक्म है कि क़ाज़ी के सामने मुक़दमे को पेश किया जाए। फिर वो दिन आ गया। काहिन, मुसलमानों का सिपहसालार और लोग हाज़िर हैं। सबकी दलीलें सुनी गईं। सिपहसालार से पूछा क्या तुमने हमले से पहले अहले समरक़ंद को इस्लाम की दावत दी थी या जिज़्या देने पर आमादा किया था या दोनों सूरतों में इंकार पर लड़ाई की दावत दी थी। उन्होंने कहा ऐसा तो नहीं हुआ। अब क़ाज़ी के अल्फ़ाज़ पर ग़ौर कीजिए, अल्लाह रब्बुल इ़ज़्ज़त ने इस उम्मत की मदद इसलिए की है कि उसने दीन की इत्तिबा की और धोखा धड़ी से इजतिनाब (बचे) किया। अल्लाह की क़सम। हम अपने घरों से जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह के लिए निकले हैं हमारा मक़सद ज़मीन पर क़ब्ज़ा जमाना नहीं है। और हक़ के बग़ैर वहाँ हुकूमत करना हमारा मक़सद है। फिर फ़ैसला देता हूँ कि मुसलमान इस शहर से निकल जाएँ। शहर को इसके असल राजा को वापस कर दें, फिर उनको दावते दीन दें, जंग की दावत दें और इसका एलान करें।

क़ाज़ी के फ़ैसले पर अमल शुरू हुआ और फ़ौजें वापस जाने लगीं। आज क़ाज़ी के तीन सतर के फ़ैसले पर अमल शुरू हुआ। अदालत की पूरी कार्यवाही और फ़ैसले ने काहिन को ग़ौर फ़िक्र करने पर मजबूर कर दिया और उसने भी तसलीम कर लिया कि यक़ीनन इस्लाम अ़द्‌ल और इंसाफ़ का दीन है। वो एलची शख़्स ने अपने ईमान लाने की ख़बर का एलान कर दिया। अब काहिन के ये कहने की देरी थी "मैं भी गवाही देता हूँ अल्लाह के सिवा कोई

माबूद बरहक़ नहीं और मुहम्मद ﷺ उसके बंदे और रसूल हैं।" और शहर की तमाम गलियाँ और चौक अल्लाहु अकबर के नारे से गूंज उठीं। लोग ज़ौक़ दर ज़ौक़ इस्लाम में दाख़िल हो रहे हैं। उन्होंने लौटती फ़ौज के घोड़ों की बागें पकड़ ली, इस मुल्क से वापस ना जाओ, हमें इस्लामी अ़द्ल व इंसाफ़ की ज़रूरत है।

सूरह निसा की आयत 4/135, नबी ﷺ और सहाबा रज़ि॰ का अ़द्ल व अख़लाक़ और सलफ़े उम्मत के अ़द्ल व इंसाफ़ की इन चंद नसीहतों और मिसालों पर ग़ौर कीजिए। काश आज ये उम्मत अपने सलफ़ के तरीक़ों पर लौट आए तो आज भी अल्लाह वो सुनहरे दिन वापस ला सकता है जिसमें मुल्कों में अमन व चैन का राज हो, ना कोई किसी पर ज़ुल्म करे और ना किसी पर ज़ुल्म हो।

वादा निभाना

अल्लाह तआ़ला ने अक़्लमंद नसीहत क़ुबूल करने वालों की यानी मोमीन की सिफ़त बयान करते हुए फ़रमाया है कि:

''जो अल्लाह के अहद को पूरा करते हैं और क़ौल व क़रार को तोड़ते नहीं।'' (सूरह रअ़द 13/20)

यहाँ अहद से मुराद अहदे अलस्तू है जो सूरह आराफ़ 7/172 में बयान हुआ है यानी अल्लाह के साथ शिर्क ना करने और उसकी फ़रमांबरदारी करने का जो अहद बनी आदम ने किया उसको पूरा करते हैं। और क़ौल व क़रार से मुराद वो अहद, वादे या क़रार हैं जो इंसान आपस में एक-दूसरे से करते हैं। अल्लाह ने सूरह बनी इसराइल में फ़रमाया कि वादे पूरे करो क्योंकि इनकी बाज़ पुरस होगी यानी वादों का पूरा करना लाज़िम है और ना करना गुनाह और इसको पूरा ना करने के बारे में क़यामत में सवाल किया जाएगा।

''और वादे पूरे करो क्योंकि क़ौल व करार की बाज़ पुरस होने वाली है।'' (17/34)

अनस रज़ि॰ से मरवी है कि नबी ﷺ ने हमें कोई ख़ुतबा ऐसा नहीं दिया जिसमें ये ना फ़रमाया गया हो कि उस शख़्स का ईमान नहीं जिसके पास

अमानतदारी नहीं और उस शख़्स का दीन नहीं जिसके पास वादे की पास दारी नहीं। (मुसनद अहमद, शाकिर 12324) यानी वादे का पूरा करना दीन की सिफ़त हुई। रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान है कि मुसलमान अपनी शर्तों के पाबंद हैं। (सिलसिला सहीहा, 2915) मुसलमान झूठा नहीं होता क्योंकि झूठ मुनाफ़िक़ की निशानी है। जब तक वादा और शर्त शरीअ़त के मुताबिक़ हो उसका पूरा करना लाज़िम है। मगर वो शर्त जो हलाल को हराम या हराम को हलाल कर दे ऐसी ग़ैर शरअी शर्त पूरी नहीं की जाएगी। और रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि जो अहद को पूरा ना करे वो मेरी उम्मत में से नहीं है। (सहीह मुस्लिम, किताब इमारात)

क़ुरआन और सुन्नत की इबारतें वाज़ेह तौ़र पर इशारा करती हैं कि वादों और अहद को पूरा करना लाज़िम है और उनको तोड़ना हराम है। नबी ﷺ और सहाबा का अमल इसका सबूत हैं। ये अल्लाह की रज़ामंदी और तक़वा हासिल करने का सबब है।

''जो शख़्स अपना क़रार पूरा करे और परहेज़गारी करे, तो अल्लाह भी ऐसे परहेज़गारों से मुहब्बत करता है।'' (सूरह आले इमरान, 3/76)

वादों को पूरा करना मुआ़शरे में अमन व सलामती को क़ायम करता है और आपसी मनमुटाव, इख़्तिलाफ़ और ख़ूंरेजी को रोकता है और हर किसी के हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त करता है चाहे वो मुसलमान हो या दूसरे मजहबों के मानने वाले लोग। ये भी एक वजह थी कि हमारे मुल्क में हमारे आबा ओ अजदाद (पूर्वज) आपसी भाईचारे के एक मज़बूत रिश्ते से बंधे थे। उनके दरमियान एक मिसाली मुहब्बत थी जो अपने वादों को सख़्ती से निभाते थे। जो उनके क़ौल और अमल दोनों में मिलता था। जैसे उनका मानना कि "प्राण जाए पर वचन ना जाए" अल्लाह का फ़रमान है कि—

''ऐ ईमान वालो! तुम वो बात क्यों कहते हो जो करते नहीं, तुम जो करते नहीं उसका कहना अल्लाह तआ़ला को सख़्त नापसंद है।'' (सूरह सफ़, 61/2,3)

क़ुरआन और सुन्नत नबी की तमाम नसीहतों और अहकाम को सहाबा और सलफ़े उम्मत नेक सालेह बंदो ने क़ुबूल किया और उन पर अमल किया।

उनकी ज़िंदगी का हर पल अल्लाह और उसके रसूल की इताअ़त और फ़रमांबरदारी में गुज़रता। ये वो लोग थे जिन्होंने कहा ए हमारे रब, हमने सुना और मान लिया। आजकल के मुसलमानों की तरह नहीं कि या तो दीन के बारे में पढ़ने जानने और समझने के लिए उनके पास दुनियादारी और *WhatsApp* से फ़ुरसत नहीं और अगर कुछ जान लिया तो उस पर अमल नहीं जैसा कि मूसा अलै. के साथियों ने कहा कि हमने सुना और नाफ़रमानी की और अल्लाह ने भी मुसीबतों और अज़ाब को उनके गले का हार बना दिया। आज उम्मत की हालत भी इससे ज़्यादा मुख़्तलिफ़ नहीं।

अब्दुल्लाह अंसारी रज़ि. ने कहा कि मुझसे रसूलुल्लाह ﷺ ने वादा फ़रमाया कि जब बहरैन से माल आएगा तो मैं तुझको इस तरह दूंगा (लप भरकर)। फिर बहरैन से माल आने से पहले आपकी वफ़ात हो गई। जब अबू बकर सिद्दीक़ रज़ि. की ख़िलाफ़त में बहरैन से माल आया तो उन्होंने मुनादी करा दी कि नबी ﷺ ने जिससे कुछ वादा किया हो या आप पर किसी का कोई क़र्ज़ हो तो हाज़िर हो। ये सुनकर मैं सिद्दीक़ रज़ि. के पास गया। मैंने कहा कि रसूलुल्लाह ﷺ ने मुझसे इतना देने का वादा फ़रमाया था। उन्होंने एक लप भरकर मुझे रुपया दिया मैंने उनको गिना तो पाँच सौ निकले उन्होंने कहा कि इससे दोगुना और लेले। (सहीह बुख़ारी, किताब कफ़ालाह)

हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ि. से रिवायत है कि मुझे बदर में आने से किसी चीज़ ने नहीं रोका। बल्कि मैं अपने बाप के साथ निकला तो हमें कुरैश के काफ़िरों ने पकड़ लिया और कहा कि तुम मुहम्मद ﷺ के पास जाना चाहते हो? हमने कहा कि हम उनके पास नहीं बल्कि मदीना जाना चाहते हैं। फिर उन्होंने हमसे अल्लाह का नाम लेकर अहद और करार लिया कि हम मदीना जाएंगे और मुहम्मद ﷺ के साथ मिलकर नहीं लड़ेंगे। जब हम रसूलुल्लाह ﷺ के पास आए तो हमने ये पूरा किस्सा बयान किया। आपने फ़रमाया चले जाओ मदीना, हम उनका इक़रार पूरा करेंगे और उन पर अल्लाह से मदद चाहेंगे। (सहीह बुख़ारी, किताब जिहाद)

हदीसों से मालूम चलता है कि लड़ाई में झूठ बोलने की इजाज़त है। मगर इन हालात में भी वादे का पूरा करना लाज़िम है। हुज़ैफ़ा और उनके बाप को

आपने वादे पूरा करने का हुक्म दिया। दूसरे ये भी मालूम हुआ जैसा आयत 5/8 में बयान हुआ कि इक़रार को पूरा करना ना सिर्फ़ मुसलमानों के दरमियान बल्कि सब इंसानों के साथ पूरा करना लाज़िम है चाहे वो किसी भी मज़हब या क़ौम का हो। और इस हदीस़ में बयान करदा कुरैश काफ़िर थे और मुसलमानों के साथ जंग में शामिल थे तब भी नबी ﷺ ने उनसे किए गए वादे को पूरा करने का हुक्म दिया और नाफ़िज़ कराया।

ईरान के लश्कर के कमाण्डर के गिरफ़्तार होने के बाद उमर रज़ि. के सामने लाया गया तो अमीरुल मोमिनीन ने पूछा तेरी बार बार बदअहदी का तेरे पास क्या उज़्र है? उसने कहा कि मुझे डर है कहीं आप मेरी बात सुनने से पहले ही मुझे क़त्ल ना कर दें। उमर फ़ारुक़ रज़ि. ने फ़रमाया, डरो मत तुम्हारी बात ज़रूर सुनी जाएगी। फिर उसने पानी मांगा तो उसने प्याला हाथ में लेकर कहा मैं डरता हूँ कि कहीं आप मुझे पानी पीने की हालत में ही क़त्ल ना कर दें। अमीरुल मोमिनीन ने कहा तुम ख़ौफ़ ना खाओ जब तक पानी ना पियोगे तब तक तुम्हें कोई नुकसान नहीं पहुंचाया जाएगा। उसने ये सुनते ही प्याला हाथ से छोड़ दिया और पानी गिरा दिया। उसने कहा अब आप मुझे क़त्ल नहीं कर सकते क्योंकि आपने मुझसे वादा किया है। उमर फ़ारुक़ को बहुत ग़ुस्सा आया और उससे कहा कि तूने मुझे धोखा दिया है। लेकिन मैं तुझे धोखा नहीं दूंगा। इस्लाम ने इसकी तालीम नहीं दी। हुसने सुलूक और इक़रार की पाबंदी करने का नतीजा ये हुआ कि वो मुसलमान हो गया।

इस्लाम दुनियां के दूर दराज़ के कोनों तक बस यूं ही नहीं पहुंच गया। बल्कि वहाँ के बाशिंदों ने इस्लाम की ख़ूबियों को तसलीम किया। सलफ़े सालिहीन के किरदार और आमाल से मुतअस्सिर (प्रभावित) होकर ईमान लाए, जिन्होंने दुनियां के सामने एक बेहतरीन मिसाल क़ायम की। काश आज का मुसलमान अपना मुहासबा करे और क़ुरआन व सुन्नत में बयान फ़रमाए गए अहकाम और क़वानीन को लब्बैक कहे (अपनाए) तो आज भी ऐसा समाज पैदा होगा जिसमें हर इंसान आपसी विश्वास और ईमानदारी के साथ आपसी मेलजोल और मामले क़ायम कर सकेगा।

अमानत अदा करना

अपने फ़रमांबरदार नेकबंदों मोमीनीन की सिफ़ात का बयान करते हुए अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि—

"और जो अपनी अमानतों का और अपने क़ौल व इक़रार का पास रखते हैं।" (सूरह मआ़रिज 70/32)

यानी जो अपनी गवाहियों पर क़ायम रहते हैं। यही लोग जन्नत में इज़्ज़त वाले होंगे। यानी जो इसे सही सही अदा करते हैं और उसे ना छुपाते हैं और ना उसमें कोई तबदीली करते हैं चाहे वो उनके क़रीबी अज़ीज़ और रिश्तेदारों के ख़िलाफ़ ही क्यों ना हो। अमानत में ख़यानत (धोखा) उसके साथ भी नहीं जो तुम्हारे साथ ख़यानत करे और धोखा दे। अमानत की हिफ़ाज़त करने की इस्लाम में बड़ी फ़ज़ीलत है और इसकी बहुत तरग़ीब की गई है।

अबू हुरैरा रज़ि॰ से रिवायत है रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि अदा कर उसकी अमानत को जिसने तुझे अमीन बनाया और ना ख़यानत कर उसकी जिसने तुझसे ख़यानत की (जामेअ़ तिरमिज़ी 1264, सहीह) और मुसनद अहमद की हदीस़ पहले बयान हुई कि उसका ईमान नहीं जिसके पास अमानतदारी ना हो। ये मुनाफ़िक़ की निशानी है।

अब्दुल्लाह बिन अ़म्र रज़ि॰ फ़रमाते हैं कि चार चीज़ें ऐसी हैं कि जब वे तुझे मिल जाएँ तो फिर दुनियां की बाक़ी चीज़ें तुझसे जाती भी रहे तो तुझे कोई नुक़सान नहीं। हुसने अख़लाक़, हलाल रिज़्क़, सच्ची बात और अमानत की हिफ़ाज़त। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 288, सहीह)

ख़यानत इस्लाम में हराम है। इसको अपने हुक़ूक़ लेने के लिए भी जाइज़ क़रार नहीं दिया जा सकता। ये एक झूठ है। रसूलुल्लाह ﷺ ने उससे भी ख़यानत करने से मना किया जो तुझसे ख़यानत करे। आदमी को ये जाइज़ नहीं कि वो उस शख़्स के साथ ख़यानत करे जिसने उससे ख़यानत की हो। ऐसे ही ये भी जाइज़ नहीं कि कोई शख़्स किसी की कोताहियों या दीगर ज़ाती मामलात को लोगों में फैलाए। मजलिस की बातचीत भी एक अमानत होती है। ऐसा

करने से उस शख़्स की बदनामी होगी और फिर उसकी जिस बुराई को अल्लाह ने परदे में रखा तो उसका पर्दाफ़ाश करना मुनासिब नहीं।

लुक़मान अलै. से किसी ने पूछा कि तुमको किस वजह से इतनी बुजुर्गी हासिल हुई? लुकमान ने कहा सच बोलने से, अमानतदारी से और लग़्व काम (बेहयायी) छोड़ देने से (मुवत्ता मालिक, 1803 सहीह) रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि अगर तुम चाहते हो कि अल्लाह और उसका रसूल तुम से मुहब्बत करें तो तीन बातों की हिफ़ाज़त करो : 1. सच्ची बात, 2. अमानत की अदायगी और 3. पड़ोसी को तकलीफ़ देना नेकियों को ऐसे ज़ाए कर देता है जैसे सूरज बर्फ़ को ख़त्म कर देता है (सिलसिला सहीहा, 2998) मुहब्बत ज़ुबान से नहीं बल्कि उसकी अदायगी महबूब को चुनती है।हम दोस्त अक़ारिब *(Relatives)* के साथ मुहब्बत का बयान नहीं करते बल्कि अमली तौर पर उसके तकाज़ों को पूरा करते हैं। उनकी ग़म ख़ुशी में शामिल होते हैं। उनकी ज़ुबान और शख़्सियत का हर मुमकिन लिहाज़ रखते हैं। ताकि हमारे दोस्त को ये यक़ीन हो कि हम उसके हक़ में मुख़लिस *(Sincere)* हैं। यही अल्लाह और उसके रसूलुल्लाह ﷺ से मुहब्बत के बारे में भी होना चाहिए। यानी अल्लाह और उसके नबी के अहकाम और सुन्नत का एहतिराम किया जाए।

धोखा नहीं देना

इस्लाम सच्चाई, ईमानदारी और हक़ का हुक्म देता है धोखा, दग़ाबाज़ी या ख़यानत वग़ैरह मोमिन की सिफ़त नहीं हो सकती बल्कि मुनाफ़िक़ ही ऐसा करता है या वो शख़्स जिसमें ना ईमान का कोई हिस्सा है और ना वो अपने रब का ख़ौफ ही दिल में रखता है। अल्लाह तआ़ला ने इसकी एक मिसाल क़ुरआन में बयान करते हुए ऐसा करने वालों के लिए तबाही और हलाकत की वओ़द दी है।

"*बड़ी खराबी है नाप तौल में कमी करने वालों की।*" (सूरह मुतफ़्फ़िफ़ीन 83/1) ये एक बड़ी अख़लाक़ी बीमारी है जिसका नतीजा दुनिया

व आख़िरत में तबाही है। आप ﷺ ने फ़रमाया कि जो क़ौम नाप तौल में कमी करती है तो अल्लाह उस पर क़हतसाली (सूखा), सख़्त मेहनत और हाकिमों का ज़ुल्म मुसल्लत कर देता है। (सुनन इब्ने माजा 4019 सहीह) झूठ और बातिल कभी कामयाब नहीं होता भले ही वक़्ती तौर पर उसमें कुछ फ़ायदा नज़र आए। जैसा सूरह युसुफ़ में फ़रमायाः

"और ये भी कि अल्लाह दगाबा़जों के हथकण्डे चलने नहीं देता।" और इसका अंजाम क्या हुआ ये आप सूरह युसुफ़ की तिलावत और ग़ौर फ़िक्र करने से बख़ूबी जान सकते हो। आखिर जीत हक़ और सच्चाई की होती है। वही कामयाब होता है। बातिल यक़ीनन नाबूद होने (मिटने) वाला है। अल्लाह तआ़ला ने सूरह अम्बिया में फ़रमाया–

''*बल्कि हम सच को झूठ पर फेंक मारते हैं बस सच झूठ का सिर तोड़ देता है और वो उसी वक़्त नाबूद हो जाता है। तुम जो बातें बनाते हो वो तुम्हारे लिए बाइस ख़राबी हैं।*'' (21/18)

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि हर दग़ाबाज़ के लिए क़यामत में एक झण्डा होगा। (सहीह बुख़ारी, अलहील) यानी लोग इससे उसे धोखेबाज, दग़ाबाज़ की तरह पहचान लेंगे और उसके लिए क़यामत में रुसवाई और अ़ज़ाब का सबब होगा। अबू हुरैरा रज़ि॰ से रिवायत है कि रसूलुल्लाह ﷺ एक शख़्स के पास से गुज़रे वो अनाज ग़ल्ला बेच रहा था। आपने उससे मालूम किया, तुम किस क़ीमत पर बेच रहे हो? उसने आपको बताया तो आप पर वही *(Revealation)* नाज़िल हो गई। आप उसके अंदर हाथ दाख़िल करें। बस आपने अपना हाथ उसमें दाख़िल किया तो वो गीला हो गया। रसूलुल्लाह ﷺ ने फरमाया, जिसने धोखा दिया वो हममें से नहीं। (सुनन अबी दाऊद, 3452 सहीह)

आप ﷺ ने उससे उसकी क़ीमत के बारे में मालूम किया ही था कि आप पर अल्लाह सुब्हानहू व तआ़ला की तरफ़ से वही नाज़िल हो गई। इससे पहले तो ये मालूम हुआ कि आप पर वही सिर्फ़ क़ुरआन ही नाज़िल नहीं होती थी बल्कि इस्लाम के दूसरे अहकाम क़वानीन और मसलों के बारे में भी अल्लाह का हुक्म नाज़िल होता था। इससे ये बात भी ज़हन नशीन कर लेनी चाहिए कि

नबी ﷺ की ज़ुबान से सिर्फ़ हक़ ही निकलता था। हक़ के सिवा और कुछ नहीं। बेचने वाला ताजिर उसमें मिलावट करता था। बाहर से अच्छी नज़र आती मगर अंदर मिलावट व धोखा मिला होता। ऐसा करने वालों को अल्लाह का फ़रमान आप की ज़ुबाने मुबारक से फ़रमा दिया गया कि ऐसे लोग मुसलमान नहीं हो सकते वो हममें से नहीं यानी उम्मत मुस्लिमा से नहीं। यानी उसके अंदर ईमान नहीं उसमें खोट है। इस्लाम धोखा का दीन नहीं ये तो सच्चाई और ईमानदारी का दीन है, अल्लाह इसे ही पसंद करता है और इसी की नसीहत और तरग़ीब देता है।

धोखा देने के नुक़सान इससे भी ज़्यादा हैं और इसमें पूरी उम्मत ही की ख़यानत है। तिजारत और आपसी लेन-देन में इसकी मुमानियत इस हदीस़ से वाज़ेह और साफ़ हो गई। एक दूसरी क़िस्म जो आज मुआ़शरे में आम होती जा रही है वो है कि अक्सर आदमी धोखा से इम्तिहान में पास होते हैं या झूठे दस्तावेज *(Certificates)* हासिल करते हैं। इससे वो जो मक़ाम हासिल करते हैं हक़ीक़त में वो उसके हक़दार नहीं होते जो सारे मुआ़शरे के लिए नुक़सान दायक है। दूसरे ऐसे लोगों के इल्म का मेयार बहुत पस्त *(Low standard)* होगा। जो शख़्स जाली तरीक़े से इम्तिहान पास करता है वो दूसरे लोगों की सहीह तरीक़े से कैसे देखभाल और रहनुमाई कर सकता है? इससे हुकूमत का भी नुक़सान होता है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, मोमिन भोलाभाला और शरीफ़ होता है और फ़ाजिर (गुनाहगार) फ़रेबी व कमीना होता है। (बुख़ारी, अदब अलमुफ़रद, 418, सहीह) यानी धोखा देने वाला मोमिन नहीं बल्कि फ़ाजिर गुनाहगार होता है जो फ़रेब व धोखा का सहारा लेता है।

आप ﷺ ने फ़रमाया जो शख़्स किसी को नुकसान पहुंचाए अल्लाह उसे नुकसान पहुंचाएगा और जो शख़्स दूसरे को तकलीफ़ दे अल्लाह उसे तकलीफ़ देगा। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 1940 सहीह) अक्सर लोग कहते हैं और देखने में भी आता है कि लोग धोखा देते बुराई करते मगर फिर भी कामयाब होते हैं। पहली बात तो ये कि ये सब कुछ वक़्त के लिए होता है उसकी जिंदगी या आने वाली पीढ़ी में बाल बच्चों में इसके नुक़सान नज़र आ सकते हैं। वो मुसीबतों में मुबतला हो सकते हैं या नाफ़रमान हो सकते हैं। या वो ख़ुद अपने बुढ़ापे में

परेशानियों से जूझ सकते हैं। फिर इसमें ये ज़रूरी नहीं कि धोखेबाज को अपने धोखे की सज़ा यहीं दुनिया में ही मिल जाए बल्कि उसको इसकी सज़ा तो जरूर मिलेगी और वो होगी आख़िरत की सज़ा जो ना ख़त्म होने वाली हो सकती है और वहाँ उसके रिश्तेदार कोई फ़ायदा नहीं दे सकेंगे ना उसकी सज़ा को कम कर सकेंगे।

आप ﷺ का फ़रमान है कि जो शख़्स तुम्हारे पास अमानत रखे उसे अमानत अदा कर दो और जो शख़्स तुझ से ख़यानत करे उससे ख़यानत ना करो। (सुनन अबी दाऊद, 3534 सहीह) यानी जो तुम्हें धोखा दे उसे भी तुम धोखा ना दो। उसके आमाल (कर्म) उसके साथ और तुम्हारे आमाल तुम्हारे साथ। हर इंसान को उसके अमल का बदला मिलकर रहेगा और हर शख़्स को उसके अमल का अजर सवाब मिलेगा।

धोखा इंसान के दिल को काला कर देता है और चेहरे पर नापसंदगी और मायूसी डाल देता है। बहुत से लोग अपने माल में मिलावट करते, उसकी हक़ीक़त को छुपाते, उसके एब को छुपाते, झूठ बोलते, क़ीमत में कमी और ज़्यादती करने के तरीक़े इस्तेमाल करते। ऐसे ही शादी के लिए धोखे की मुख़्तलिफ़ शक्ल देखने में आती हैं। कुछ लोग मशवरा देने में ख़यानत करते। जबकि जिससे मशवरा लिया जाए वो अमीन होता है। ईमानदारी से जाइज़ मशवरा देगा और उसके राज़ को दूसरों पर ज़ाहिर नहीं करेगा। अल्लाह ने जिस किसी को कोई इख़्तियार, ओहदा या जिम्मेदारी सौंपी उसको ईमानदारी से निभाए। हर एक को उनके साथ मुख़लिस *(Sincere)* होना चाहिए जो उसके मातहत हैं। हाकिम को रियाया *(Public)* के लिए और रिआ़या को हाकिम के लिए, मालिक *(Employer)* को अपने मातहतों *(Employee)* के लिए और मातहत को मालिक के लिए, घर के मुखिया को अहल के लिए और अहल बीवी बच्चों को मुखिया के लिए मुख़लिस होना चाहिए बिना किसी धोखा या ख़यानत के। हर किसी को अपने काम और ज़िम्मेदारियों को शरीअ़त के तक़ाज़ों के मुताबिक़ सरे अंजाम देना चाहिए। हर एक को इसका एहसास होना चाहिए कि उसे अल्लाह के सामने पेश होना है।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया तिजारती क़ाफ़िले को ख़रीद फ़रोख़्त के लिए ना मिलो (बाजार से बाहर) और तुम में से कोई किसी की बैअ पर बैअ ना करे *(Rate interruption)* और बकरी ऊँटनी का दूध मत रोको (थन में) अगर कोई ऐसा जानवर ख़रीद लेता है तो दूध निकालने के बाद उसे इख़्तियार है कि उसे अपने पास रखे या चाहे तो वापस कर दे, एक साअ़ खजूर भी उसके साथ दे। (सुनन अबी दाऊद, 3443 सहीह) रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया वो शख़्स मलऊन *(Cursed)* है जो ज़मीन के बीज बदल दे, वो शख़्स मलऊन है जो अंधे को ग़लत रास्ते पर लगा दे (मुसनद अहमद, 2817) किसी के माल या ज़मीन में फेर बदल करना या उसमें नुकसान पहुंचाना या नाहक़ हासिल करना मना है और ऐसे शख़्स पर लानत भेजी गई है। इसी तरह एक मजबूर, कमज़ोर, बेसहारा और ज़रूरतमंद को धोखा देना भी मना है और इस पर भी लानत भेजी गई है यानी उसे सज़ा और अज़ाब की ख़बर दी गई है।

ये अल्लाह को इख़्तियार है कि वो किसी शख़्स के साथ कैसा सुलूक करे इसके इनामात या सज़ा देने के तरीक़ों का इल्म भी सिर्फ़ उसी को है और कुदरत भी सिर्फ़ उसी को है। अगर सच बोला जाएगा तो बरकत होगी और अगर झूठ बोलेंगे या धोखा का सहारा लेंगे तो बरकत नहीं होगी और बाज़ दफ़ा नुकसान भी होता है। एक मिसाल देखिए उसकी सज़ा देने का।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया तुमसे पहले के लोगों में एक शख़्स दूसरी जगह शराब बेचने गया और शराब में उसने पानी मिलाकर कई गुना कर लिया। शराब बेचने के बाद उसने एक बंदर ख़रीदा और किश्ती में सवार होकर चल पड़ा। जब समुंदर के बीच पहुंचा तो अल्लाह ने बंदर के दिल में उसके पैसों की थैली के बारे में ये बात डाली कि वो उसे उठाकर किश्ती के बांस के ऊपर चढ़ जाए। चुनांचे बंदर ने अपने मालिक के पैसों की थैली खोली। ये शख़्स उसे देख रहा था। बंदर ने उसमें से एक अशरफ़ी निकाली और समुंदर में फेंक दी और एक निकाली जिसे किश्ती में डाल दी। इस तरह उसने पूरी रक़म आधी आधी कर दी। (तरग़ीब व तरहीब, 925 सहीह) यानी पानी की कमाई पानी में चली गई और उसकी शराब की क़ीमत उसको मिल गई।

हुसने कलाम

इंसान जब बात करे तो साफ़ सुथरी, हक़ गोई और हसन करे। मुसलमान के लिए ये लाज़िम है कि वह अपने अख़लाक़ में हर शूबे में ख़ूबसूरती और पाकीज़गी इख़्तियार करे और उसका मुज़ाहरा करे। हुसने इख़लाक़ ईमान का हिस्सा है। अल्लाह तआ़ला और उसके रसूलुल्लाह ﷺ ने हुसने कलाम की तलक़ीन की है। जैसा कि फ़रमाया गया कि–

"ए ईमान वालो! अल्लाह तआ़ला से डरो और सीधी सीधी (सच्ची) बातें किया करो।" (सूरह अहज़ाब 33/70)

यानी ऐसी बात जिसमें ना खोट हो, ना मुकर जाना, ना धोखा और ना फ़रेब बल्कि सच और हक़ हो। ज़ुबान से निकली हुई हर बात हक़ व सदाक़त से बाल बराबर भी ख़िलाफ़ ना हो। और अगर कोई बे इल्म (जाहिल *Ignorant*) लोग बातें करने लगें तो उनसे किनारा कशी कर लो। इल्म वाले समझदार लोग बेवक़ूफ़ जाहिल लोगों से उलझते नहीं बल्कि उनसे बचाव का रास्ता इख़्तियार करते हैं और बेफ़ायदा बहस नहीं करते।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि जिसको अल्लाह और क़यामत पर ईमान हो वह बुरी बात मुंह से ना निकाले। अच्छी बात कहे या ख़ामोश रहे। (सहीह बुख़ारी किताब अदब) कोशिश यही होनी चाहिए कि अच्छी बात कहे या चुप रहे या बुरी बात से बचा रहे, ये भी सदक़ा है और इसमें भी अल्लाह तआ़ला ने अजर व सवाब रखा है। अक्सर आदमी जानते हुए या अनजाने में ऐसी बात कर देता है कि उसको इल्म व अहसास नहीं होता कि उसने क्या बात कही, इसका मतलब क्या है और इसका क्या असर हो सकता है। उसको ये मालूम नहीं चल पाता कि उसने क्या कहा जो अल्लाह की नाराज़गी का सबब बन सकता है। इसलिए आदमी को चाहिए कि वह सोच समझकर नपे तुले अल्फ़ाज़ ज़ुबान से निकाले। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि बंदा कभी ऐसी बात मुंह से निकालता है जिसमें अल्लाह की रज़ामंदी होती है वो उस पर कुछ ख़्याल नहीं करता हालांकि अल्लाह उसकी वजह से उसके दर्जे बुलंद कर देता है। और कभी बंदा अल्लाह की नाराज़गी की बात मुंह से निकाल बैठता है, वो

उसको बुरा या गुनाह नहीं समझता लेकिन उसकी वजह से जहन्नम में गिर जाता है। (सहीह बुख़ारी, किताब रिक़ाक) अल्लाह की रज़ामंदी की बात ये है कि किसी की भलाई की बात कहे जिससे उसको फ़ायदा पहुंचे और अल्लाह की नाराज़गी की बात ये है कि दूसरे को नुक़सान पहुंचे। लिहाजा ऐसी बात ना कहे। मतलब ये कि आदमी सोच समझ कर बात कहे और कोशिश यही रहे कि उससे मक़सूद दूसरों की भलाई व ख़ैर ख़्वाही हो।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया (जहन्नम से दूर और जन्नत से करीब करने वाले आमाल के बारे में तलक़ीन करते हुए) क्या मैं तुम्हें इन तमाम चीज़ों की जड़ की ख़बर ना दूं *(Key root)*? आपने अपनी ज़ुबान पकड़ी और फ़रमाया, इस को अपने काबू में रख। (रावी ने कहा) क्या हम जो बोलते हैं उस पर हमारी पकड़ होगी? आप ने फ़रमाया, तुझे तेरी माँ गुम करे, ए मुआ़ज़! लोगों को उनके मुंह और नाक के बल आग में नहीं गिराएगी (कोई चीज़) मगर उनकी ज़ुबान से कही गई बातें। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2616 सहीह) ज़ुबान और शर्मगाह दो चीजें सबसे ज़्यादा हलाक करने वाली हैं अगर इंसान इनकी हिफ़ाज़त करे तो जन्नत की फ़लाह व कामयाबी नसीब हो सकती है। इमाम शाफ़ई़ रह. का कितना बेहतरीन क़ौल है कि "ऐ मुसलमान अपनी ज़ुबान को महफ़ूज़ रख, कहीं वो तुझे काट ना डाले, बेशक वो अज़्दहा है। बहुत से लोग कब्रस्तान में ज़ुबान से हलाक शुदा पड़े हैं, हालांकि दुनिया में ऐसे बहादुर थे कि उनसे बडे-बड़े ज़बरदस्त ख़ौफ़ खाते थे।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जहन्नम से बचो चाहे खजूर का एक टुकड़ा देकर, अगर ये भी ना हो सके तो अच्छी बात कहकर। और एक दूसरी हदीस़ में रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जो शख़्स ज़मानत दे उस चीज़ की जो उसके दोनों जबड़ों के बीच है (ज़ुबान) और जो उसके दोनों टांगों के बीच है (शर्मगाह) तो मैं उसके लिए जन्नत की ज़मानत देता हूँ (सहीह बुख़ारी, किताब रिक़ाक़) और एक दूसरी हदीस़ में फ़रमाया कि बेशक लोगों में से बदतरीन शख़्स वो है जिससे लोग उसकी फ़हशगोयी (बदज़ुबानी) से बचने क लिए उससे मिलना छोड़ दें। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 1311 सहीह) ज़ुबान और शर्मगाह ऐसी दो चीज़ें हैं जिनसे ज़्यादातर कबीरा गुनाह सरज़द होते

हैं। इन्ही से मुआ़शरे में ज़्यादातर फ़ितना और फ़साद पैदा होते हैं। ऐसा शख़्स अपने किरदार और अख़लाक़ से गिर जाता है। मुआ़शरे में उसकी कोई इज़्ज़त नहीं रहती और लोग उससे मिलना तक तर्क कर देते हैं। लोगों की मजलिसों में तो अक्सर बेहूदागोयी, फ़हश, चुग़ली, ग़ीबत और बेमक़सद व लायानी चीज़ों पर गुफ़्तगू होती है और उसी में लुत्फ़ उठाते हैं। इनसे ना उसे ख़ुद को कोई फ़ायदा पहुंचता है और ना मुआ़शरे को। आज के ख़ुशहाल और माल की फ़राग़ी रखने वाले लोग इस बुराई में ज़्यादा मुलव्विस (शामिल) नज़र आते हैं। ग़रीब गुरबा तो बेचारे अक्सर अपने दिन भर की दो रोटी कमाने में मशगूल रहते हैं और थके हारे घर आकर बेसुध सो जाते हैं। रसूलुल्लाह ﷺ ने ऐसे ही लोगों के बारे में फ़रमाया कि, "मेरी उम्मत के बदतरीन लोग वो हैं जिन्हें अनेक निअ़मतों से नवाज़ा गया। जो मुख़्तलिफ़ क़िस्म के खाने और रंगारंग लिबास पहनते रहे लेकिन वो बदकलाम थे।(तरग़ीब व तरहीब,1069, सहीह)

सूरह नूर में अल्लाह तआ़ला ने आ़ईशा रज़ि॰ पर लगी तोहमत के बारे में आयात नाज़िल की। इसमें कुछ लोगों ने मुनाफ़िक़ अब्दुल्लाह बिन उबई का साथ देते हुए, मामले की तहक़ीक़ किए बग़ैर और उसकी सच्चाई व हक़ीक़त को बिना जाने और बग़ैर सोचे समझे आ़ईशा रज़ि॰ पर तोहमत लगाने में शामिल हो गए। इस पर अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि:

''जब तुम इसे अपनी ज़ुबानों से नक़ल दर नक़ल करने लगे और अपने मुंह से वो बात निकालने लगे जिसके मुताल्लिक़ तुम्हें ख़बर ना थी, गोया तुम उसे हल्की बात समझते रहे, लेकिन अल्लाह तआ़ला के नज़दीक तो बहुत बड़ी बात थी।'' (सूरह नूर, 24/15)

अल्लाह को ये क़तई पसंद नहीं आया जबकि लोग इस बोहतान *(Blame)* को हल्की बात समझते रहे। दूसरे बोहतान लगाने वालों ने ये ना सोचा कि ये इतनी बड़ी गुनाह, इसकी तहक़ीक़ कर लें, बल्कि जो सुना उसे बिना जाने आगे फैला दिया। ऐसा करना अल्लाह को पसंद नहीं आया और यही बात सूरह हुजरात में भी फ़रमाई है कि—

''ऐ मुसलमानों अगर तुम्हें कोई फ़ासिक़ ख़बर दे तो तुम उसकी अच्छी तरह तहक़ीक़ कर लिया करो ऐसा ना हो कि नादानी में किसी क़ौम को ईज़ा

पहुंचा दो फिर अपने किए पर पशेमानी (शर्मिंदगी) उठाओ।'' (सूरह हुजरात 49/6)

ख़ासतौर पर जब आज का मुआ़शरा *WhatsApp* और *Social Media* की गिरफ़्त में सख़्ती से जकड़ चुका, इस आयत में बयान किया गया हुक्म इनफ़िरादी और इज्तिमाई *(Individual & Congregation)* तौर पर बहुत अहम है। एक तो आज तक़रीबन हर शख़्स *Social Media* पर ही ज़्यादा वक़्त लगाता है यहाँ तक कि अपने अहल की परवरिश और तरग़ीब का हक़ भी ठीक से अदा नहीं कर पाता दूसरे इल्म की कमी की वजह से जो मिला उसे पूरा समझा या नहीं, मगर आगे अपने दोस्त अहबाब को एक अंगुली के इशारे से भेज देता है। और पल भर में जंगल की आग की तरह पूरे मुआ़शरे में फैल जाता है। जिससे मुआ़शरा ही नहीं बल्कि मुल्क का अमन, भाईचारा और *Security* तक को ख़तरा लाहिक़ हो जाता है। और बदअमनी, दंगा फ़साद, क़त्ल ग़ारत और बेचैनी का सबब बन जाता है। हर शख़्स की ये ज़िम्मेदारी है कि उसके पास जब कोई ख़बर आए तो उसे आगे भेजने से पहले उसकी तहक़ीक़ कर ले। इस्लाम में इसका हुक्म दिया गया है कि आने वाली ख़बर को अपने-अपने भरोसेमंद बाइक़तिदार मक़ामी अमीर को पहुंचाए *(Local authority)* ताकि वो इसकी तहक़ीक़ के लिए मुनासिब क़दम उठा सकें। फिर जैसा अमीर मुनासिब समझे फ़ैसला ले इस तरह यही कड़ी सरकारी निज़ाम तक पहुंच जाएगी। ताकि ग़लतफ़हमी या झूठी ख़बर के फ़ितने और बुराई से मुआ़शरे की हिफ़ाज़त की जा सके। अबू हुरैरा रज़ि. से रिवायत है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, किसी शख़्स के गुनाहगार होने के लिए काफ़ी है वो हर सुनी सुनाई बात बयान कर दे। (सुनन अबी दाऊद, 4992 सहीह) ऐसा करना एक गुनाह है और करने वाला इस्लाम की शरियत के मुताबिक़ गुनाहगार है।

आदमी जब किसी से मुख़ातब हो या बात करे तो अदब के साथ उससे मुतवज्जह हो या फिर पूरी तरह मुंह फेर ले। रसूलुल्लाह ﷺ के औसाफ़ *(Qualities)* बयान करते हुए अबू हुरैरा रज़ि. बयान करते हैं कि जब आप किसी की तरफ़ मुतवज्जह *(Inclined, facing)* होते तो पूरी तरह

मुतवज्जह होते और जब रुख़ फेरते तो मुकम्मल रुख़ फेरते। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 1155 सहीह)

इंसान को चाहिए कि अपने अख़लाक़ में नरमी पैदा करे जो उसके अंदर ख़ैर पैदा करेगी। जब बात करे तो नरमी से करे। नरमी उसकी ज़ीनत को बढ़ा देगी और सुनने वाला भी बात को समझ सकेगा। अल्लाह तआला ने जब मूसा अलै. और हारून अलै. को फ़िरऔन के पास भेजा तो यही हुक्म दिया कि उसे नरमी से सिखाना ताकि वो समझ जाए।

''उसे नरमी से समझाओ कि शायद वो समझ ले या डर जाए।'' (सूरह ताहा, 20/44) क्योंकि सख़्ती से लोग दूर भागते हैं और नरमी से क़रीब आते हैं और उससे मुतअस्सिर होते हैं। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया या आयशा! अल्लाह नरमी पसंद करता है और ख़ुद भी नरम है। और नरमी पर वो देता है जो सख़्ती या और किसी चीज़ पर नहीं देता। (सहीह मुस्लिम, किताब नेकी और अदब)

दो रुख़ा *(Dual face)* शख़्स बुराई लिए होता है। ये एक झूठ और ख़यानत की सिफ़त है। जिसका मक़सद धोखा और फ़रेब से काम लेना होता है। मोमिन दो रुख़ा नहीं होता, ना उसकी सोच व किरदार वक़्त के मौक़े के लिहाज़ से बदलता है और ना किसी शख़्स की हैबत और ख़ौफ़ से। उसका मौक़िफ़ *(View)* अटल और खरा होता है। उसकी हक़ गोयी में कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता चाहे अपनों से हो या पराय से। जो लोग दो ज़ुबाने इस्तेमाल करते हैं वो चंद दिनों के बाद ही ज़लील हो जाते हैं। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जिस शख़्स के दुनियां में दो तरह के चेहरे होंगे *(Dual face)* क़यामत के रोज़ उसकी दो ज़ुबानें आग की होंगी। (सुनन अबी दाऊद, 4873 सहीह)

किसी शख़्स की बुराइयों को टटोलना, दूसरों पर उनको बयान करना, बदगुमानी करना और दूसरों के सामने किसी की बुराई करना जैसी सब सिफ़ात इस्लाम में सख़्ती से मना किया गया है और ऐसा करने वाले के लिए क़ुरआन और अहादीस़ में अज़ाब की ख़बर दी गई है। अल्लाह का फ़रमान है कि:

''ऐ ईमान वालो! बहुत बदगुमानी से बचो, यक़ीन मानो कि बाज़

बदगुमानियाँ गुनाह हैं और भेद ना टटोला करो और ना तुम में से कोई किसी की ग़ीबत करे। क्या तुममें से कोई भी अपने मुर्दा भाई का गोश्त खाना पसंद करता है? तुमको इससे घिन आएगी और अल्लाह से डरते रहो। बेशक अल्लाह तौबा क़ुबूल करने वाला मेहरबान है।'' (सूरह हुजरात, 49/12)

देखिए अल्लाह तआ़ला ने उन्हें गुनाह करार दिया। और दूसरे की बुराई (ग़ीबत) करने के बारे में तो फ़रमा दिया कि ये ऐसा घिनौना जुर्म है कि अपने मुर्दा भाई का गोश्त खाने के बराबर। एक तो इंसान का गोश्त हराम, दूसरे भाई का, तीसरे वो भी मुर्दा का जो ख़ुद एक हराम चीज़ है। तो कितनी शदीद मिसाल दी ऐसे शख़्स के बारे में। किसी की बुराइयों की खोज हराम चीज़ है। किसी की बुराइयों की खोज में लगा रहना ताकि उसको बदनाम किया जाए मना है। बल्कि अगर किसी की कोई बुराई मालूम भी चल जाए तो उसकी परदापोशी करनी चाहिए। ना जाने उसे नदामत हो और तौबा करे और अपनी इसलाह कर ले। जिस शख़्स का किरदार ऐसा हो वो क़ाबिले मज़म्मत (घिनौना) है और ऐसे आदमी की बात मानने और तसदीक़ करने से भी मना कर दिया गया है।

''और किसी ऐसे शख़्स का भी कहा ना मानना जो ज़्यादा कसमें खाने वाला, बे वकार, कमीना, ऐब गो, चुग़लख़ोर, भलाई से रोकने वाला, हद से बढ़ जाने वाला गुनाहगार।'' (सूरह क़लम, 68/10-12)

ये सब गुनाह हैं और इन सिफ़ात को रखने वाले शख़्स का एतबार नहीं करना चाहिए ना उसकी बात माननी चाहिए। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जब मुझे मेराज कराई गई तो मैं एक क़ौम के पास से गुज़रा जिनके नाखून तांबे के थे वो अपने चेहरों और सीनों को नोच रहे थे, मैंने कहा ए जीबरील। ये कौन लोग हैं? उन्होंने कहा, ये वो लोग हैं जो लोगों का गोश्त खाते थे और उनकी इज़्ज़त को नुक़सान पहुंचाने में मसरूफ़ रहते थे। (सुनन अबी दाऊद, 4878 सहीह)

किसी शख़्स को चिड़ाना, उसकी कमी निकालना और दूसरों के सामने हंसी मज़ाक उड़ाकर उसको ज़लील करना हुसने अख़लाक़ नहीं बल्कि एक गुनाह है। इससे बचना चाहिए और किसी के नुक़्स का मज़ाक नहीं बनाना

चाहिए। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, कि अगर कोई आदमी तुझे किसी ऐसी बात से आर दिलाए जिसको वो तेरे बारे में जानता है तो तुम उसे ऐसी चीज़ से आर ना दिलाओ (शर्मिंदा करें) जो तुम उसके बारे में जानते हो और उसे छोड़ दे। उसका वबाल उसी पर होगा और तेरे लिए इसका सवाब होगा। (बुख़ारी, अदब अल गुफ़रद, 1182 सहीह) अलहम्दुलिल्लाह क्या ख़ूबियाँ रखी अल्लाह तआ़ला ने अपने पसंदीदा दीने इस्लाम में अगर दूसरा शख़्स तुम्हारे साथ बुराई करे या बदसुलूकी करे तब भी तुम उसके बारे में ऐसा ना करो और अच्छा सुलूक करो। ये भी एक ऐसी बुराई है जिससे दूसरे को रंज होता है और तकलीफ़ पहुंचती है। नबी ﷺ ने इसे नापसंद किया। हज्ज तुल विदा के सफ़र में सफ़िय्या रज़ि. का ऊँट बीमार हो गया तो रसूलुल्लाह ﷺ ने ज़ैनब बिंते जहश रज़ि. से फ़रमाया, ए ज़ैनब! अपनी बहन सफ़िय्या को एक ऊँट दे दो, क्योंकि उनके पास सवारियाँ ज़्यादा थीं। ज़ैनब रज़ि. ने कहा, क्या मैं आपकी यहूदिया को मांगा हुआ दे दूं? ये बात सुनकर आप इतने नाराज़ हुए कि उनसे बोलना छोड़ दिया और उनसे कोई बात ना की हत्ता कि मक्का पहुंच गए फिर मिना वाले दिन और मदीना वापस पहुंच गए और सफ़र व मौहर्रम भी गुज़र गया। (सिलसिला सहीहा, 1511) यानी दो महीने से ज़्यादा आपने ज़ैनब रज़ि. से बात ना की। सफ़िय्या रज़ि. जो यहूदी थी और इस बात पर उनको चिड़ाया जाता था जिसको नबी ﷺ ने पसंद नहीं किया।

बातचीत संजीदगी से नपी तुली करनी चाहिए। हुज्जत बाज़ी, बड़बोल और गुरूर *(Argumentation & Arrogance)* से बचना चाहिए। इनसे आदमी के अन्दर ख़ुदपरस्ती और दूसरे को कमतर समझने की ख़सलत पैदा हो जाती है जो अपने नफ़्स की इत्तिबा करते हुए हक़ को कबूल नहीं करता और यही कोशिश करता रहता है कि उसकी राय और मौक़िफ़ सहीह है चाहे वो कितना ही हक़ के ख़िलाफ़ या बातिल क्यों ना हो। इस ख़सलत को क़यामत की निशानियों में शुमार किया गया जो बदतरीन लोगों में होगी और बदतरीन लोगों की ख़सलतें बदतरीन ही होती हैं। इसलिए भी इनसे बचना चाहिए। इब्ने मसूद रज़ि. से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया आगाह रहो, बहुत ज़्यादा बहस व मुबाहिसा करने वाले हलाक हो गए, ये बात तीन बार इरशाद

फ़रमाई। (सहीह मुस्लिम, किताब इल्म) रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि हक़ से जहालत बरतना (कबूल ना करना) और लोगों को हक़ीर समझना तकब्बुर है। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 548)

आदमी को बद कलाम और बेहयायी व फ़हश ज़ुबानी से बचना चाहिए। लानत या बद्दुआ जैसे कलाम कहना तो सख़्ती से मना किए गए हैं। ये सब कलाम फ़िस्क़ (गुनाह) हैं। यहाँ तक कि किसी जानवर को भी लानत देने से मना कर दिया गया और हुक्म दिया कि अगर किसी जानवर को लानत दी गई तो उसे अपने पास ना रखो बल्कि उसे छोड़ दो। जब भला लानत का ये हुक्म जानवर के बारे में हो तो किसी इंसान को ऐसी बात कहना कितना बड़ा गुनाह होगा? बद ज़ुबान को अल्लाह पसंद नहीं करता और ये शैतानी अमल है। एक बार जब रसूलुल्लाह ﷺ अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि. के साथ थे तो एक शख़्स ने अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि. को बुरा भला कहा। अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि. ने उसे कोई जवाब ना दिया। उसने फिर दूसरी बार बुरा भला कहा तो अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि. ख़ामोश रहे। फिर उसने तीसरी बार गाली दी तो अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि. ने उससे बदला लिया। जिस वक़्त अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि. ने बदला लिया तो रसूलुल्लाह ﷺ खड़े हो गए (हट गए) तो अबूबक्र ने अर्ज़ किया, ए अल्लाह के रसूल! क्या आप मुझसे नाराज़ हो गए हैं? तो रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, आसमान से फ़रिश्ता नाज़िल हुआ और तुम्हें वो शख़्स जो कह रहा था वो (फ़रिश्ता) उसको झुठला रहा था। जब तुमने बदला लिया तो वहाँ शैतान आ गया। लिहाज़ा जब शैतान आ जाए तो फिर मैं वहाँ नहीं बैठता। (सुनन अबी दाऊद, 4896 सहीह)

इंसान को ख़ुद पसंदी *(Self Pride)* से बचना चाहिए। अल्लाह ने सब इंसानों को एक जान से पैदा किया और उनमें ज़्यादा इज़्ज़तदार वो है जो ज़्यादा तक़्वे *(Good fearing)* वाला है। तकल्लुफ़ के साथ रगें फुलाकर बात करने वाले लोग अल्लाह को नापसंद है। ऐसे लोग बहस करते हैं, मुबालग़ा करते हैं, और दूसरे की बातों में दख़ल देते हैं। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला उस शख़्स को नापसंद करता है जो अपनी ज़ुबान को गाय की जुगाली करने की तरह बार-बार फेरता है। (सिलसिला सहीहा, 880) ऐसे

शख़्स अपनी गुफ़्तगू में मुबालग़े से काम लेते हैं और अपनी ज़ुबान की चालाकी पर फ़ख़्र महसूस करते हैं जो ग़लत है और ऐसा शख़्स ज़्यादा कामयाब नहीं होता। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला का ये अमर साबित है कि दुनिया में से कोई चीज़ बुलन्द ना की जाए मगर ये कि वो उसे नीचा दिखाए। (सुनन अबी दाऊद, 4804 सहीह) यानी इंसान को आजज़ी (विनम्रता) इख़्तियार करनी चाहिए क्योंकि हर बुलंदी के साथ पस्ती *(Down fall)* है।

चापलूसी

ये एक ऐसी सिफ़त है जिसमें इंसान धोखा खा जाता है और सोचता है कि ये हुस्ने अख़लाक़ है जैसे शायस्तगी या शरीफ़ाना अंदाज *(Politeness)* ऐसा नहीं, चापलूसी मुनकर अमल है जबकि शायस्तगी *(Politeness)* हुस्ने अख़लाक़ का हिस्सा है। जैसा कि नरमी के बारे में पहले बयान हो चुका। चापलूसी में आदमी एक चीज़ ज़ाहिर करता है जबकि दूसरी को छुपा लेता है। चापलूसी क़ाबिले मज़म्मत (घिनौना) है और इसकी भाईचारा या दोस्ती में कोई जगह नहीं।

जाफ़र बिन मुहम्मद अल सादिक़ रह. का क़ौल है कि मेरे लिए मेरे भाई का सबसे ज़्यादा बोझ ये है कि वो मुझसे चापलूसी करे और मैं उसके साथ महफ़ूज़ महसूस करता हूँ। ऐसा शख़्स मोमिन कहलाने का हक़दार नहीं जो दिल में बात छुपाए रखे। आदमी किसी ऐसे दुश्मन से ज़्यादा फ़ायदा उठा सकता है जो परेशानियाँ पैदा करे और उसकी ख़ामियाँ बयान करे बजाय ऐसे दोस्त के जो चापलूसी करे और ख़ामियाँ छुपाए। ये मुनाफ़िक़ की एक सिफ़त है। मुनाफ़िक़ की कुछ सिफ़ात सूरह मुनाफ़ीकून की आयत 63/4 में बयान हुई हैं।

“ जब आप उन्हें देखलें तो उनके जिस्म आपको ख़ुशनुमा मालूम हों, ये जब बातें करने लगें तो आप उनकी बातों पर कान लगाएँ, गोया कि ये लकड़ियाँ हैं दीवार के सहारे लगाई हुई।” (63/4)

मुनाफ़िक़ शक्ल सूरत और लिबास की वजह से अच्छा लग सकता हैं।

और बातें भी ख़ुशनुमा करते हैं कि सुनने वालों को अच्छी लगती हैं मगर उनकी बातें बे फ़ायदा हैं क्योंकि उनमें ईमानदारी नहीं होती। वो धोखा और फ़रेब से दूसरे आदमी को माइल *(Attract)* करते हैं। उनकी मिसाल उन लकड़ियों से दी गई है जो दीवार के सहारे लगी हैं और कोई फ़ायदा नहीं पहुंचातीं और उन्हें कोई नसीहत करो तो वो भी बेअसर होती है। और ऐसे ही ख़ुदगर्ज इंसान की बात अच्छी लगती है जो अपना फ़ायदा हासिल करने के लिए चापलूसी करता है।

''बाज़ लोगों की दुनियावी ग़रज़ की बातें आप को ख़ुश कर देती हैं और वो अपने दिल की बातों को गवाह करता है, हालांकि दरअसल वो ज़बरदस्त झगड़ालू है।'' (2/204)

इमाम अबी दाऊद रह॰ अपनी सुनन में किताबुल अदब में बाब लाए हैं "ख़ुशामद के तौर पर एक दूसरे की तारीफ़ करने की कराहत (नफ़रत) का बयान" इसमें हदीस़ बयान की गई है कि एक शख़्स की तारीफ़ बयान की तो आपने फ़रमाया, तुमने अपने दोस्त की गर्दन काट दी, आपने तीन बार ऐसा फ़रमाया (सुनन अबी दाऊद, 4805 सहीह) ऐसा करने से ये अंदेशा है कि जिसकी तारीफ़ उसके मुंह पर की जाए तो उससे उसमें फ़ख़्र पैदा हो सकता है। आदमी को चाहिए कि वो अपनी ज़ुबान को नेकी और भलाई के साथ इस्तेमाल करे उसे बदज़ुबान, बदगोयी फ़हशगोई, झूठ और चापलूसी वग़ैरह करने से महफ़ूज़ रखे। ये सब बुराइयाँ हैं जिसमें कुछ हलाक कर देने वाली हैं।

सामाजिक भाईचारा

(Social Brotherhood)

इस्लाम एक ऐसा दीन है जिसमें अ़द्ल के साथ हर इंसान के हुक़ूक़ को महफ़ूज़ रखा। औरतों, गुलाम नौकर और कमज़ोर तबक़ों को उनके हक़ दिलाए और उनपर होने वाले ज़ुल्म ज़्यादतियों को दूर किया। इस्लाम आने से पहले मुआशरह जात पात, छोटा बड़ा, गोरा काला के फ़र्क़ का शिकार था। औरतों के साथ ज़ुल्म किया जाता। विधवा को हक़ीर और नफ़रत की नज़र से

देखा जाता, आपस में क़त्ल ग़ारत और एक-दूसरे के ख़ून के प्यासे रहते और रंजिश इतनी शदीद होती कि पीढ़ी दर पीढ़ी जारी रहती। इन सब बुराइयों को जड़ से मिटा दिया। जो पहले शदीद अदावत (दुश्मनी) रखते वो एक-दूसरे के भाई बन गए और अपनी जान व माल से एक-दूसरे की मदद को सबक़त करते। इस्लाम ने ऐसा मुआ़शरा पैदा किया जिसमें सब एक जान से पैदा हुए आपस में भाई भाई हैं ना कोई बड़ा है ना छोटा, ना कोई अमीरी की वजह से कोई फ़ज़ीलत रखता ना नसब व ख़ानदान से। औरतों को उनके हुक़ूक़ दिलाए। ग़रीब कमज़ोर और विधवाओं को इ़ज़्ज़त व इकराम का दर्जा दिया। सबको अ़द्ल के साथ मुसावात (बराबरी) की तरग़ीब और तलक़ीन की। चंद मिसालों से समाजी भाईचारा और मसावात को समझने की कोशिश करें। ऐसी बेशुमार ख़ूबियाँ इस्लाम में हैं जिनमें से चंद ये हैं।

नबी ﷺ की हयाते मुबारक में नमाज़ फर्ज़ कर दी गई और उसके लिए लोगों को इत्तला करना भी अज़ान के ज़रिए शुरू हुआ। जब पहली बार अज़ान का हुक्म दिया गया तो नबी ﷺ के सहाबियों में मुअ़ज़्ज़ज़ *(Respected)* कुरैश मौजूद थे, अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि. जैसे जलीलुल क़दर सहाबी मौजूद थे मगर इसका एजाज़ आप ﷺ ने बिलाल रज़ि. को दिया जो एक काले रंग के गुलाम थे। और मुआ़शरे में गुलाम का कोई मरतबा व इ़ज़्ज़त नहीं होती थी। मगर नबी ﷺ ने बिलाल रज़ि. को हुक्म दिया कि उठो, और अज़ान कहो। और बिलाल रज़ि. को अल्लाह ने और उसके रसूलुल्लाह ﷺ ने वो इ़ज़्ज़त बख़्शी जो एक शहंशाह को भी नसीब नहीं होती। यही नहीं बल्कि अल्लाह तआ़ला ने उन्हें उनकी हयात दुनियां में ही जन्नती होने की बशारत भी देदी, जब आपको मेराज पर बुलाया गया तो आपने किसी के ज़मीन पर चलने के कदमों की आवाज़ को सुना और जिबरील अलै. से दरयाफ़्त करने पर मालूम चला कि ये बिलाल के क़दमों की आवाज़ है। जो चलते ज़मीन पर हैं और आवाज जन्नत में चलने की आई।

उसामा बिन ज़ैद रज़ि. एक काले गुलाम थे जिन्होंने नबी ﷺ की मदीना हिजरत के कुछ दिनों बाद ही मदीना हिजरत की। एक बार आपने फ़ौज का एक दस्ता रवाना किया जिसका अमीर एक काले हबशी गुलाम उसामा बिन

जैद रज़ि. को बनाया और उनके मातहत फ़ौजी दस्ते में कबीरा, अक्ल व फहम रखने वाले बड़ी उम्र के सहाबा भी थे जो ऊँचे क़बीले और ख़ानदानों से ताल्लुक़ भी रखते थे। यहाँ भी ऊँचे क़बीले ख़ानदान या ज़ात की बिना पर फ़ज़ीलत देने को जड़ से मिटा दिया गया।

नमाज फ़र्ज़ होने के बाद बा जमात मस्जिद में अदा करना वाजिब ठहरा दिया जाता है। एक इमाम होता जो लोगों की रहनुमाई करता और नमाज़ पढ़ाता जिसके लिए ऐसे शख़्स को मुक़र्रर किया जाता जो अल्लाह की किताब का ज़्यादा इल्म रखता, और अगर कई इसके हक़दार हों तो फिर सुन्नते नबी के इल्म रखने को तरजीह दी जाती हर शख़्स इमाम की इत्तिबा (पैरवी) करता। सब एक सफ़ में कंधे से कंधा और पैर से पैर मिलाकर आपस में सीसा पिलाई दीवार की मानिंद सफ़बस्ता हो जाते। किसी के दरमियान किसी भी वजह से कोई फ़र्क़ नहीं किया जाता। राजा और फ़क़ीर, अमीर ग़रीब, गोरा काला, बड़ा छोटा और बूढ़ा जवान एक सफ़ में खड़े होते। जो आता रहता वो सफ़ में अगली जगह खड़ा हो जाता। सब इमाम की अल्लाहु अकबर तकबीरात की पैरवी करते और अपनी नमाज़ मुकम्मल करते। दूसरे मज़हबों की तरह नहीं जहाँ उनके इबादतगाहों में जाति और दीगर वुजूहात के सबब पाबंदियाँ लगी हैं और उनको इबादत की इजाज़त तक नहीं दी जाती।

खाने की बात हो तो सब मिलकर साथ बैठते। एक ही थाली से सब अपना-अपना निवाला लेते। घर के लोग मेहमान, दोस्त अक़ारिब में कोई फ़र्क़ ना होता साथ मिलकर खाने की इतनी तलक़ीन की गई कि फ़रमा दिया गया कि साथ मिलकर खाने में बरकत होती है। सुब्हान अल्लाह क्या हुक़ूक़ अता किए बराबरी के इस्लाम ने, दूसरे मज़हबों में तो इस इक्कीसवीं सदी के तरक़्क़ी याफ़्ता दौर में भी नीची जाति के लोगों के हाथ का खाना खाना तो दूर उनकी किचन में मौजूदगी तक को पाप माना जाता है।

एक मरतबा नबी ﷺ की ख़िदमत में कुरैश के बड़े लोग बैठे गुफ़्तगू कर रहे थे। इतने में इब्ने उम्मे मकतूम रज़ि. तशरीफ़ ले आए जो नाबीना (अंधा) थे। कुरैश के बड़े लोगों की मौजूदगी में उनका आना अच्छा ना लगा। जिस पर अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआन नाज़िल फ़रमा दी:

"उसके पास एक नाबीना आया। तुझे क्या ख़बर शायद वो संवर जाता। या नसीहत सुनता और उसे नसीहत फ़ायदा पहुंचाती।" (सूरह अबस 80/1-4)

अल्लाह तआ़ला ने क़ौम ख़ानदान या अमीर ग़रीब की वजह से किसी शख़्स के साथ फ़र्क़ महसूस करने से क़तअन मना फ़रमा दिया। और ना ही नसब से कोई किसी पर फ़ज़ीलत रखता है। बल्कि अल्लाह के नज़दीक सबसे इज़्ज़त वाला वो है जो सबसे ज़्यादा परहेज़गार और तक़्वा *(God fearing)* वाला है। अल्लाह तआ़ला तुम्हारे रंग रूप या चेहरों को नहीं देखता बल्कि वो तुम्हारे दिल को देखता है। जो जितना अल्लाह से डरेगा, उसकी फ़रमांबरदारी करेगा, उसके अहकाम और क़वानीन की हिफ़ाज़त करेगा जितने नेक अमल करेगा और जितना बुराइयों व मुनकरात से बचेगा वो उतना अल्लाह के क़रीब और उसका महबूब होगा।

किसी को जिस्मानी या दूसरे नुक़्स की वजह से हक़ीर *(Inferior)* समझना भी इस्लाम में मना कर दिया। किसी भी शक्ल में किसी आदमी की इज़्ज़त को नुक़सान पहुंचा कर उसकी तौहीन करना या उसको ज़लील करना मना है। सफ़िय्या रज़ि. का वाक़्या पहले बयान हुआ जिसमें उनको तंज़ के तौर पर यहूदिया कह कर पुकारना नबी ﷺ को इतना बुरा लगा कि दो महीने से ज़्यादा बातचीत नहीं की।

ऐसी बेशुमार मिसालें दी जा सकती हैं जिनमें इस्लाम की बेमिसाल ख़ूबियों का ज़िक्र हो। मुख़्तसर सी बात ये है कि इस्लाम ने मुआ़शरे में अ़द्ल के साथ मुसावात को क़ायम किया और किसी को दूसरे पर अगर कोई फ़ज़ीलत दी गई है तो वो उसके नेक आमाल की वजह से है। हर इंसान को उसके हक़्क़े अ़द्ल के साथ पहुंचा दिए गए। ना किसी पर ज़ुल्म हो ना कोई ज़ुल्म करे। ये इस्लाम ही है जिसने जाहिलियत (अज्ञानता) की सब बुरी रस्मों को ख़त्म कर दिया और ऐसा मुआ़शरा क़ायम किया जिसकी मिसाल दुनिया के किसी दौर में नहीं मिलती। अब तक इस किताब में जो भी बयान किया गया उनके बारे में इस्लाम के नाफ़िज़ कर्दा अहकाम और क़वानीन *(Ruling)* पर अगर खुले दिल से ग़ौर किया जाए तो इस्लाम की फ़ज़ीलत

और उसकी ख़ूबसूरती ख़ुद-ब-ख़ुद पाठकों के ज़हन नशीन हो जाएगी। यहां एक बार फिर से ख़ुलासा करना बहुत ज़रूरी और अहम है कि आदमी किसी भी दीन को जानने समझने के लिए उसके मानने वालों को देखकर उसकी तस्वीर अपने ज़हन में ना बनाए। अगर किसी दीन को समझना है तो उसकी बुनियादी किताबों और अहकाम को देखें तब ग़ौर करें। यक़ीनन ऐसा करने वाला हर शख़्स इस्लाम से मुतअस्सिर हुए बिना नहीं रह सकता। इस्लाम एक बेमिसाल दीन है और इस पर अमल करते हुए मुआ़शरा भी बेमिसाल ही क़ायम होगा। बशर्ते कि इस्लाम के अहकाम और क़वानीन को अपनी ज़िंदगी के हर अमल का हिस्सा बना लें और इसी के मुताबिक़ अपनी ज़िंदगी के शब व रोज़ (दिन-रात) का हर पल बिताए।

मुआशरी भाईचारा और मेल-जोल अच्छा हो इसकी भी इस्लाम ने बड़ी तरग़ीब की है। इस्लाम का मरकज़ी *Focal Point* अल्लाह का ख़ौफ़ और उसकी रज़ा है। क्योंकि अगर इंसान इसको अपना ले या इसके क़रीबी दायरे में ख़ुद को ले आए तो फिर उससे किसी गुनाह बुराई या ज़ुल्म व ज़्यादती का तसव्वुर ही नहीं किया जा सकता। समाजी भाईचारा और मेलजोल में भी इसकी बड़ी फ़ज़ीलत रखी गई है। अल्लाह अ़ज़्ज़ा व जल फ़रमाता है कि जो शख़्स एक-दूसरे से मेरी अज़्मत के लिए मुहब्बत करें वो नूर के मिम्बर पर होंगे और अम्बिया व शुहदा उन पर रश्क करेंगे। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2390 सहीह) अबू उमामाह रज़ि. से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जिस शख़्स ने अल्लाह तआ़ला के लिए मुहब्बत की और अल्लाह के लिए बुग़ज़ रखा, अल्लाह के लिए किसी को दिया (मदद) और अल्लाह के लिए ही रोक लिया तो उसने ईमान मुकम्मल कर लिया (सुनन अबी दाऊद, 4681 सहीह) यानी जिसने अल्लाह की ख़ुशी के लिए किसी नेक आदमी से मुहब्बत की या उसकी कोई मदद की और जिसने अल्लाह ही की मुहब्बत के लिए किसी बद अख़लाक़ पापी से नफ़रत और बुग़ज़ किया या उसकी मदद नहीं की (बुराई में) तो उसका ईमान मुकम्मल हो गया यानी उसने ये काम इस्लाम के अहकाम के मुताबिक़ किए। मतलब ये हुआ कि मुआ़शरे में एक मज़बूत तानाबाना नेकी, तक़वा और भलाई की बुनियाद पर हो और बदकार, बेहया, गुनाहगार

पापी से दूर रहकर उसकी बुराई से बचा जाए और मुआ़शरे से ऐसे बुरे अमल की जड़ ही काट दी जाए। अबू दरदा रज़ि. से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, क्या मैं तुम्हें ना बताऊँ कि रोज़ा, नमाज़ और सदक़ा से अफ़ज़ल क्या है? फरमाएँ (या रसूलुल्लाह ﷺ)! आपस में सुलह रखना क्योंकि आपस के ताल्लुक़ात को मिटाना हलाकत है। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2509 सहीह) और यही बात सहीह बुख़ारी की अबू हुरैरा से मरवी हदीस़ में भी आई है कि एक-दूसरे को पीठ ना दिखाओ (मेल-जोल तर्क ना करो) बल्कि भाई भाई अल्लाह के बंदे बनकर रहो (किताब फ़रायज़) लेकिन इसके लिए ज़रूरी है कि मेल-जोल दोस्ताना नेक सालेह लोगों के साथ हों और बुरी सोहबत से गुरेज़ करें और नापसंद करें। जैसाकि अल्लाह का फ़रमान है कि

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह तआ़ला से डरो और सच्चों के साथ रहो।" (सूरह तौबा 9/119)

रूहें झुण्ड की शक्ल में साथ रहती जिनके दरमियान वहाँ मुहब्बत होती दुनिया में भी उनके दरमियान मेलजोल व मुहब्बत होती और जो वहाँ आपस में ना मिलती दुनिया में भी वो अलग रहते। नेक लोग नेक लोगों के साथ ही मेल-जोल करना पसंद करते हैं और बुरे लोग बुराई की सोहबत पसंद करते जैसा कि अल्लाह ने भी फ़रमाया है-

"ख़बीस (नापाक, बुरी) औरतें ख़बीस मर्दों के लिए और ख़बीस मर्द ख़बीस औरतों के लिए और पाक औरतें पाक मर्दों के लायक़ हैं और पाक मर्द पाक औरतों के लायक़ हैं। ऐसे पाक लोगों के मुताल्लिक़ जो कुछ बयान कर रहे हैं वो उनसे बिल्कुल बरी हैं, उनके लिए बख़्शीश हैं और इ़ज़्ज़त वाली रोज़ी।" (सूरह नूर 24/26)

इसके एक मायने ये भी हैं कि नापाक बातें नापाक मर्दों के लिए और नापाक मर्द नापाक बातों के लिए हैं और पाकीज़ा बातें पाकीज़ा मर्दों के लिए और पाकीज़ा मर्द पाकीज़ा बातों के लिए। मतलब ये हुआ कि नापाक बातें वही मर्द औरत करते हैं जो नापाक हों। बुरा आदमी बुराई की तरफ़ माइल *(Attract)* होगा और नेक आदमी नेक अमल की तरफ़। अगर मुआ़शरे की बुनियाद अ़द्ल और पाकीज़गी पर होगी तो वो बुराइयों से पाक होगा और

अगर पूरा मुआ़शरा ही बिगड़ जाए तो इक्का दुक्का भला आदमी क्या ख़ाक फ़ायदा पहुँचाएगा। इसलिए इस्लाम ने इस बात पर तवज्जो (ध्यान) दिलाई कि मेलजोल दोस्ती करते वक़्त अपने दीन का ख़्याल रखो, नेक सालेह लोगों से मेलजोल करो। दीन कभी बुराई की तरफ़ नहीं बुलाता। हर दीन में बुराई को पाप ही कहा गया है और हर पाप व गुनाह जहन्नम की तरफ़ ले जाती है जिसमें हलाकत ही हलाकत है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि हर शख़्स अपने दोस्त के दीन पर होता है, इसलिए उसे देख लेना चाहिए कि वो किससे दोस्ती कर रहा है (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2378, सहीह) और जब इसका ख़्याल रख लिया गया कि अच्छे किरदार और उम्दा अख़्लाक़ वाले शख़्स से मेलजोल और दोस्ती करो। घर बनाते वक़्त इसीके मुताबिक़ जगह का इंतिख़ाब करो कि पड़ोसी में ये ख़ूबियाँ मौजूद हों। तो फिर इंसान का तरज़े अमल *(Actions)* भी ख़ुश अख़्लाक़ी की बुनियाद पर क़ायम होना चाहिए। किसी शख़्स का माल दौलत वो काम नहीं आ सकता जो उसका चाल चलन और हुसने अख़्लाक़ काम आता है क्योंकि इसके फल हमेशा शीरीन (मीठा) और ज़ायकेदार होते हैं। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, यक़ीनन तुम अपने माल दौलत से किसी का दिल नहीं जीत सकते लेकिन तुम्हारा अच्छा अख़्लाक़ और मुलाक़ात के वक़्त ख़ुश मिज़ाजी से मिलना उनके दिल जीत सकता है। (तरग़ीब व तरहीब, 1331 सहीह) और दूसरी रिवायत में फ़रमाया है कि एक-दूसरे से तवाज़ेअ (नरमी) से मिलो और कोई दूसरे पर बग़ावत (ज़ुल्म और ज़्यादती) ना करे (सुनन इब्ने माजा, 4214 सहीह) इस एक हदीस़ पर ग़ौर कीजिए इसमें कितनी नसीहतों को जमा कर दिया गया है। अबू ज़र्र रज़ि. से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया तेरा अपने डौल से अपने भाई के डौल में पानी डाल देना, सदक़ा है, तेरा नेकी का हुक्म देना और बुराई से मना करना भी सदक़ा है और अपने भाई के चेहरे को देखकर मुस्कुराना भी सदक़ा है और तकलीफ़देह चीज़ या कांटा लोगों के रास्ते से हटा देना भी सदक़ा है और किसी भूले हुए आदमी की रहनुमाई करना भी सदक़ा है। (बुख़ारी, अदब अलमुफ़रद, 891 सहीह) ग़ौर कीजिए ये छोटे-छोटे अमल जिनमें भारी भरकम रक़म ज़ाए नहीं हो रही और ना कोई जिस्मानी तकलीफ़ ही उठानी पड़ रही,

इनके करने का अज्र सवाब सदक़ा के बराबर रखा है। अगर हर आदमी ऐसे अमल को अपना मामूल बना ले तो फिर मुआ़शरा भाईचारे की एक मिसाल क़ायम कर सकता है। और ये सब सिर्फ़ उन्हीं लोगों के साथ बर्ताव नहीं करना जिनसे आदमी ख़ुश हो और वो उसे तकलीफ़ ना देते हों। इस्लाम ये नहीं सिखाता। इस्लाम दरगुज़र करने की तलक़ीन देता है और दरगुज़र करने की फ़ज़ीलत भी बड़ी रखी है। दरगुज़र करने वाले की इज़्ज़त में इज़ाफ़ा होता है। इसलिए मुसलमान को उसके साथ भी हुसने सुलूक करने का हुक्म दिया गया है जो शख़्स उसे तकलीफ़ पहुंचाता हो। सब्र करने की तरग़ीब व तलक़ीन (शिक्षा) दी गई है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जो मोमिन लोगों से मिलकर रहता है और उनकी तकलीफ़ पर सब्र करता है उसको ज़्यादा सवाब है उस मोमिन से जो लोगों से ना मिलता ना उनकी तकलीफ़ पर सब्र करता। (सुनन इब्ने माजा, 4032 सहीह) इसलिए आदमी को चाहिए कि मुआ़शरे (समाज) से कट कर ना रहे बल्कि उनके साथ मिलजुल कर रहे और नेक कामों में तआवुन (मदद) करता रहे और बुराई से बचने की तलक़ीन करता रहे अबू हुरैरा रज़ि. से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि जन्नत के दरवाज़े पीर और जुमेरात को खोले जाते हैं। जो अल्लाह के साथ किसी को शरीक नहीं करता उसे बख़्श दिया जाएगा, सिवाय उन दो (शख़्स) के जो एक दूसरे से बुगज़ रखते, (उनके लिए) कहा जाएगा इन दोनों को वापस कर दो जब तक ये सुलह ना कर लें। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2023 सहीह) ऐसे दो शख़्स की बख़्शीश नहीं। मतलब ये हुआ कि मुसलमान को अपने भाई से ताल्लुक़ात को तोड़ना नहीं चाहिए बल्कि उसे हुसने सुलूक करता रहे भले ही वो उसको तकलीफ़ ही क्यों ना दे।

इस्लाम की सब नसीहतें और अहकाम सिर्फ़ मुसलमानों के लिए ही ख़ास नहीं बल्कि मुआ़शरे में रहने वाले हर शख़्स के लिए हैं चाहे वो किसी भी दीन, मज़हब या जाति से ताल्लुक रखता हो। हर इंसान का अख़लाक़ व बर्ताव ऐसा हो कि वो दूसरों के लिए एक मिसाल क़ायम करे और दूसरों को भलाई और नेकी की तरफ़ बुलाने में मददगार साबित हो जैसाकि क़ुरआन का हुक्म और नबी ﷺ की नसीहतें पहले बयान हो चुकीं। सूरह मायदा 5/8 में फ़रमाया गया

कि:

"किसी क़ौम की अदावत (दुश्मनी) तुम्हें ख़िलाफ़ अ़द्ल पर आमादा ना कर दे।" इस अदावत के होने की वजह माल जायदाद या दूसरे झगड़े फ़साद हो सकते हैं। या क़ौम का दीन मज़हब दूसरा होना या जाति का ऊँच नीच या क़ौमों के रंग की वजह से गोरे कालों की बीच फैली नफ़रत वग़ैरह तमाम वुजूहात दुश्मनी का बाइस बन सकती हैं। बहरहाल वुजूहात कुछ भी हों इनका असर आदमी के अख़लाक़, हुसने सुलूक, अ़द्ल और हुक़ूक़ की अदायगी पर नहीं पड़ना चाहिए इस्लाम की नज़र में सब यकसां हैं, एक ही माँ बाप की औलाद हैं, कोई छोटा बड़ा, आला या हक़ीर नहीं। अगर किसी को फ़ज़ीलत है तो वो उसके नेक अमल, हुसने सुलूक और अख़लाक़ की वजह से है। रसूलुल्लाह ﷺ ने एक लिबास सिल्क का उमर फ़ारूक़ रज़ि. को दिया। उन्होंने अर्ज़ किया या रसूलुल्लाह ﷺ मैं इसको क्यों पहनूं? (सिल्क मर्द पर हराम है) आपने फ़रमाया ये लिबास तुझे इसलिए नहीं भेजा कि तू इसे ख़ुद पहने। तू इसे बेच डाल (फ़ायदा उठा) या किसी को दे दे (उमर रज़ि. ने वो लिबास अपने एक मक्का के भाई को दे दिया जो अभी ईमान नहीं लाया था) (सहीह बुख़ारी, किताबुल हिबह) मालूम चला कि उमर फ़ारूक़ ने किस को ये तोहफ़ा दिया, अपने एक भाई को जो मुसलमान नहीं था। और ये वो दौर था जब मक्का के मुशरिक नबी ﷺ और आपके सहाबी पर कमर तोड़ शदीद मसायब व तकलीफ़ें दे रहे थे। उनके ख़ून के प्यासे थे ये सब तकलीफ़ और उनका दीन उमर फ़ारूक़ रज़ि. के हुसने सुलूक के आड़े नहीं आया। सुब्हानल्लाह । ऐसे ही कितना भी बुरा पापी आदमी हो, उसके बारे में दूसरों को ख़बर देते हों कि ये बुरा आदमी है ताकि लोग उसकी बुराई व शर से महफ़ूज़ रह सकें लेकिन जब मुलाकात हो तो इज़हार अपने हुसने अख़लाक़ का करना है और उससे गुनाहगार से भी ख़ुश मिज़ाजी से मिलना चाहिए ना जाने कब और कैसे वो बद भी नसीहत हासिल कर ले। एक शख़्स ने आपसे मिलने की इजाज़त माँगी, आपने फ़रमाया क्या बुरा आदमी है (क़ौम का बुरा आदमी है)। जब वो बैठा तो आप उससे ख़ंदा पेशानी (ख़ुशी) से मिले। जब वो चला गया तो मैंने (आ़ईशा रज़ि.) पूछा या रसूलुल्लाह ﷺ आपने तो उससे देखते

ही ये फ़रमाया था, क्या बुरा आदमी है फिर आप उससे खुलकर ख़ंदा पेशानी (ख़ुश मिज़ाजी) से क्यों मिले? आप ने फ़रमाया, आयशा! तूने कब मुझे बदज़ुबानी करते हुए पाया? सबसे बुरा आदमी अल्लाह के नज़दीक क़यामत के दिन वो होगा, जिसकी बुराई से लोग डरकर उससे मिलना छोड़ दें। (सहीह बुख़ारी, किताब अदब) तो ये थीं इस्लाम के वसीअ ख़ज़ाने से चंद मिसालें जो एक अच्छे मुआ़शरे के लिए मुफ़ीद साबित होती हैं।

आज मुआ़शरा (समाज) तेज़ी से बदल रहा है। तरक़्क़ी के इस दौर में हर कोई दुनिया को तरजीह देते हुए एक अनजान दौड़ में शामिल है। ख़ानदान बिखर रहे हैं एक कमज़ोर और तन्हा पसंद मुआ़शरा ने एक बुराई को पैदा किया है। ख़ानदान के दिगर अफ़राद और पड़ोसी अब उतने मददगार साबित नहीं होते जिससे हर शख़्स ख़ुद को तन्हा महसूस करने लगा है ख़ासतौर पर उम्रदराज़ जिनपर इसका असर ज़्यादा हुआ। ज़्यादातर लोग अपनी ही ज़रूरतों में फंस कर रह गए और मुआ़शरे के तक़ाज़ों को छोड़ दिया। साथ ही लोग दीन से दूर होते जा रहे हैं और अपने-अपने दीन के बुनियादी अहकाम को मानते नज़र नहीं आते। ईमानदारी *(Honesty)* रवादारी *(tolerance)* व सब्र, हमदर्दी *(sympathy)* एह़तिराम *(honour)* व इ़ज़्ज़त *(respect)* तेजी से मिटती जा रही हैं और ये सिर्फ़ अफ़रादी सतह पर ही नहीं बल्कि मुआशरती। *Media* , तिजारत और हुकूमतों तक सब इसमें शामिल हैं। इसका एक ख़तरनाक और हलाकत कुन असर जरायम *(Crime)* को बढ़ाने में हुआ। तशददुद *(Violence)* जारिहिय्यत *(Aggression)* जरायम और गुनाह तेज़ी से मुआ़शरे को तबाह करने में लगे हुए हैं। इसकी वजह से मनशियात *(Drugs)* का इस्तेमाल, जिस्म फरोशी *(Prostitution)* जिंसी जरायम, बच्चों के साथ बदसुलूकी और ख़्वातीन *(Women)* के साथ होने वाले तशददुद *(Violence)* में इज़ाफ़ा हो रहा है। जिससे मुआ़शरे का अमन भी दांव पर लगा है। ऐसे में हुकूमतों, दीनी इदारों, मज़हबी रहनुमाओं और क़ौम के सरदारों पर वाजिब होता है कि मुआ़शरे के बदलते हालात को सुधारने में तेजी से असरदार क़दम उठाएँ जिसका एक हल अपनी दीनी तहज़ीब और क़वानीन को लोगों तक पहुंचाने में मेहनत करनी होगी ताकि हर शख़्स एक अच्छे मुआ़शरे को क़ायम करने में मददगार हो।

ग़रीब की मदद

गुरबत बहुत सी बीमारियों में से एक है जो अल्लाह किसी शख़्स, ख़ानदान या मुआ़शरे पर डाल देता है। ये आदमी के अक़ीदा (दीन) और उसके अमल पर भी बुरा असर डालता है। आदमी रोज़ाना का खाना, पहनना और दिगर ज़रूरियात को पूरा करने के लिए अख़लाक़ी बुराइयों और जरायम का सहारा लेने लगता है। जिससे चोरी, क़त्ल, ज़िना और हराम तरीकों से माल कमाना जैसी बुराइयाँ मुआ़शरे में फैल जाती हैं। मामला कुछ भी हो ये ज़ाहिर है कि इससे जरायम और बदउनवानी *(Corruption)* पैदा होती है। बहुत सारी क़ौमें और मुल्क इसमें मुब्तला हैं और इस मसले का हल तलाशने की कोशिश में लगे हैं। लेकिन इसका कोई फ़ायदा नहीं हुआ। मालदार लोगों में माल जमा करने की हवस बढ़ती जा रही है जिससे माल चंद लोगों के हाथों में सिमटता जा रहा है और मुआ़शरे की भलाई के कामों में ख़र्च नहीं करते। दूसरे मुआ़शरा बिखर रहा है इनफ़िरादी *(Individual)* ज़रूरतों को तरजीह *(Priority)* दी जा रही है और आपसी भाईचारा व हमदर्दी ख़त्म होती जा रही है जिससे गरीबों को वो मदद नहीं मिल पाती जिसकी उन्हें जरूरत है। इसका इस्लाम ने बड़ा ही मोअस्सिर *(Effective)* और कारगर हल क़ायम किया है। काश लोग इस्लाम की ख़ूबियों को जानें और अपने अमल में लाएं तो गुरबत ही नहीं बल्कि इनफ़िरादी और मुआ़शरे की तमाम बुराइयों को जड़ से उखाड़ दिया जा सकता है। इस्लाम में सुझाए गए कुछ तरीक़े ये हैं।

1. हर शख़्स अल्लाह पर ईमान रखे और इस बात पर कि हर तंगी और मुसीबत उसी की तरफ़ से है। इसका कुछ सबब और मक़सद है। उसे सब्र से काम लेना चाहिए क्योंकि हर तंगी के बाद आसानी है। अपनी ज़रूरियात को अपनी आमदनी के अंदर रखे। अल्लाह ऐसा है कि जब वो अपने बंदे से ख़ुश होता है तो उसके रिज़्क़ में बरकत डाल देता है। देखने में आता है कि थोड़ा माल कमाने वाला ग़रीब पुर सुकून ज़िंदगी गुज़ारता है उसके घर में अमन रहता है और बच्चे भी लायक़ निकल जाते हैं जबकि दूसरी तरफ़ फ़राग़ी (बहुतायत) के साथ माल कमाने वाला हर वक़्त ज़हनी बीमारियों का शिकार

रहता है जो घर तक नहीं छोड़ती और बच्चे भी माल की कसरत से जरायम में मुब्तला हो जाते हैं। सभी इसराफ़ और बेजा ख़र्च में शामिल रहते हैं। क्योंकि उनके माल में बरकत नहीं।

⋆ 2. रिज़्क कमाने के लिए काम करने की तरग़ीब *(Encourage)* देना और इसके लिए सफ़र करना। बहुत से लोग ऐसे होते हैं कि काम करने के मौक़े मौजूद होते हुए भी काहिली और सुस्ती की वजह से काम नहीं करते।

⋆ 3. अमीरों पर ज़कात को फ़र्ज़ कर देना। अल्लाह तआ़ला ने ग़रीबों को ज़कात का एक हिस्सा देकर उसे अमीरों के माल में भागीदार बना दिया। जो एक ग़रीब को अपनी ज़रूरियात को पूरा करने या गुरबत को ख़त्म करने के लिए दिया जाता है।

⋆ 4. सूद, जुआ और तिजारती मामलों में धोखा दही पर पाबंदी लगे। क्योंकि ये काम अगर होते हैं और मुआ़शरे में आम हो जाएं तो कुछ लोग दूसरों का माल नाहक़ *(Unlawfully)* लेंगे जिससे मुतअस्सिर होने वाले लोगों का नुक़सान होगा। ये सब इस्लाम में सख़्ती से मना किए गए हैं।

⋆ 5. ज़रूरतमंद और कमज़ोर लोगों की मदद करने वालों की हौसला अफ़ज़ाई होनी चाहिए और लोगों को इसकी रग़बत भी दिलानी चाहिए। ग़रीब और कमज़ोर लोगों की मदद करने उनसे मुहब्बत व मेलजोल रखने और उनसे हमदर्दी रखने की इस्लाम में फ़ज़ीलत भी बहुत है और नसीहतें व तरग़ीब भी बहुत की गई हैं। ऐसी बहुत सी दलीलें क़ुरआन और सुन्नत नबी में मौजूद हैं। ऐस लोगों से मुंह मोड़ लेने उनको गुरबत में तन्हा छोड़ देने और उनकी मदद ना करने वाले वो लोग होते हैं जो अल्लाह की निअ़मतों का शुक्र अदा नहीं करते। और उसकी नाफ़रमानी करते हैं। अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआन की सूरह फ़ज्र की आयत 89/17-18 में ये सिफ़ात *(Qualities)* आ़द व फ़िरऔ़न की बदतर क़ौमों की बयान की है जिनको अल्लाह तआ़ला ने अज़ाब डालकर इस ज़मीन से ही मिटा दिया। फ़रमाया गया कि ये लोग-

''तुम लोग यतीमों की इ़ज़्ज़त नहीं करते और मिस्कीनों के खिलाने की एक-दूसरे को तरग़ीब नहीं देते।'' (89/17-18)

ग़रीबी एक ऐसी चीज़ है जिसमें कोई भी शख़्स कभी भी आ सकता है।

कल के अमीर आज फ़क़ीर और कल के फ़क़ीर आज अमीर नज़र आते हैं। इसकी बेशुमार मिसालें मुआ़शरे में मिल जाएंगी। फलती फूलती रोज़गार और तिजारत न जाने कब नुक़सान में आ जाए, और फिर ऐसे लोग ख़ुद को लाचार व असहाय महसूस करते और बहुत से तो अपनी जिंदगी से ही हाथ धो लेते ख़ुदकुशी वग़ैरह करने से। अल्लाह तआ़ला ने कुछ यही बात बयान करते हुए इंसान को आगाह किया और ग़रीबों की मदद करने की तलक़ीन की।

''*और चाहिए कि वो इस बात से डरें कि अगर वो ख़ुद अपने पीछे (नन्हें नन्हें) नातवान बच्चे छोड़ जाते जिनके ज़ाए होने का अंदेशा रहता है। बस अल्लाह तआ़ला से डर कर नपी तुली बात किया करें।*'' (सूरह निसा 4/8)

यानी आदमी ग़ौर करें अगर इस पर ऐसे हालत आ पड़ें या वो अपने छोटे-छोटे बच्चों को छोड़कर फ़ौत हो जाएँ तो इन सूरते हाल में वो अपने बच्चों के साथ मुआ़शरे से कैसे सुलूक की आरज़ू रखते हैं। यानी इंसान को चाहिए कि वो अपनी हैसियत से ग़रीब, मिस्कीन, यतीम और कमज़ोर लोगों की मदद करें; और ये हुक्म आम है मुआ़शरे के लिए। रसूलुल्लाह ﷺ बड़े रहम, शफ़क़त, नरम और दुनिया की रग़बत (मुहब्बत) से महफ़ूज इंसान थे। आपका फ़रमान है कि अगर तुम मुझे तलाश करना चाहते हो तो ग़रीब गुरबा में तलाश करो। अबू दरदा रज़ि. से मरवी है कि आपने फ़रमाया कि मुझे कमज़ोर लोगों में तलाश करो, तुम्हें जो रिज़्क दिया जाता है और तुम्हारी जो मदद की जाती है वो तुम्हारे कमज़ोरों की वजह से की जाती है। (दाऊद 2594 सहीह) अबू ज़र रज़ि. से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया मुझे सात बातों का हुक्म दिया गया है (1) मिस्कीन से मुहब्बत करने और उनके क़रीब रहने का (2) अपने से कमतर शख़्स को देखने का और अपने से बरतर शख़्स की तरफ़ तवज्जो ना करने का (3) मुझे सिला रहमी करने का हुक्म दिया गया है चाहे वो रुख़ फेरने लगे......... । (सिलसिला सहीहा, 2166) इस्लाम में तो अपने मानने वाले मोमिनों का एक मिसाली मुआ़शरा क़ायम करने के लिए आपसी मुहब्बत और ख़ैरख़्वाही करने की बहुत तरजीह दी है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया एक मुसलमान दूसरे मुसलमान के लिए इस तरह है जैसे इमारत का एक हिस्सा दूसरे हिस्से को थामे रहता है। (सहीह बुख़ारी, किताब अदब)

साथ ही मुआ़शरे में ग़रीब, पड़ोसी और दूसरे कराबतदारों के साथ अच्छा सुलूक करने का हुक्म दिया। ख़ासतौर पर यतीम, कमज़ोर और पड़ोसी को तो बहुत ज़्यादा हुक़ूक़ क़ायम किए गए हैं। यहाँ दीन और मज़हब की कोई पाबंदी नहीं बल्कि दूसरे मज़हब के लोगों के साथ तो और भी ज़्यादा अच्छा सुलूक करने की तरग़ीब दी गई है ताकि मुआ़शरे में अ़द्ल के साथ बराबरी, मुहब्बत और अमन का माहौल बना रहे। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला फ़रमाता है कि मेरी मुहब्बत उन लोगों के लिए वाजिब हो गई जो मेरे लिए एक दूसरे पर ख़र्च करते हैं। (तरग़ीब व तरहीब 1294 सहीह)

इब्ने उ़मर रज़ि. की ये आदत थी वो उस वक़्त तक खाना ना खाते जब तक एक मोहताज शख़्स उनके साथ खाने में शरीक ना होता। (सहीह बुख़ारी, किताब तआ़म) इब्ने उ़मर रज़ि. से ही मरवी हदीस़ में बयान हुआ है। कि एक आदमी नबी ﷺ के पास आया और कहा, ऐ अल्लाह के रसूल! कौन से लोग अल्लाह तआ़ला को ज़्यादा महबूब हैं? और कौन से आमाल अल्लाह तआ़ला को ज़्यादा महबूब हैं? आपने फ़रमाया, वो लोग अल्लाह तआ़ला को ज़्यादा महबूब है जो दूसरे लोगों के लिए ज़्यादा फ़ायदेमंद हों और अल्लाह के यहाँ सबसे ज़्यादा पसंदीदा आमाल वो हैं कि मुसलमान का अपने भाई को ख़ुश करना, उससे कोई तकलीफ़ दूर करना, उसका क़र्ज़ चुकाना और उसे खाना खिलाना। मुझे किसी भाई की ज़रूरत पूरी करने के लिए उसके साथ चलना इस मस्जिद नबवी में एक महीना एतिकाफ़ करने से ज़्यादा महबूब है। (और आगे पूरी हदीस़ बयान की) (सिलसिला सहीहा, 906) सुब्हानल्लाह ये उस शख़्स की ख़ुशनसीबी होगी जो दूसरों के दु:ख में शरीक हों, दूसरों का सहारा बने, उनकी तकलीफ़ दूर करे और अगर उस पर कोई ज़्यादती हो तो सब्र करे। किसी भाई की ज़रूरत पूरी करने में इससे बेहतर और क्या हो सकता है कि किसी ग़रीब, मोहताज व तंगदस्त की मदद की जाए जब कि वो इसका मुस्तहिक़ हो और वो अपनी ज़रूरी ज़रूरियात पूरी करने में लाचार हो। इसका सवाब बहुत ज़्यादा देखा गया है। एक तो एतिकाफ़ ख़ुद एक अफ़ज़ल इबादत है, दूसरे इसे मस्जिदे नबवी में करना जहाँ एक नमाज़ का ही सवाब 1000 नमाज़ों का है जो दूसरी मस्जिदों में अदा की जाए फिर एक या दो दिन नहीं

बल्कि पूरे एक महीने का सवाब। वो ऐसा कौन ख़ुशनसीब नहीं होगा जो ग़रीब मोहताज की मदद करके और उसको खाना खिलाकर इस अज़ीम अजर सवाब को ना लेना चाहे?

यतीम की मदद

यतीम ग़रीब मोहताज हो सकता है अगर उसका बाप कोई माल छोड़कर नहीं फ़ौत हुआ। अगर यतीम के पास अपना माल है तो उस पर ज़कात लेना मना है। और अगर उस पर अपना कोई माल नहीं तो वह ज़कात और दूसरे नफ़ली सदक़ात का हक़दार बन जाता है। यतीम के पास माल है या नहीं, कहीं ज़रूरी है कि ऐसे बच्चों को लावारिस ना छोड़ दिया जाए बल्कि उनकी अच्छी तरबीयत की ज़िम्मेदारी मुआ़शरे पर ज़रूरी है। उनको अच्छी तालीम दिलाना, दीन सिखाना, हलाल व हराम की तमीज़, अच्छा अदब और हुसने अख़लाक़ सिखाना बहुत जरूरी हैं तभी एक अच्छे मुआ़शरे के वुजूद का तसव्वुर किया जा सकता है। अगर ऐसा नहीं होगा तो जिस तरह कहावत है कि एक मछली पूरे तालाब को गंदा कर देती है, ठीक उसी तरह चंद लावारिस बच्चे बड़े होकर पूरे मुआ़शरे में बुराईयाँ और जरायम *(Crime)* फैलाने का सबब बन सकते हैं। और अगर यतीम लड़की है तो उसकी ज़िम्मेदारी और बढ़ जाती है। इस्लाम ने हुसने सुलूक के मामले में औरत के रिश्ते को ज़्यादा तरजीह दी है। जैसे माँ को बाप से 3 गुना ज़्यादा और बहन को भाई पर फ़ौक़ियत अता की। लड़की बेटी या बहन की अच्छी तरबियत करने की बड़ी फ़ज़ीलत रखी है और उसका बदला भी सवाब के तौर पर जन्नत बयान की गई। रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान है कि यतीम की ख़बरगिरी करने वाला ख़्वाह उसका अ़ज़ीज़ हो या ग़ैर हो, जन्नत में इस तरह से साथ होंगे जैसे ये दो अंगुलियाँ। (सहीह मुस्लिम, किताब जुहद) अब देखिए यहाँ हुक्म दिया जा रहा है कि चाहे तुम्हारे रिश्तेदार से हो या दूसरे लोगों में से, यानी हुक्म आम हो गया। और इसका सवाब भी अफ़ज़ल तरीन कि जन्नत का वादा। अल्लाह तआ़ला ने भी यतीम की परवरिश करने की बड़ी तरग़ीब दी है। वैसे तो इस्लाम इंसानियत, रहमत और शफ़क़त (मुहब्बत) से भरा है वो यदि यतीम हो, बेवा हो, ग़रीब हो,

मोहताज हो या ज़रूरतमंद हो सबके साथ शफ़क़त और भाईचारे का पैग़ाम देता है और हर ज़रूरतमंद की मदद करने का हुक्म देता है। इससे मुतअल्लिक़ क़ुरआन में ही बेशुमार आयात और अहकाम नाज़िल हुए और सहीह हदीस़ों में भी। इंसान जब मेहनत करके माल कमाता है तो उसे ख़र्च करता है। जैसे माल कमाने में एहतियात बरतने की ज़रूरत है और शरियत में कुछ तयशुदा अहकाम यानी कैसे माल कमाया जाए, उसी तरह उसे ख़र्च करने के बारे में भी इस्लाम में कुछ तालीमात दी गई है। कमाई में हराम तरीक़ों से इजतिनाब (बचना) करना चाहिए चाहे वो किसी भी शक्ल में हों और जिनकी तफ़सीलात शरियत में बयान कर दी गई। इसी तरह कमाए गए माल को कैसे ख़र्च किया जाए इस पर बहुत ज़ोर देकर ख़बरदार किया गया है कि वो भी हराम कामों में ख़र्च ना हो और ना इसराफ़ *(Extravagant)* व बेज़ा ख़र्च किया जाए चाहे वो अमल हलाल और मारूफ़ ही क्यों ना हो। दूसरे इस्लाम क्या सभी दीन और मज़हबों में इस दुनियां की तमअ़, इससे रग़बत व मुहब्बत, इसमें रीझ कर रह जाना और माल समेटकर रख छोड़ने को मना किया गया है। माल दिया ही जाता है ख़र्च करने के लिए। वरना ये किसी इंसान को कोई फ़ायदा नहीं देता, ना इसे कोई साथ ले गया ना ही कभी कोई ले जाएगा। साथ जाएगा तो इसके ख़र्च करने से कमाए गए नेक आमाल, नेकियाँ और ग़रीब मोहताज व कमज़ोर और ज़रूरतमंद लोगों की दुआ़एँ। ऐसा ही हुक्म अल्लाह तआ़ला ने सूरह बक़रा में फ़रमाया कि ए नबी जब ये आपसे पूछते हैं कि हम क्या ख़र्चा करें, कैसे और कहाँ ख़र्च करें तो आप इनको ये फ़रमा दीजिए।

"आपसे पूछते हैं कि वो क्या ख़र्च करें? आप कह दीजिए जो माल तुम ख़र्च करो वो माँ बाप के लिए है और रिश्तेदारों और यतीमों और मिस्कीनों और मुसाफ़िरों के लिए है, और तुम जो कुछ भलाई करोगे अल्लाह तआ़ला को उसका इल्म है।" (2/215)

यहाँ उन लोगों का ख़ास ज़िक्र कर दिया गया जिन पर अपना माल ख़र्च करने को तरजीह *(Priority)* देनी चाहिए और ये इंसान के माल से मदद के ज़्यादा मुस्तहिक़ हैं और यतीम को भी इनमें शामिल किया गया है क्योंकि वो कमज़ोर होने के नाते ज़्यादा मुस्तहिक़ है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जो

शख़्स किसी मुसलमान के यतीम बच्चे को अपने खाने पीने से उस वक़्त तक शामिल रखता है जब तक वो इस मदद से मुस्तग़ना नहीं हो जाता तो उसके लिए यक़ीनी तौर पर जन्नत वाजिब होती है (मुसनद अहमद, शाकिर, 18926 सहीह) इस्लाम में हर कमज़ोर ज़रूरतमंद की मदद करना और खाना खिलाने को ईमान का हिस्सा क़रार दे दिया। यानी जो शख़्स अल्लाह और क़यामत के दिन पर ईमान रखता है, उसे तसलीम करता हो और अल्लाह से डरता हो उस पर लाज़िम हो जाता है कि वो अपनी हैसियत के मुताबिक़ मुआ़शरे के कमज़ोर लोगों की देखभाल रखे। रसूलुल्लाह ﷺ से मालूम किया गया कि इस्लाम की कौन सी ख़सलत बेहतर है तो आपने फ़रमाया खाना खिलाना और सलाम करना, उसको पहचानता हो या नहीं (सहीह बुख़ारी, किताब ईमान) यहाँ हुक्म आम है और हर कमज़ोर व ज़रूरतमंद के लिए है जिसमें यतीम भी शामिल है।

बेवाओं की मदद

इस्लाम ने औरतों के हुक़ूक़ को क़ायम किया और इसके लिए बहुत से अहकाम बयान किए हैं। यहाँ पर भी एक बेवा (जिसका शौहर फ़ौत हो चुका) की देख-रेख करने की बड़ी फ़ज़ीलत और अजर सवाब की ख़बर दी गई है। यानी अगर बेवा ऐसी है जो अपने शैहर की मौत के बाद ऐसी हालत को पहुंच गई कि वो अपना और उसके मातहत बच्चों वग़ैरह का ख़र्च चलाने में मजबूर है तो ऐसी औरत को मुआ़शरा तन्हा बिना मदद के ना छोड़ दे। तो ना ये अच्छे अख़लाक़ का तक़ाज़ा है और ना इंसानियत का। दूसरे ऐसा करने से मुआ़शरे में जरायम और बुराइयाँ फैलने का भी ख़तरा लाहक़ है। ऐसे ही वो औरतें भी इन्हीं हालात से गुज़र सकती हैं जो तलाक़शुदा हैं। ऐसी मजबूर औरतों की देखरेख करने के बारे में इस्लाम की तालीमात पर ग़ौर कीजिए।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया मिस्कीन और बेवाओं के लिए मदद करने वाला दर्जे में (सवाब) मुजाहिद फ़ी सबील्लिाह के बराबर है या उस शख़्स के बराबर जो दिन को रोज़ा रखता है और रात को इबादत में खड़ा रहता है (सहीह बुख़ारी, किताब अदब) आप ﷺ बेवाओं और मिस्कीनों के साथ

मिलने में और उनका काम करने में नहीं शर्माते थे (सुनन निसाई, 1417 सहीह) और रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, मैं दो ज़यीफ़ों (कमज़ोर) यतीम और औरतों के हक़ को हराम क़रार देता हूँ (सिलसिला सहीहा, 1015) यानी यतीम और औरत के हुक़ूक़ को ज़ाए करना मना और हराम है। उनकी मदद करना और ज़रूरतों को पूरा करना हर मुसलमान पर लाज़िम है। यहाँ औरत आम है ख़ासतौर पर जब वो बेसहारा और मजबूर हो तो उसके हुक़ूक़ और बढ़ जाते हैं चाहे वो तलाक़शुदा हो या शौहर फ़ौत हो गया हो। आदमी उन पर जो ख़र्च करेगा वो अफ़ज़ल सदक़ा में से होगा।

बुजुर्गों की देखरेख

बुजुर्गों की किफ़ालत करना और उनको नुक़सान से बचाना मुआशरे की ज़िम्मेदारी है। उन्हें वक़ार *(Dignity)* की ज़िंदगी मुहैया करानी चाहिए और उन्हें पूरी तरह से इंसानी हुक़ूक़ देने चाहिएँ। अल्लाह तआला की ख़ुशनूदी हासिल करने के लिए ऐसा करने में बहुत ख़ैर है। और जो कुछ भी उनकी देखभाल पर ख़र्च करोगे वो बड़े सवाब के साथ नेक आमाल में लिखा जाएगा। ये अपने माँ बाप के लिए ही ख़ास नहीं, उनका तो हक़ इससे भी बढ़कर बहुत ज़्यादा है जैसा कि माँ बाप के हुक़ूक़ में बयान किया गया है। अल्लाह तआला का फ़रमान है कि–

''और जिसे हम बूढ़ा करते हैं उसे पैदायशी हालत की तरफ़ फिर उलट देते हैं, क्या फिर भी वो नहीं समझते।'' (सूरह यासीन, 36/68)

अल्लाह तआला एक इंसान की जिंदगी के बारे मे फ़रमा रहा है कि जब वो पैदा होता तो बच्चा होता कमज़ोर और अक़्ल से नाक़िस (कमी), फिर जवानी को पहुंचता और आख़िर में बुढ़ापे को पा लेता है। जब उसकी जिस्मानी और ज़हनी कुव्वतें कमज़ोर पड़ जाती हैं और कुछ काम नहीं देती। इस हालत में पहुंचकर वो कमज़ोर हो जाता और सहारे की ज़रूरत महसूस करता है। ये एक कुदरती निज़ाम है, अक्सरियत इसी हालत से गुज़रती। आज के बुजुर्ग कल जवान थे और आज के नौजवान कल बुढ़ापे को पाएंगे। अगर वो आज अपने माँ बाप या मुआशरे के दीगर बुजुर्गों का एहतिराम नहीं करेंगे,

उनकी मदद नहीं करेंगे और उनकी देखरेख नहीं करेंगे तो कल इन आज के नौजवानों का क्या हाल होगा? इससे भी बदतर जो आज मुआ़शरे में बुजुर्गों का है।

इस्लाम हमदर्दी और इंसाफ़ का दीन है। ऐसा दीन जो अच्छे अख़लाक़ की तालीम देता है और बुरे सुलूक व बुराइयों से मना करता है। ऐसा दीन जो हर इंसान को उसके हुक़ूक़ दिलाता है उसको वक़ार *(Dignity)* अता करता है बशर्ते कि इंसान इस्लाम की शरियत पर अमल करता हो। इसमें कोई शक नहीं कि इस्लाम ने बुजुर्गों को एक ख़ास मरतबा अता किया है और ऐसी दलीलें क़ुरआन व हदीस़ में मौजूद हैं। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि– बहुत रहम वाला (अल्लाह) रहम करने वालों पर रहम करता है। ज़मीन पर रहने वालों पर रहम करो ताकि जो आसमानों में है वो तुम पर रहम करे। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 1569 सहीह)

मुस्लिम मुआ़शरा आपसी मेल मिलाप, मदद और ख़ैर ख़्वाही का मुआ़शरा है। जैसा कि कमज़ोरों की मदद करने के सिलसिले में अहादीस़ बयान की गई हैं। जो इंसान किसी इंसान की सख़्ती को दूर करेगा, किसी के काम में आसानी पैदा करेगा, किसी की मदद करेगा और किसी ज़रूरतमंद को खाना खिलायेगा तो उसे अल्लाह तआ़ला इन सबका अच्छा बदला देगा और उसका कोई अमल ज़ाए नहीं जाएगा। बुजुर्गों की इज़्ज़त और एहतिराम करना मुस्लिम मुआ़शरे की ख़सूसियत में से है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि बुज़ुर्ग लोगों की इज़्ज़त करना अल्लाह तआ़ला की इज़्ज़त व इकराम करना है। (सुनन अबी दाऊद, 4843 सहीह) बुजुर्गों की मदद, उनकी देखरेख और खाने पीने का एहतिमाम करने के साथ-साथ उनका मरतबा क़ायम रखने और उनको ख़ुशी देने के लिए उनके साथ सुलूक भी अच्छा और उम्दा हो। जब खाना खाया जाए, कोई मशवरा लेना हो या दीगर आमाल में उनको अव्वलियत और तरजीह *(Priority)* देने से उन्हें ख़ुशी होगी और उनके दिल से नेक दुआएँ ही निकलेंगी। रिज़्क़ और ज़िंदगी में बरकत होगी। अ़ब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि. से मरवी है रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, बुज़ुर्गों की वजह से बरकत होती है (सिलसिला सहीहा) इस्लाम की इन तमाम नसीहतों और तालीमात से यही

मालूम होता है कि बुज़ुर्गों का इकराम करना, उनकी परवरिश व देख-रेख करना और उनके साथ हुसने सुलूक करना इनफ़िरादी तौर पर और मुआ़शरे पर भी लाज़िम आता है। और इसका इंकार करने वाला मुसलमान कहलाने का हक़दार ही नहीं। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जो शख़्स हमारे छोटों पर रहम नहीं करता और हमारे बड़ों का हक़ नहीं पहुंचाता वो हम में से नहीं। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 353 सहीह)

पड़ोसी के हुक़ूक़

इस्लाम पड़ोसी के मामले में अच्छे सुलूक की तालीम देता है चाहे वो मुसलमान हो या किसी और दीन का क्योंकि ऐसा करना एक अच्छे मुआ़शरा और वतन की बुनियाद है। इस्लाम में एक पड़ोसी के जो हुक़ूक़ हैं उनमें सलाम करना *(Greetings)* बीमारी में मिलने जाना, मुसीबत के वक़्त मदद, ख़ुशी के वक़्त मुबारकबाद, उसकी गुनाहों और कमियों को छुपाना, उसकी तकलीफ़ पर सब्र करना, तोहफ़े का लेनदेन, घर की औरतों से नज़र नीची रखना और ख़ैर के कामों में उसकी रहनुमाई करना और बुराइयों से मना करना। पड़ोसी किसी भी दीन मज़हब का हो उससे अच्छा सुलूक करना लाज़िम है। अल्लाह तआ़ला ग़ैर मुस्लिम से हुसने सुलूक करने, नरमी इख़्तियार करने, लेनदेन का मामला रखने और अ़द्ल करने से नहीं रोकता। इससे मुआ़शरे में आपसी मुहब्बत, भाईचारा और अमन ही पैदा होगा। उनसे मिलने में जो एहतियात रखना वाजिब है वो है कि अपने दीन को हर सूरत में बचाकर रखना है यानी एक अल्लाह की इबादत बिना किसी दूसरे को उसके साथ शरीक किए। तौहीद को कोई नुकसान नहीं पहुंचना चाहिए जो हर इंसान पर उसके रब (अल्लाह) का हक़ है। पड़ोसी के साथ अच्छा सुलूक के बारे में रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, जो शख़्स अल्लाह और आख़िरत के दिन (क़यामत) पर ईमान रखता है उसको चाहिए कि अपने पड़ोसी की ख़ातिरदारी करे। (सहीह मुस्लिम , किताब ईमान) और एक दूसरी रिवायत में बयान हुआ है कि जिसको अल्लाह और क़यामत के दिन पर ईमान हो वो अपने पड़ोसी को ना सताए। (सहीह बुख़ारी, किताब अदब)

पड़ोसी के साथ अच्छा सुलूक करने की एक मिसाल देखिए। अब्दुल्लाह बिन अम्र रज़ि. का गुलाम बकरी ज़िबाह कर रहा था तो उन्होंने फ़रमाया, ऐ गुलाम! जब तू फ़ारिग़ हो जाए तो हमारे यहूदी पड़ोसी से शुरू करना। किसी ने कहा यहूदी से? अल्लाह आपकी इस्लाह करे। आपने फ़रमाया, बेशक मैंने नबी ﷺ को पड़ोसी के बारे में इतनी ताकीद (ज़ोर देना) करते सुना कि हम डर गए कि आप ﷺ पड़ोसी को विरासत *(Ingeritance)* में हिस्सेदार ना बना दें। (अदब अल मुफ़रद 128)

अब देखिए आस-पास ही उनके क़रीबी रिश्तेदार और दूसरे मुसलमान भी रहते होंगे। मगर उन्होंने तरजीह *(Priority)* एक यहूदी से शुरू करने को दी। भला समाज में आपसी मुहब्बत क्यों नहीं पैदा होगी अगर हर शख़्स ऐसा अच्छा सुलूक करने लग जाए।

पड़ोसी किसी इंसान के आमाल और कर्मों का आइना *(Mirror)* है अगर किसी शख़्स के बारे में उसका पड़ोसी अच्छा होने की तस्दीक़ करे यानी गवाही दे तो वह शख़्स अच्छा है। और अगर पड़ोसी उसके बुरे होने की गवाही दे तो वह बुरा आदमी है। (मुसनद अहमद 3808)

यानी अगर कोई शख़्स उपने पड़ोसी के साथ ही अच्छा सुलूक और बर्ताव नहीं करता तो समाज में उसका क्या और कैसा योगदान होगा? भले और हमदर्द इंसान ही एक हमदर्द और आदर्श समाज को क़ायम करते हैं। बुरे और बद अख़लाक़ आदमी से समाज में बुराई ही फैलती है। इस्लाम में पड़ोस का दायरा भी अपने घर से चारों तरफ़ चालीस घरों तक का क़ायम किया। *(islamqa.info 388092)* और फ़रमाया गया है कि अच्छा पड़ोस बस्तियों *(Cities)* को आबाद करता है।

नबी ﷺ ने फ़रमाया ''जिस शख़्स को नरमी दी गई उसे दुनिया व आख़िरत की भलाई मिल गई। सिला रहमी (क़रीबी रिश्तों से अच्छा सुलूक) हुसने अख़लाक़ *(Good manners)* और अच्छा पड़ोस शहरों को आबाद करता है और उम्र में बढ़ोतरी का सबब बनते हैं।'' (मुसनद अहमद 25773)

अच्छा पड़ोसी हमदर्द होता है। वह अपने पड़ोसी के माल, जान और इज़्ज़त की हिफ़ाज़त करता है और उससे किसी भी तरह की बुराई या नुक़सान का डर नहीं होता। इस्लाम में पड़ोसी की जान, माल और इज़्ज़त को नुक़सान

पहुंचाने वाले के लिए सख़्त सज़ा और अज़ाब का बयान हुआ है। फ़रमाया गया है कि ''पड़ोसी के माल की चोरी करना ऐसा जुर्म है जैसे दूसरे लोगों के यहां दस चोरी करने के बराबर। ऐसा ही पड़ोसी की इज़्ज़त लूटने या उसकी बहन बेटी के साथ बदकारी करने का गुनाह भी दस गुना ज़्यादा फ़रमाया गया है। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद 103)

पड़ोसी के साथ हुसने सुलूक का हुक्म दिया गया है और तरग़ीब की जाती है चाहे वो मुसलमान हो या नहीं। और ये सहीह बात है। हुसने सुलूक उनकी मदद करने में हो सकती है, उनके साथ हमदर्दी करने में हो सकती है, ग़ुस्सा या नाराज़गी को रोकने और हर मुश्किल घड़ी में उनके साथ खड़े होने में हो सकती है। पड़ोसी के हुक़ूक़ बहुत ज़्यादा हैं और हमारे मुल्क हिन्दुस्तान की तहज़ीब में इसका मक़ाम भी बड़ा रखा गया है जैसे कि कहावत है कि भाई दूर पड़ोसी नज़दीक यानी जो कुरबत पड़ोसी के साथ होनी चाहिए वो दूर इलाके में बसे भाई से सबक़त ले जाएगी। क्योंकि हर ग़म और ख़ुशी के मौक़े पर उसी की आमद तुम्हारे घर पर दस्तक देगी। इसकी फ़ज़ीलत इस हदीस़ से भी साबित होती है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, जिबरील अलै. मुझे पड़ोसी के मुतअल्लिक़ मुसलसल वसीयत करते रहे, हत्ता कि मैंने कहा, वो उसे वारिस बना देंगे। (सुनन अबी दाऊद, 5151 सहीह) यानी पड़ोसी की अहमियत और उसके हुक़ूक़ इस क़दर बयान किए कि आपको लगने लगा कि कहीं आदमी के माल में उसके अहल की तरह वारिस यानी हिस्सेदार ना बना दें। इससे इस्लाम में पड़ोसी के हुक़ूक़ और उसके मक़ाम का अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं होगा।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, वो शख़्स मोमिन नहीं जो अपना पेट तो भरले लेकिन उसका पड़ोसी भूखा हो। (बुख़ारी, अदब अलमुफ़रद 112 सहीह) एक औरत के बारे में पूछा गया कि या रसूलुल्लाह ﷺ फलां औरत रात को क़याम करती है (नमाज़) दिन भर रोज़ा रखती है, (नेक) अमल करती है और सदक़ा देती है लेकिन अपने मुंह से अपने पड़ोसी को तकलीफ़ पहुंचाती है तो रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, उसमें कोई भलाई नहीं वो जहन्नमी है। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 119 सहीह)

साफ़ सफ़ाई *(Cleanlyness)*

"अल्लाह तआ़ला ख़ूब पाक होने वालों को पसंद करता है।" (सूरह तौबा, 9/108) अल्लाह तआ़ला जमील है और जमाल को दोस्त रखता (मुहब्बत करना) (सहीह मुस्लिम किताब ईमान) एक शख़्स आप ﷺ के पास आता है जिसके कपड़े फटे पुराने थे। आपने दरयाफ़्त किया, क्या तेरे पास माल दौलत है। उस शख़्स ने जवाब दिया कि अल्लाह ने मुझे ऊँट भेड़ जैसी कई तरह की माल दौलत से नवाज़ा है। आपने फ़रमाया तो उसको ख़ुद पर ज़ाहिर होने दो। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2006 सहीह) जामेअ़ तिरमिजी, मुसनद अहमद, सुनन निसाई, सुनन इब्ने माजा और दूसरी किताबों में रिवायत दर्ज है कि आप ﷺ ने फ़रमाया ठीक से वुजु *(Ablution)* करना आधा ईमान है। (सुनन इब्ने माजा, 280, सहीह)

अल्लाह सुब्हानहू व तआ़ला के फ़रमान (9/108) और इन हदीसों पर ग़ौर कीजिए और क़ारीअीन ख़ुद फ़ैसला करें कि इस्लाम में साफ़ सफ़ाई और तहारत की क्या अहमियत व फ़ज़ीलत है और इसके लिए कितनी ज़्यादा तलक़ीन व तरग़ीब की गई है। दौरे हाज़िर में अगर एक नज़र दौड़ाई जाए और उम्मत मुस्लिमा का मुहासबा करने के साथ-साथ दूसरी क़ौमों के लोगों के तअस्सुरात *(Views)* पर ग़ौर करें तो हालात इससे मुख़्तलिफ़ और अफ़सोसनाक व शर्मिंदा करने वाले सामने आएंगे। अब बात फिर यही पहले दोहरानी पड़ेगी कि धर्म या मज़हब कोई भी हो उसका तनक़ीदी तज़किया *(Critical Analysis)* करने और उसकी ख़ूबियों को जानने के लिए उसकी बुनियादी किताबों का मुतालआ करना चाहिए ना कि उसके मानने वालों की तरज़े ज़िंदगी *(Life Style)* को देखकर उस दीन पर तबसरा किया जाए। ये बात सिर्फ़ मुसलमानों के साथ ही नहीं बल्कि हर क़ौम के लिए सहीह है। और ऐसी बेशुमार मिसालें और बुराइयाँ हर दीन मज़हब के मानने वालों में मौजूद मिलेंगी जिनका उनके दीन और मज़हब में कोई मक़ाम नहीं बल्कि इससे मना किया गया हो और मुनकरात में शामिल हों।

हक़ीक़त और सच यही है कि जिसको इस्लाम में आधा ईमान तक का

दर्जा देकर उसके मानने वालों को तालीम दी जा रही है वही मुआ़शरा अब इसमें पिछड़ता नज़र आता है। इसका दोष सिर्फ मुसलमानों को ही देना मुनासिब नहीं और ऐसा करना सच्चाई का इंकार करना होगा। इसमें हुकूमत और मुआ़शरा दोनों पर उंगली उठाई जाएगी, और दोनो ही को इसमें सुधार करने के लिए कोशिश करनी होगी। और ये एक सामाजिक ज़िम्मेदारी के साथ-साथ बुराई भी है और हर बुराई किसी ख़ास शख़्स तक ही महदूद नहीं रहती बल्कि जब पैदा होती है तो पूरे समाज को प्रभावित करती है। इसलिए पूरे समाज को इसमें तआ़वुन (मदद) करने की ज़रूरत है।

साफ़ सफ़ाई से मुतअ़ल्लिक़ चंद रिवायात और तालीमात पाठकों के सामने पेश की जाती हैं ताकि इन पर अमल हो और ख़ुद व समाज को साफ-सुथरा रखने में मददगार साबित हों। जो हर शख़्स की और समाज में सेहत को बरकरार रखने और बीमारी से बचने के लिए ज़रूरी हैं।

एक मुसलमान जब सुबह नींद से जागता है तो उसको हाथ धोने से पहले हाथों को पानी में डालना या बरतन पर लगाना मना है। अबू हुरैरा रज़ि. से रिवायत है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जब तुम से कोई रात को सोकर बेदार हो तो अपना हाथ पानी के बरतन में ना डूबो दे, जब तक उसको तीन बार ना धो ले, क्योंकि वो नहीं जानता कि उसका हाथ कहाँ रहा था। (सुनन अबी दाऊद, 103 सहीह) फिर हाथ धोकर कामिल वुजू करता है जिसमें तीन-तीन बार हाथ, कुल्ली, नाक, मुंह, बाहें, पैर धोता और कान व सिर को भी साफ़ करता है। इस तरह दिन में पाँच बार या इससे भी ज़्यादा बार वुजू करता है। रफ़ा ए हाजत *(Toilet)* को जाता तो लौटकर फिर हाथ धोता या वुजू करता। अनस रज़ि. से मरवी है कि जब रसूलुल्लाह ﷺ हाजत *(Toilet)* के लिए जंगल को जाते तो मैं और एक लड़का एक डौल पानी को लेकर आपके पीछे जाते। (सहीह बुख़ारी, किताब वुज़ू) यानी जब आप हाजत से फ़ारिग़ होकर लौटते तो उस पानी से हाथ धोते और वुज़ू करते। एक बार आप हाजत से फ़ारिग़ होकर जंगल की तरफ़ से वापस लौट रहे थे कि रास्ते में एक शख़्स मिला जिसने आपको सलाम किया मगर आपने जवाब नहीं दिया। फिर आपने तयम्मुम किया और सलाम का जवाब दिया। (देखिए सहीह

बुख़ारी, किताब तयम्मुम) यानी बिना हाथ मुंह साफ़ किए आपने सलाम का जवाब नहीं दिया। इससे भी यही मालूम चलता है कि आप जब हाजत से फ़ारिग़ होकर लौटते तो आकर पानी से हाथ धोते या वुज़ू करते।

ऐसे में हाथ धोने के लिए अक्सर आप मिट्टी से हाथ रगड़ते जो आजकल साबुन की मिसल है। जब आप ﷺ गुसल करते *(Bath)* पहले हाथ धोए, फिर दाएं हाथ से बाएं हाथ पर पानी डाला और शर्मगाह धोई, फिर अपना हाथ ज़मीन पर रगड़ा और धोया, कुल्ली की, नाक साफ किया मुंह और दोनों हाथ धोए और अपना सिर धोया, बदन पर पानी बहाया फिर एक तरफ़ सरक गए और दोनों पांव धोए। (सहीह बुख़ारी, किताब गुस्ल) यहाँ दो बात ग़ौर करने की हैं कि नहाने से पहले आपने हाथ धोकर अपनी शर्मगाह धोई और फिर अपने हाथ ज़मीन पर रगड़कर धोए, यानी जब हाजत से लौटें तो अपने हाथ पहले साबुन से धोना चाहिए फिर दूसरे काम करें।

दूसरी बात ग़ौर करने की ये है कि आप पैर धोने से पहले उस जगह से हट गए जहाँ गुस्ल की थी यानी साफ़ सफ़ाई और तहारत का ख़्याल इतना ज़्यादा कि उस जगह से हटना मुनासिब समझा क्योंकि वहाँ गंदगी के कुछ असरात मौजूद रह सकते हैं गुस्ल करने की वजह से। सलफ़े उम्मत का यही तरीक़ा रहा कि जब भी पेशाब करते या हाजत से फ़ारिग़ होते तो अपने हाथ धोते। इब्राहीम रह. ने पेशाब किया और वापस आकर पानी से हाथ धोए। फिर फ़रमाया असलाफ़ (पहले के नेक लोग) इस बात को पसंद करते थे कि पेशाब के बाद पानी से हाथ धोए जाएँ। (इब्ने अबी शैबा, 1130 सहीह) जो शख़्स हाथ धोए बग़ैर (खाने के बाद) सो जाए और हाथ पर चिकनाई वग़ैरह हो और उसे कोई नुकसान पहुंचे तो फिर अपने आपको मलामत *(Blame)* करे। (सुनन अबी दाऊद, 3852 सहीह) यानी खाना खाकर हाथ अच्छी तरह से धोए जाएँ।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जब तुम में से कोई पेशाब करे तो अपनी शर्मगाह को दाएं हाथ से ना पकड़े, और ना दाहिने हाथ से इस्तिंजा करे (शर्मगाह धोना) और ना बर्तन में सांस ले। (सहीह बुख़ारी किताब वुज़ू) इस हदीस़ में बयान तीनों बातें बहुत हाईजैनिक *(Hygienic)* और सेहतमंद हैं

जिसमें शर्मगाह को दाएं हाथ से पकड़ने, छूने या धोने से मना कर दिया गया। और जैसा ऊपर बयान हुआ इसके बाद फिर हाथ धोना या वुजू करना। दूसरे बर्तन में सांस ना लें। ये हुक्म भी आम है, मिसाल के तौर पर पानी या शरबत पीयें तो गिलास में सांस ना छोड़ें, खाना पर फूंक ना मारें और ना सांस छोड़ें, ताकि इनको बीमारी के जरासीम *(Germs)* से महफूज रखा जा सके।

इस्लाम में नाख़ून, बगलों के बाल, शर्मगाह के बाल और मूंछ काटने का हुक्म दिया है और इनके लिए एक ज़्यादा से ज़्यादा मुद्दत तक की पाबंदी भी लगा दी। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जो शख़्स अपने ज़ेर नाफ़ *(Pubic Hair)* बाल ना काटे, नाखून ना तराशे और मूंछें ना काटे वो हम में से नहीं है। (मुसनद अहमद, शाकिर 23372 सहीह) उमर फ़ारूक़ रज़ि. मिम्बर पर फ़रमाया करते थे *(Sermon)* कि अपनी रिहायश गाहों (घर, ठहरने की जगह) को दुरुस्त रखो। (बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद, 446 सहीह) और तबरानी की एक रिवायत में बयान हुआ है कि अपने घरों और सहन को *(Court Yard)* साफ़ रखो।

रास्ते को साफ़ रखने का हुक्म दिया गया है। (इब्ने शैबा 26442) रास्ते से तक्लीफ़ को हटा देना ईमान की शाख़ है। (जामेअ़ तिरमिज़ी 2614) और ऐसा करने पर सदक़ा *(Charity)* का सवाब है। (जामेअ़ तिरमिज़ी 1956) और गुनाह माफ़ करने का वादा किया गया है।

इन सब दलीलों से ये बात ज़ाहिर हो गई कि इस्लाम एक ऐसा दीन है कि जब दुनिया साफ़-सफ़ाई और नहाने धोने पर ज़्यादा ख़्याल ना करती, लोग कई-कई हफ्तों या महीनों बाद अपना लिबास बदलते जिनमें जूं तक रेंगने लगती, बदन पर गंदगी से बू आने लगती उस दौर में इस्लाम ने कितनी बेहतरीन सेहत के लिए मुफ़ीद तालीमात अपने मानने वालों को अता की। साफ़-सफ़ाई इस्लाम में एक अहम मक़ाम रखती है इसलिए हर मुसलमान पर लाज़िम है कि वह उन तालीमात पर अमल करे और अपनी ज़ात, घर, मोहल्ला व मुआ़शरे को पाक व साफ़ रखने में तआवुन करें।

माल हराम से बचना

दौर हाज़िर में हर शख़्स माल दौलत के पीछे पड़कर दुनिया को तरजीह *(Priority)* दे रहा है। दीन मज़हब की तालीमात, क़ौमी तहज़ीब *(Culture)* और अख़लाक़ी मयार (नैतिकता) में तेजी से गिरावट की तरफ़ बढ़ रहा है। ग़रीब तबक़ा मजबूर असहाय इस्तिहसाल *(Exploitation)* का शिकार है। जो कुदरत रखता है वह फ़ायदा उठाने की होड़ में लगा है। एक मिसाल सूद ही की ले लीजिए। कितने इस्तिताअ़त (मालदारी) रखने वाले अपने साथ समाज में तंगी के साथ गुज़र बसर करने वाले मजबूर शख़्स की बिना सूद लिए मदद करते हैं? बल्कि उसकी मजबूरी का फ़ायदा उठाते हुए भारी भरकम सूद पर पैसा उधार देते और ये 5-10 प्रतिशत माहवार से भी ज़्यादा देखा गया है। क्या यही हमारे दीन और तहज़ीब की तालीमात हैं? कोई भी दीन हो उसमें ग़रीब और मजबूर की मदद से नेकियाँ और पुन्य कमाने की तलक़ीन (शिक्षा) की जाती है। इस्लाम में तो इसकी बहुत ज़्यादा फ़ज़ीलत और अजर सवाब रखा गया है। इस्लाम में माल दौलत और उसको हक़ के साथ हासिल करने के लिए बेशुमार हिदायात के साथ तरग़ीब दी गई है। जिससे दुनिया की कमाई को आखिरत की कामयाबी हासिल करने को एक मरकज़ी सुतून *(Central pillar)* की तरह पेश किया गया है। इंसान को मिलना वही है जो उसके लिए लिखा जा चुका (विधि रचिता ने रच दिया) तो क्यों ना इसको पाक व हलाल तरीक़े से हक़ व अ़द्ल के साथ कमाया जाए और पाक व हलाल तरीके से ही इसको हक़ के साथ ख़र्च किया जाए। जितना मर्ज़ी जमा कर लो आख़िर एक दिन सब छोड़कर जाना है तो क्यों ना नेकी और पुन्य कमाकर उनका ज़खीरा साथ ले जाने की कोशिश की जाए?

''अल्लाह जिसकी रोज़ी चाहता है बढ़ाता है और घटाता है, ये तो दुनिया की जिंदगी में मस्त हो गए। हालांकि दुनिया आख़िरत के मुक़ाबले में निहायत (हक़ीर) पूँजी है।'' (सूरह राअ़द 13/26)

दुनिया के असबाब (पूंजी) और रिज़्क़ की कमी बेशी सिर्फ़ अल्लाह के इख़्तियार में है। वो अपनी हिकमत जिसको सिर्फ़ वही जानता है, के मुताबिक़

किसी को ज़्यादा देता है और किसी को कम। रिज़्क़ की बहुतात इस बात की दलील नहीं कि अल्लाह उससे ख़ुश है या रिज़्क की कमी का मतलब ये नहीं कि अल्लाह उससे नाराज़ है। दुनिया की हैसियत आख़िरत के मुक़ाबले ऐसी है जैसे समुंदर में अंगुली डालकर निकालें तो देखें तो अंगुली पर समंदर के मुक़ाबले कितना पानी लगा है। तो इंसान ग़ौर फ़िक्र करे कि वह अंगुली के पानी को पाने के लिए अपनी तमअ़ व हिरस को बढ़ाए या समुंदर के पानी की तरह आख़िरत की निअ़मतें हासिल करने के लिए जुस्तजू और कोशिश में लगा रहे।

"*और अगर तुझे अल्लाह तआ़ला कोई तकलीफ़ पहुंचाए तो उसको दूर करने वाला सिवाय अल्लाह के कोई नहीं। और अगर तुझ को अल्लाह कोई नफ़ा पहुंचाए तो वो हर चीज़ पर पूरी क़ुदरत रखने वाला है।*" (सूरह अनआ़म 6/17)

यानी रिज़्क़ तंग कर दे या मुसीबत डाल दे तो कोई दूर नहीं कर सकता और अगर रिज़्क कुशादा कर दे या नफ़ा पहुंचाए तो कोई दूसरा रोक नहीं सकता चाहे कितनी भी मेहनत कोशिश क्यों ना कर ले? रसूलुल्लाह ﷺ दुआ फ़रमाते कि अल्लाह के सिवा कोई इलाही (माबूद) नहीं, वो अकेला है उसका कोई शरीक नहीं। या अल्लाह जो तू दे उसको कोई रोक नहीं सकता और जिसको तू रोक दे उसको कोई दे नहीं सकता। (सहीह बुख़ारी, किताब क़दर)

"*और बहुत से जानवर हैं जो अपनी रोज़ी उठाए नहीं फिरते उन सबको और तुम्हें भी अल्लाह तआ़ला ही रोज़ी देता है, वो बड़ा ही सुनने जानने वाला है।*" (सूरह अ़नकबूत 29/60)

जो भी जानदार हो जहाँ कहीं भी हो वहीं उसका रिज़्क़ पहुंचा दिया जाता है। कोई इंसान हो, जानवर हो, परिंदा हो या चींटी वग़ैरह। ज़मीन पर हो या हवा में या समंदर की गहराई या चट्टान के अंदर, वहीं उसका रिज़्क़ पहुंचता है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया अगर तुम अल्लाह पर तवक्कुल और भरोसा करो उसके हक़ के साथ, तो तुम्हें ऐसे रिज़्क़ देगा जैसा परिंदों को देता है, ये सुबह ख़ाली पेट बाहर जाते और सीर होकर और पेट भर कर वापस लौटते। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2344 सहीह) और फ़रमाया कि जब तक तुम्हारे सिर

हरकत कर सकते हैं कभी भी रिज़्क़ से मायूस ना होना, क्योंकि इंसान को उसकी माँ जन्म देती है तो वो चूज़े की तरह होता है जिस पर कोई छिलका नहीं होता, उसके बाद अल्लाह उसे रिज़्क़ अता फ़रमाता है। (मुसनद अहमद, शाकिर 15800 सहीह) अल्लाह तआ़ला अपने बंदे की (मोमिन की) उसकी जरूरत के मुताबिक़ मदद करता है अगर उसे ज़्यादा की ज़रूरत है तो ज़्यादा और अगर कम की ज़रूरत है तो कम अता करता। कुछ बंदे ऐसे होते हैं कि अगर उनको ज़्यादा दे दिया जाए तो उनका दीन ख़राब हो जाए और कुछ बंदे ऐसे होते हैं कि अगर कम दिया जाए तो दीन ख़राब हो जाए। अगर हर शख़्स उसका फ़रमांबरदार बंदा बन जाए तो उसी पर तवक्कल और भरोसा करे।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया जिस आदमी का ग़म फ़िक्र दुनिया ही दुनिया हो तो अल्लाह उसके मामलात को मुंतशिर (बिखेर देना *Unresolved*) कर देता है, उसकी मोहताजी को उसकी आँखों के दरमियान कर देता है। और उसे दुनिया से भी वही मिलता है जो उसकी तक़दीर में लिखा होता है। (लेकिन) जिस आदमी की फ़िक्र आख़िरत हो तो अल्लाह उसके मामलात को जमा कर देता है उसके दिल को ग़नी *(Satisfied)* कर देता है और दुनिया ज़लील होकर उसके पास पहुंच जाती है। (सिलसिला सहीहा, 950) यानी बंदा अपने मामलात में अल्लाह के अहकाम को सामने रखे। रोज़ी के लिए भी हराम तरीक़ा इस्तेमाल ना करे। जो लोग दुनिया के माया जाल में फंस जाते हैं उनके काम में परेशानियाँ डाल दी जाती हैं। वो हर वक़्त, बेचैनी की हालत में दुनिया में ही मसरूफ़ *(Busy)* रहते हैं। और जो अपने रब के अहकाम के मुताबिक़ अपने काम करे और आख़िरत को तरजीह दे तो उसके काम आसान कर दिए जाते हैं। और वो पुर सुकून जिंदगी बिताता है। बंदा कहता मेरा माल मेरा माल हालांकि उसका माल तीन चीजें है जो खाया और फ़ना किया, जो पहना और पुराना किया जो दिया (सदक़ा) जमा किया (आख़िरत के लिए)। उसके सिवा तो वो जाने वाला है और छोड़ जाने वाला है दूसरों के लिए (सहीह मुस्लिम, किताब जुहद)

जब तक किसी जानदार का रिज़्क़ पूरा ना हो जाए उसे मौत नहीं आ सकती फिर तमअ़ (लालच) और बेचैनी कैसी? रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया

ऐ लोगों अल्लाह से डरो और रिज़्क़ के बारे में एतेदाल का रास्ता इख़्तियार *(Moderate)* करो। इसलिए कि कोई शख़्स नहीं मरेगा जब तक अपनी रोज़ी पूरी ना कर लेगा। चाहे मिलने में देरी हो। अच्छे तरीक़े से रोजी तलब करो और जो हलाल है उसको लो और हराम को छोड़ दो। (सुनन इब्ने माजा, 2144 सहीह)

माल का होना सुकून और खुश रहने का सबब नहीं बनता। अक्सर देखा गया है कि ज़्यादा माल हवस को और बढ़ाता है और इंसान सुकून खो देता है। जबकि बेहतरीन रिज़्क़ वो है जो इंसान को बरकत के साथ ग़नी करे *(Satisfied)* रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया बेशक निजात पा ली उसने जिसको इस्लाम की हिदायत हुई और ज़रूरत के मुवाफ़िक़ रोज़ी दिया गया और उस पर क़नाअ़त (राज़ी होना) की। (सुनन इब्ने माजा, 4138 सहीह)

इंसान को बेतहाशा तमा व हवस का शिकार होकर अपना दिन रात माल कमाने में ही नहीं गंवा देना चाहिए। जो दुनिया के पीछे पड़ गया वो अक्सर हलाक होता है। रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान है कि जो शिकार के पीछे पिल पड़ा वो ग़ाफिल हो गया (सिलसिला सहीहा, 1282) इसलिए चाहिए कि इसे हक़ के साथ पुर सुकून तरीक़े से हासिल करे। वो माल जो कम होने के बावुजूद किफ़ायत करने वाला हो वो उस माल से बहुत बेहतर है जो ज़्यादा हो मगर ग़ाफ़िल करने वाला हो। आप ﷺ ने फ़रमाया कि उस शख़्स से रिज़्क़ छीन लिया जाता है जो गुनाह करता है। (सुनन इब्ने माजा, 90) अगर इंसान रिज़्क़ को गुनाह करके हराम तरीक़े में कमाएगा तो उससे बरकत उठा ली जाती है। आज के मौजूदा दौर में इसका चलन ज़्यादा ज़ोर पकड़ता जा रहा है। इंसान मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से गुनाहें कर के माल कमाने में लगा है जिससे मुआ़शरे में बेचैनी का आलम है। ख़ासतौर पर उन लोगों में उससे मुतअल्लिक़ ज़्यादा ही बुराइयाँ देखने में आती हैं जो मालदार हैं बैंक बैलेंस रखते और ऊँची तनख्वाहें लेते हैं। जबकि दूसरे लोग भी इनसे महफ़ूज़ नहीं।

अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है:

''क्या हर शख़्स जो आरजू करे उसे मुयस्सर है।'' (सूरह नज्म 53/24)

ना तो इंसान की हर आरजू और ख़्वाहिश पूरी होती है और ना ही उसकी आरजू व ख़्वाहिशों का कोई अंत ही है। ये इंसान ना ख़त्म होने वाली ख़्वाहिशें करता है जैसा कि फ़रमाया गया है कि अगर आदमी के पास दो वादी *(Valley)* भर कर माल हो फिर भी उसकी आरजू होगी कि एक वादी माल की और हो, और उसके नफ़्स को कोई चीज़ भरने वाली नहीं सिवाय मिट्टी के। और अल्लाह तआ़ला जिसे चाहता उसे बचा लेता है। (सुनन इब्ने माजा 4235 सहीह) इंसान की ख़्वाहिश की तकमील कब्र की मिट्टी ही कर सकती है यानी मौत। दीनार दिरहम (माल दौलत) का बंदा तबाह हुआ। अगर कुछ दुनियावी फ़ायदा नज़र आए तो दोस्त या मुआ़शरे की भलाई के काम में नजर आएँ, वैसे मोहताज ज़रूरतमंद से मुहब्बत का नाम निशान नहीं। अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है–

"ऐ ईमान वालो! अपने आपस के माल बातिल (नाजाइज़) तरीक़े से ना खाओ, मगर ये कि तुम्हारी आपस की रज़ामंदी से तिजारत हो, और अपने आप को क़त्ल ना करो, यक़ीनन अल्लाह तआ़ला तुम पर निहायत महरबान है।" (सूरह निसा 4/29)

इसमें झूठ, फ़रेब, धोखा, अमानत में ख़यानत, झूठी क़सम, झूठी गवाही, अ़द्ल ना करना और नाहक़ माल हड़पना सब शामिल हैं जैसा कि इनके बारे में मनाही और मज़म्मत पहले बयान हो चुकी। इसी तरह सूद, जुवा, चोरी, राहज़नी, रिश्वत और अवाम व हुकूमत का माल नाजाइज़ तरीके से ले लेना भी बड़ी गुनाहों में शरीक हैं। इसी तरह हराम चीज़ों का कारोबार करना भी बातिल में शामिल है। अपने आप को क़त्ल ना करने से मतलब आख़िरत की हलाकत भी हो सकती है और दुनिया की बेचैनी, मुसीबतें और ख़ुदकुशी भी हो सकती है। जब मुआ़शरे में गुनाह आम होकर फैल जाएँ तो अल्लाह तआ़ला उस क़ौम पर मुख़्तलिफ़ शक्ल में मुसीबतें डालकर अज़ाब मुसल्लत कर देता है। इसमें आपसी क़त्ल ग़ारत, झगड़ा और फ़ितना व फ़साद भी हो सकता है जो मुआ़शरे के भाईचारे के तानेबाने को तोड़कर दरहम बरहम कर देता है। जैसाकि दौरे हाज़िर में देखने में आ रहा है।

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया अगर फ़ातिमा रज़ि. मुहम्मद ﷺ की बेटी भी

चोरी करे तो उसका भी हाथ काटा जाएगा। (सुनन निसाई, 4897 सहीह) और फ़रमाया कि एक-दूसरे के माल तुम पर हराम हैं। क़यामत के दिन हर दग़ाबाज़ के लिए एक झण्डा होगा (सहीह बुख़ारी, किताब हील) यानी उसके लिए रुसवाकुन अज़ाब होगा। सरकारी माल से माल या कोई चीज़ बातिल तरीक़े से लेना हराम है। और चुराया गया माल आग बनकर उसको जलाएगा। (सहीह बुख़ारी, किताब अलग़ाज़ी) क़यामत के दिन नाहक़ तरीक़े से हासिल किया गया हुकूमत का माल आग बनकर चुराने वाले को जलाएगा और इस तरह उसको अज़ाब दिया जाएगा। सरकारी किसी भी चीज़ को चोरी करना जाइज़ नहीं क्योंकि इसमें लोगों के माल को धोखे से इस्तेमाल करना शामिल है। अगर हुकूमत लोगों को उनके हुक़ूक़ नहीं देती तो इससे अवाम *(Public)* के माल से चोरी करना जाइज़ नहीं। ये मालियत *(Property)* लोगों की है और इसको बातिल तरीक़े से हासिल करना अवाम और मुआ़शरे के साथ ज़्यादती और धोखा है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, ना तो किसी को अपने फ़ायदे के लिए नुक़सान पहुंचाए और ना किसी को बिलाफ़ायदा और बेमक़सद नुक़सान पहुंचाए। (सुनन इब्ने माजा, 2340)

जो शख़्स किसी दूसरे से माल जायदाद रिश्वत के तौर पर ले उसे चाहिए कि वो उसे वापस कर दे। चाहे उसने अपना हक़ लेने के लिए ही क्यों ना दी हो। रसूलुल्लाह ﷺ ने रिश्वत लेने और देने वाले पर लानत की है। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 1336 सहीह)

इस तरह रिश्वत कबीरा गुनाह है। इससे हक़ तलफ़ी होती है और दूसरे शख़्स का माल नाजायज तरीक़े से हासिल किया जाता है। और अगर अपना हक़ लेने के लिए रिश्वत दी जा रही है तो लेने वाला उस पर ज़ुल्म कर रहा है जबकि हर शख़्स को अ़द्ल के साथ हुक़ूक़ की अदायगी कर देनी चाहिए।

माल हराम की कमाई हो या किसी दूसरे का माल बातिल और नाजाइज़ तरीके से हड़पना हो, ये सब तरीक़े इस्लाम ने हराम करार दिए। अक्सर देखने में ये भी आता है कि ऐसा करने वाले एक ख़ुशी महसूस करते हैं क्योंकि ये बिना मेहनत हासिल हो जाता है। जबकि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि दुनियां की लज़्ज़त (ख़ुशी) आख़िरत की कड़वाहट है और दुनिया की तल्ख़ी

(कड़वाहट) आख़िरत की मीठी लज़्ज़त है। (सिलसिला सहीहा, 1817) अल्लाह का ख़ौफ़ रखने वाले उसके फ़रमांबरदार बंदे के लिए ये दुनिया एक जेल की तरह है जहाँ उसे मुआ़शरे से और अपने नफ़्स और ज़ात ख़ुद से जिहाद करना पड़ता है जिसमें तकलीफ़ भी बर्दाश्त करनी पड़ती और सब्र का दामन भी थामना होता है। तब कहीं हराम ख़ोरी से ख़ुद को बचा पाता है। मगर ऐसा करने से अल्लाह ने आख़िरत की निअ़मतों का वादा भी तो किया है। अब चाहे इंसान दुनिया पसंद करे जो आरज़ी रिहायश *(Temporary abode)* है या हमेशा बाक़ी रहने वाली आख़िरत की निअ़मतों और लज़्ज़तों वाली ज़िंदगी। हराम ख़ोरी, नाहक़ और बातिल तरीक़े से किसी का माल खाने से तो इंसान अपना पेट आग से ही भरता है। यानी वो जहन्नम का अज़ाब मोल लेता है।

इस्लाम में माल जमा करना और उससे ग़रीब मोहताज की मदद करके सदक़ा ना करने से मना किया गया है बल्कि ये तलक़ीन (शिक्षा) की गई है कि माल को जमा ना करो और इससे मुआ़शरे के ग़रीबों में उनकी मदद पर ख़र्च करो। इसकी कुछ मिसालें देखिए—

रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया अगर मेरे पास उहुद पहाड़ भी सोने का हो तो मुझे इसमें ख़ुशी होगी कि उसे राहे इलाही में ख़र्च (सदक़ा) कर दूं। और तीन दिन भी मुझ पर ना गुज़र पाएँ कि एक दीनार या दरहम भी मुझ पर बाक़ी ना बचे, सिवा उस चीज़ के जो मैं अपने ऊपर क़र्ज़ की अदायगी के लिए रोक लूं। (मुसनद अमहद, 8180 सहीह) रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, जागीर ना बनाओ, कहीं तुम दुनिया की रग़बत *(Desire)* में रीझ जाओ। (जामेअ़ तिरमिज़ी, 2328, सहीह)

अबू ज़र रज़ि. को महीने का वज़ीफा मिला। उनके साथ उनकी लौण्डी (नौकर) थी जो उनकी ज़रूरत पूरी कर रही थी। उन पर सात अशरफ़ी बच गई। उन्होंने लौण्डी से कहा कि इनके पैसे ख़रीद लो *(Change dirham)* ताकि सदक़ा कर सकें। लौण्डी ने कहा कि अगर आप अपनी ज़रूरत के लिए रख लो और जब ज़रूरत पड़े तो ख़र्च कर लो या मेहमान पर। अबू ज़र रज़ि. ने फ़रमाया, बेशक मुझसे मेरे ख़लील (नबी ﷺ) ने फ़रमाया था। जो भी

सोना चाँदी (माल) रोके रखा जाए वो जहन्नम का अंगारा होगा यहाँ तक कि इंसान उसको राहे इलाही में ख़र्च ना कर दे। (तरग़ीब व तरहीब, 517 सहीह)

रसूलुल्लाह ﷺ बिलाल रज़ि. के पास गए और बिलाल के पास खजूर का एक ढेर था। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, ए बिलाल! ये क्या है? कहा कि, एक चीज़ जो कल के लिए ज़खीरा किया है। आपने फ़रमाया, तुझे डर नहीं लगता कि कल इससे तुझे जहन्नम का बुख़ार पहुंचे। ख़र्च करो ए बिलाल और ना डर रख फ़क़ीरी का अर्श के मालिक से। (मिश्कात, 1885 सहीह)

उम्म सलमा रज़ि. से मरवी है कि एक मरतबा अब्दुल रहमान बिन औफ़ रज़ि. उनके पास आए और कहने लगे अम्मा जान! मुझे डर है कि माल की कसरत मुझे हलाक ना कर दे क्योंकि मैं कुरैश में सबसे ज़्यादा मालदार हूँ। उन्होंने जवाब दिया, बेटा! इसे ख़र्च करो। क्योंकि मैंने नबी ﷺ से ये फ़रमाते सुना है कि मेरे बाज़ साथी ऐसे भी होंगे कि मेरी उनसे जुदाई होने के बाद वो मुझे दोबारा कभी नहीं देख सकेंगे। अब्दुर रहमान बिन औफ़ रज़ि. जब बाहर आए तो रास्ते में उमर रज़ि. से मुलाकात हो गई, उन्होंने उमर रज़ि. को ये बात सुनाई। उमर रज़ि. ख़ुद उम्मे सलमा रज़ि. के पास पहुंचे और फ़रमाया कि अल्लाह की क़सम खाकर बताइए क्या मैं भी उनमें से हूँ? उन्होंने फ़रमाया, नहीं। लेकिन आप के बाद मैं किसी के मुतअल्लिक़ ये बात नहीं कह सकती। (मुसनद अहमद, शाकिर 26369 सहीह)

ये था ख़ौफ़ इलाही और इताअ़त व फ़रमांबरदारी कि नबी ﷺ के सहाबी हर बात पर अ़मल करते और एक ऐसा मुआ़शरा क़ायम किया कि जिसकी आपसी भाईचारा, मुहब्बत व हमदर्दी की कोई दूसरी मिसाल तारीख़ में नहीं मिलती। अगर हर मालदार शख़्स अपनी ताक़त के मुताबिक़ मोहताज और ज़रूरतमंद की मदद को सामने आए तो आज भी एक ख़ुशहाल मुआ़शरा वुजूद में आ सकता है जो ग़रीबी से पैदा होने वाली ख़राबियों से भी पाक हो।

ज़कात और सदक़ा *(Charity)*

इस्लाम के मानने वालों पर यह फ़र्ज़ और अनिवार्य है कि वह इस बात को यक़ीन के साथ तस्लीम करें कि रिज़्क़, माल दौलत समेत हर चीज़ का देने

वाला सिर्फ़ अल्लाह है। वही हर चीज़ पर क़ादिर है यानी उसी पर भरोसा और तवक्कल रखना चाहिए और सिर्फ़ उसी की रज़ा व ख़ुशी के लिए उसकी दी हुई नेमतों का शुक्र के साथ इस्तेमाल करना चाहिए। उसका फ़रमान है कि:

''अल्लाह तआलाजिसकी रोज़ी चाहता है बढ़ाता है और घटाता है। ये तो दुनिया की ज़िंदगी में मस्त हो गए। हालांकि दुनिया आख़िरत के मुक़ाबले में निहायत हक़ीर (तुच्छ) पूंजी है।'' (सूरह रअ़द 13/26)

इस दुनिया की ज़िंदगी और इसकी रौनक़ व कामयाबी पर आदमी को ना तो इतराना चाहिए, ना इसकी तमा (लालच) में गिरफ़्तार होना चाहिए और ना इसको सिर्फ़ ख़ुद के लिए समेट कर रखना चाहिए। ऐसा करने वाले के लिए बड़ी ख़राबी और नुक़सान है। जैसा कि फ़रमाया गया है कि:

''जो माल को जमा करता जाए और गिनता जाए, वो समझता है कि उसका माल उसके पास हमेशा रहेगा। हरगिज़ नहीं, ये तो ज़रूर तोड़ फोड़ देने वाली आग में फेंक दिया जाएगा।'' (सूरह हुमज़ा 104/2-4)

बल्कि अल्लाह के दिए हुए माल व दौलत को उसके हुक्म के मुताबिक़ ख़र्च करे। और नेकी और पुन्य हासिल करने में देर ना करे। ना जाने कब और कहां उसके भेजे हुए दूत मौत की ख़बर लेकर आ पहुंचें। और तब अफ़सोस करने लगे कि काश इस पीछे छूट जाने वाले माल के कुछ हिस्से से ग़रीब, मोहताज और कमज़ोर व बेसहारा की मदद करके कुछ सवाब और पुन्य कमा लेता ताकि आख़िरत में निदामत और पछताना ना पड़े। अल्लाह का फ़रमान है कि:

''और जो कुछ हमने तुम्हें दे रखा है उसमें से ख़र्च करो, इससे पहले कि तुम में से किसी को मौत आ जाए, तो कहने लगे ऐ मेरे रब! मुझे तू थोड़ी देर की मोहलत क्यों नहीं देता? कि मैं सदक़ा करूं और नेक लोगों में से हो जाऊं।'' (सूरह मुनाफ़िक़ून 63/10)

अगर इंसान अपने रब के दिए हुए माल को उसकी ख़ुशी हासिल करने के लिए उसके बताए हुए रास्तों में ख़र्च करेगा तो उसका रब ख़ुश होकर उसे उससे कहीं ज़्यादा माल के साथ साथ दिल का सुकून और घर परिवार में बरकत अता करेगा।

''जो लोग अपना माल अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं उसकी मिसाल उस दाने जैसी है जिसमें से सात बालियां निकलें और हर बाली में सौ दाने हों। और अल्लाह तआ़लाजिसे चाहे बढ़ा चढ़ा कर दे। और अल्लाह कुशादगी वाला और इल्म वाला है।'' (सूरह बक़रा 2/261)

आदमी को चाहिए कि समाज के ग़रीब, मोहताज और कमज़ोर लोगों का ख़्याल रखे। उनकी मदद करने में पूरी कोशिश करे। याद रहे कि अगर कल खुद पर कोई आपदा या आफ़त आ जाए और माल बरबाद हो जाए और पीछे नन्हें नन्हें बच्चे हों तो फिर वह खुद को किस हालत में पाएगा? क्या उसे उस वक़्त ये उम्मीद और आशा नहीं होगी कि कोई मेरी और मेरे बच्चों की मदद करे। तो फिर आज मालदारी की हालत में समाज के ग़रीब व मजबूर लोगों का सहारा क्यों ना बना जाए? अल्लाह का फ़रमान है कि:

''और चाहिए कि वो इस बात से डरें कि अगर वो खुद अपने पीछे नातवां (कमज़ोर, नन्हें Helpless) बच्चे छोड़ जाते जिनके ज़ाए होने का अंदेशा रहता है.....।'' (सूरह निसा 4/9)

दूसरे हर धर्म की मान्यता रही है कि ग़रीबों की मदद करो। उनके आशीर्वाद और दुआ से फ़ायदा मिलता है। नबी ﷺ का फ़रमान है कि तुमको रिज़्क़ ग़रीबों की वजह से मिलता है।

''तुमको जो मदद होती है या रोज़ी मिलती है वह ग़रीब कमज़ोर लोगों की वजह से है।'' (सहीह बुख़ारी, किताब जिहाद) और फ़रमाया गया है कि:

''जो रिज़्क़, माल और दौलत इंसान को दी गई है उसमें ग़रीबों का हक़ है। उनका Right है।'' इस बारे में बेशुमार आयतें क़ुरआन में नाज़िल हुई और नबी ﷺ की हदीसों में भी इसका कसरत से ज़िक्र है। जैसे कि:

''और जिनके मालों में मुक़र्रर हिस्सा है। मांगने वालों का भी और सवाल से बचने वालों का भी।'' (सूरह मआ़रिज़ 70/24-25) यह उन लोगों की निशानी बताई गई जो अपने रब से डरते हैं और उसकी खुशी हासिल करने की फ़िक्र और जुस्तुजू में लगे रहते हैं। उसके हुक्म के मुताबिक़ अपना माल ख़र्च करते हैं। ऐसे लोग कामयाब और फ़लाह पाने वाले होते हैं। नबी ﷺ ने फ़रमाया:

''जो शख़्स बेवाओं (विधवा) और मोहताजों की परवरिश के लिए कोशिश करे उसका सवाब इतना है जैसे कोई अल्लाह की राह में जिहाद कर रहा है, रात में नमाज़ में खड़ा और दिन को रोज़ा रख रहा है। '' (सहीह बुख़ारी, नफ़क़ा) इतना ही नहीं बल्कि ऐसे शख़्स को रिज़्क़ में बढ़ोतरी ऐसी जगह से देगा जिसका वो गुमान भी नहीं कर सकता।

नबी ﷺ ने फ़रमाया कि एक शख़्स ने बादल से एक आवाज़ सुनी कि फ़लां के बाग़ को सींच दे। बादल एक तरफ़ चला और एक ज़मीन में पानी बरसाया। नालियां लबालब हो गई। वह शख़्स बरसते पानी के पीछे पीछे गया। उसने देखा कि एक आदमी बाग़ में अपने फावड़े से पानी को इधर उधर कर रहा है। उस शख़्स ने बाग़ वाले आदमी से कहा कि ऐ रब के बंदे! तेरा नाम क्या है? उसने कहा फ़लां नाम, जो बादल में सुना था। फिर बाग़ वाले ने पूछा कि ऐ रब के बंदे तूने मेरा नाम क्यों पूछा? वो बोला मैंने बादल में एक आवाज़ सुनी जिसका ये पानी है। कोई कहता था फ़लां के बाग़ को सींच दे। तेरा नाम लेकर। तू इस बाग़ में अल्लाह के एहसान की क्या शुक्रगुज़ारी करेगा? बाग़ वाले ने कहा कि जो इस बाग़ में पैदा होगा एक तिहाई उसकी ख़ैरात *(Charity)* करूंगा। (सहीह मुस्लिम 7473, दुनिया से नफ़रत)

नबी ﷺ के सहाबी *(Companions)* इस्लाम के सच्चे सिपाही थे। उनकी जिंदगी का हर पल अल्लाह और उसके रसूलुल्लाह ﷺ की फ़रमांबरदारी *(Obediency)* में गुज़रता। वह माल की तमअ् और लालच से महफ़ूज़ थे। किताबों में बेशुमार सहाबी रज़ि. की बातें महफ़ूज़ हैं कि उन्होंने किस तरह माल को ग़रीबों और मोहताजों की मदद में ख़र्च किया और किस तरह अल्लाह ने उनको कुछ चंद सालों में ही लाखों दिरहम और दीनार का मालिक बना दिया।

जब बात ख़र्च की हो कि ग़रीब मोहताज की मदद करनी चाहिए तो ख़्याल रहे कि अपने क़रीबी ख़ून के रिश्तों का ख़्याल रखें। इसे सिलारहमी कहा जाता है। ऐसा करने से आदमी की उम्र और रिज़्क़ में बढ़ोतरी होती है और आख़िरत में भी आसानी। इसी तरह अपने पड़ोसी का ख़्याल रखें। फ़रमाया गया है कि वह शख़्स मोमिन नहीं हो सकता जो पेट भरा सोता है और

उसका पड़ोसी भूखा हो। (मिश्कात 4991) जब वह मोमिन ही नहीं तो उसका रब उससे कैसे ख़ुश होगा और कैसे उसको रिज़्क़ मिलेगा और कैसे उसको सुकून व राहत मिलेगी। इंसान को चाहिए कि माल की तमअ़ और लालच से ख़ुद को बचाए। जो माल दौलत उसको दी गई है उसे समाज के ग़रीब, कमज़ोर और बेसहारा लोगों की मदद में भी ख़र्च करे। ताकि एक हमदर्द और सुख दुख में मददगार समाज क़ायम हो सके जिसमें हर इंसान का भला है।

इस्लाम में राह अल्लाह, ग़रीब और मोहताज वग़ैरह की मदद और देख रेख में किए गए ख़र्च को सदक़ा कहा जाता है। जैसा आपने पढ़ा कि इस्लाम इसकी ख़ूब तरग़ीब देता है और प्रोत्साहित करता है। सदक़ा की दो क़िस्में हो सकती हैं। एक ज़कात जो फ़र्ज़ सदक़ा है *(Obligatory Charity)* और दूसरा सदक़ा कहलाता है *(Voluntary Charity)*। ज़कात फ़र्ज़ और अनिवार्य है। जब माल (सोना, चांदी, नक़्द), जानवर या तिजारती सामान वग़ैरह एक ख़ास मिक़दार को पहुंच जाए और उस पर एक साल बीत जाए तब कुल माल पर *2.5%* ज़कात देना फ़र्ज़ है। इसको किन किन पर और कहां कहां ख़र्च करना चाहिए उसके बारे में सूरह तौबा (9/60) में आठ क़िस्में *(Catagories)* बताई गई हैं। नक़्द माल *(Currency)* को बेहतर है कि चांदी की वाजिब मिक़दार से आंका जाए ताकि ग़रीबों को ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा पहुंच सके। इसके अलावा आदमी को अपने माल से नफ़ली सदक़ा *(Voluntary Charity)* में भी दिल खोलकर ख़र्च करना चाहिए। कहीं ऐसा ना हो कि बख़ीली और कंजूसी के सबब जमा किया गया माल ख़सारा, नुक़सान और हलाकत का सबब बन जाए। जैसा कि फ़रमाया गया है कि:

"रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया ख़राबी है बहुत माल वालों की मगर जो कोई माल को इस तरफ़ ख़र्च करे और इस तरफ़ और इस तरफ़ और इस तरफ़। इशारा किया दाएं, बाएं, आगे और पीछे।" (बुख़ारी, मुस्लिम, इब्ने माजा 4129)

यानी इंसान को जिसे उसके रब ने मालदार बनाया और इसकी इस्तिताअ़त *(Capacity)* दी कि वह ख़र्च कर सके तो उसे चाहिए कि समाज के कमज़ोर, ग़रीब, मोहताज और ज़रूरतमंद लोगों की मदद और परवरिश में दिल

खोलकर ख़र्च करे और मदद करे। ऐसे शख़्स को दुनिया और आख़िरत *(Hereafter)* में सवाब और फ़ायदा मिलेगा। साथ ही समाज में भी उसे फ़ायदा मिलता है। जैसे:

- वह ज़रूरतमंदों की मदद करता है, इससे दिल को सुकून मिलता है।
- बच्चों में रहम और मदद *(Generasitty)* पैदा करता है।
- जिंदगी में इतमिनान *(Satisfaction)* को बेहतर बनाता है।
- समाज में कमज़ोर लोगों की हिफ़ाज़त करता है।
- आदमी का अपने समाज में इज़्ज़त, मान आर सम्मान बढ़ाता है।

सूद

रिबा यानी सूद *(Interast)*, इसकी हर शक्ल इस्लाम में मना और हराम कर दिया गया है। किसी भी तरह का क़र्ज़ जिसमें उसकी असली रक़म से ज़्यादा वसूल किया जाए सूद है। या क़र्ज़ देकर किसी तरह का फ़ायदा उस शख़्स से उठाया जाए या किसी ख़ास चीज़ को देकर इसकी ज़्यादा तादाद और मात्रा वसूल की जाए, एसी अनेक सूरतें सूद की हो सकती हैं। क़ुरआन में इसे हराम कर दिया गया है।

''ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और जो सूद बाक़ी रह गया है वो छोड़ दो अगर तुम सचमुच ईमान वाले हो। और अगर ऐसा नहीं करते तो अल्लाह और उसके रसूल से लड़ने के लिए तैयार हो जाओ।'' (सूरह बक़रा 2/278-9) और फ़रमाया गया है कि:

''अल्लाह सूद को मिटा देता है और सदक़ा (Charity) को बढ़ाता है। और अल्लाह किसी नाशुक्र और गुनहगार से मुहब्बत नहीं करता।'' (2/276)

और नबी ﷺ ने सूद खाने वाले पर, खिलाने वाले पर, उसके गवाहों पर और इसके लिखने वाले पर लानत *(Cursing)* भेजी है। (सुनन इब्ने माजा 2277) यानी *Curse* और अभिशाप दिया गया है जिसके नतीजे में सूद खाने वाले पर दुनिया में मुसीबतें आएंगी और आख़िरत में जहन्नम का अज़ाब और कष्ट। सूद को इस्लाम में सख़्ती के साथ मना किया गया है। और अगर फिर भी कोई मुसलमान सूद का काम करता है तो उसका ईमान कामिल नहीं। ऐसे

गुनहगारों पर लानत भेजी गई है और अल्लाह उससे जंग का ऐलान करता है। इसके बुरे असर इंसान को दुनिया और आख़िरत में भुगतने पड़ेंगे। यह कई शक्ल में आज इंसानों को भुगतने पड़ रहे हैं। जैसे माल की बरबादी, दिमाग़ी परेशानी, जिस्म की बीमारियां, तनाव और दिल में ख़ुशी और सुकून का ना होना। माल की तमअ़ से पैदा हुई बेचैनी लोगों को ख़ुदकशी करने तक मजबूर कर रही है। यह सब अल्लाह की जंग है जिससे उसने लोगों पर अज़ाब डाला है। क्योंकि नबी ﷺ का फ़रमान है कि ''जब लोगों में ज़िना और सूद फैल जाए तो अल्लाह का अज़ाब और सज़ा उन पर आएगी।''(सहीह जामेअ़ 679)

सूद मुसलमानों के दरमियान, मुसलमान का ग़ैर मुसलमान के साथ, इस्लामी मुल्क में या दूसरे मुल्कों में हर जगह हर सूरत में हराम है। वह चाहे सरकारी बैंक हों या दूसरे, इन सब में सूद का लेन देन मना है।

सूद की कई शक्लें हैं। जैसे फ़रमाया गया है कि सूद के 73 बाब *(Chapters)* हैं। (सुनन इब्ने माजा 2275) इसलिए सहाबी सूद से काफ़ी डरते थे। उमर रज़ि. कहा करते थे कि तीन चीज़ें ऐसी हैं जिनकी आरज़ू रह गई, काश नबी ﷺ साफ़ साफ़ बयान फ़रमा जाते (जिनमें से एक सूद का मामला है) (सहीह बुख़ारी, किताब शराब) ये था उनके ख़ौफ़ का आलम कि उसकी तफ़्सीलात *(Details)* ज़्यादा अच्छी तरह मालूम हो जातीं ताकि उनसे बचा जा सकता।

सूद की ही एक शक्ल *Insurance* है। यह कई शक्लों में समाज में आम हो गया है। यह भी हर शक्ल में इस्लाम में मना किया गया है। इसके कई बुरे नतीजे आदमियों को और समाज को भुगतने पड़ रहे हैं।

सूद की मुख़्तसर *(In brief)* कुछ आम शक्लें ये हो सकती हैं।

* एक शख़्स को कुछ पैसा उधार दिया जाए और समय बीतने पर उससे ज़्यादा वापस लिया जाए।
* रुपया बैंक या कहीं और जमा किया जाए और उससे मुनाफ़ा हासिल किया जाए।
* किसी शख़्स को कुछ रक़म दी जाए *(Advance)* और उसकी वजह से उससे सामान ख़रीदने, सेवा लेने, मकान किराए में या उसके

ज़रिए दी गई ख़िदमत, सेवाओं और दूसरे कामों में रियायत कराई जाए या फ़ायदा उठाया जाए।

* किसी को कोई चीज़ उधार दी जाए और फिर उससे वह चीज़ ज़्यादा तादाद में वापस ली जाए।
* जिस शख़्स को उधार दिया गया उससे तोहफ़ा, रिश्वत या कोई फ़ायदा उठाया जाए।

इस तरह हर शक्ल में सूद मना है। इस्लाम ऐसा समाज चाहता है जहां इंसान को भाई भाई की तरह समझा जाए। ग़रीब, फ़क़ीर, मजबूर और ज़रूरतमंदों की मदद करने में सबक़त (अग्रणी) की जाए। उनकी मजबूरी का फ़ायदा ना उठाया जाए और ना उनकी तक्लीफ़ व परेशानी को सूद जैसे गुनाहों के बोझ से बढ़ाया जाए।

क़र्ज़

क़र्ज़ यानी *Loan or Debt* की इस्लाम ने मजबूरी और जाइज़ ज़रूरत के वक़्त लेने की इजाज़त दी है। जैसे कि सूरह बक़रा 2/282 फ़रमाया गया है कि:

"ऐ ईमान वालो! जब तुम आपस में एक दूसरे से वक़्त मुक़र्रर पर क़र्ज़ का मामला करो तो उसे लिख लिया करो.....।"

तंगी और मजबूरी की हालत में नबी करीम ﷺ ने क़र्ज़ लिया, जब खाने के लिए अनाज भी घर में नहीं था। सहाबी ने भी ज़रूरत के मुताबिक़ मजबूरी में क़र्ज़ लिया। (सुनन इब्ने माजा 2436, 2408)

लेकिन याद रहे कि क़र्ज़ तभी लेना चाहिए जब आदमी अपनी शरीयत के दायरे में जाइज़ ज़रूरतों को पूरा नहीं कर पा रहा हो। अपना माल बढ़ाने, अपनी तरज़े ज़िंदगी *(Life Style)* को उम्दा करने या विलासिता की ज़िंदगी बिताने जैसे कामों के लिए क़र्ज़ को सख़्त नापसंद किया गया है। अल्लाह का फ़रमान है कि:

"और अपनी निगाहें हरगिज़ उन चीज़ों की तरफ़ ना दौड़ाना जो हमने उनमें से मुख़्तलिफ़ लोगों को आरायश (Enjoyment) की ज़िंदगी दे रखी

हैं..... ।'' (सूरह ता हा 20/131)

इंसान को चाहिए कि अपनी कमाई और अपनी हैसियत के मुताबिक़ अपनी जिंदगी को चलाए। दूसरे लोगों की ख़ुशहाली और विलासिता को देखकर अपना मन ना ललचाए।

नबी ﷺ का फ़रमान है कि अम्न (शांति) के बाद अपने आप को ख़ौफ़ज़दा मत करो। सहाबा ने पूछा या रसूलुल्लाह ﷺ इसका मतलब क्या है? आप ﷺ ने फ़रमाया 'क़र्ज़'। (सिलसिला सहीहा 2420)

जब आदमी अपनी ज़रूरतों और ख़र्च को अपनी हैसियत से ज़्यादा बढ़ा लेता है और उनको पूरा करने के लिए क़र्ज़ लेता है तो वह अपना और घरवालों का सुकून और शांति को खो देता है। वह उसकी अदायगी की हैसियत नहीं रखता और ख़ौफ़ज़दा रहता है। दुनिया में बहुत सी परेशानियों में घिर जाता है और आख़िरत में भी वह जन्नत और स्वर्ग में तब तक नहीं जा सकता जब तक उसका वारिस यानी बच्चे उसके क़र्ज़ को अदा ना कर दें। (देखिए सुनन इब्ने माजा 2413)

साथ ही इस्लाम में किसी इंसान की मदद करने की बहुत तरग़ीब दी गई है यानी प्रोत्साहित किया गया है। इसका ज़िक्र सदक़ा और ग़रीब मिस्कीन के *Chapter* में किया गया है। यहां तक कि क़र्ज़ वसूल करने में नरमी बरतने पर सदक़े का सवाब मिलता है। (देखिए सुनन इब्ने माजा 2418)

फ़रमाया गया है कि एक शख़्स का हिसाब किया गया उसके पास कोई नेकी नहीं थी। सिवाय इसके कि वह अमीर था और लोगों को क़र्ज़ देता था। वह अपनी नौकरों से कहता था कि तंगदस्त ग़रीब को मोहलत दो। तो अल्लाह ने फ़रमाया कि हमें उससे ज़्यादा हक़ है माफ़ करने का। उसे माफ़ कर दो। (जामेअ़ तिर्मिज़ी 1307) यानी ग़रीब, मोहताज और ज़रूरतमंद की क़र्ज़ में मदद करनी चाहिए और उसकी वसूली में भी नरमी और मोहलत दें। यही एक अच्छे और हमदर्द समाज का तक़ाज़ा है।

आज का समाज क़र्ज़ में डूबता जा रहा है। लोग अपनी आने वाले कई साल की आमदनी से ज़्यादा क़र्ज़ के बोझ में दबते जा रहे हैं। उनकी सोच बनती जा रही है कि क़र्ज़ लो और विलासिता की ज़िंदगी बिताओ, कल किसने

देखा, कौन इसे अदा करेगा। इसके बुरे नतीजे उसको ख़ुद, उसके घर वालों, समाज और मुल्क को भुगतने पड़ रहे हैं। जैसे कि:

- क़र्ज़ आदमी की कमाई और उसकी हैसियत से ज़्यादा ख़र्च कराता है।
- क़र्ज़ पर ख़रीदारी चीज़ की क़ीमत से ज़्यादा ख़र्च कराती है।
- क़र्ज़ मुस्तक़बिल की कमाई *(Future Income)* को ख़र्च कराता है।
- यह ग़ुस्सा, तनाव, *Depression* और मायूसी जैसी बीमारी पैदा करता है।
- बहुत से लोग क़र्ज़ के बोझ से परेशान होकर ख़ुदकशी *(Suicide)* तक कर लेते हैं।
- इससे मुल्क की इकोनोमी पर बुरा असर पड़ता है।
- क़र्ज़ का नहीं चुकाना या माफ़ कर देना मुल्क को भारी नुक़सान पहुंचाता है। इससे मुल्क की तरक़्क़ी की रफ़्तार में कमी आ जाती है और मुल्क ठीक से तरक़्क़ी नहीं कर पाता। जिसका नुक़सान हर आदमी और समाज को भुगतना पड़ता है।
- क़र्ज़ के बोझ तले दबने से पैदा हुई बेचैनी और तनाव में आदमी समाज में अपराध तक करने लग जाता है।

परदा और शालीनता

अल्लाह ने हर चीज़ को जोड़ों *(Pairs)* में बनाया और हर जानदार के जोड़ों में आपसी लगाव पैदा किया जिससे वह एक दूसरे की तरफ़ माइल *(Attract)* होते हैं। अगर यह लगाव और एक दूसरे के करीब आना रब की मुक़र्रर की गई हदूद के दायरे में है तो इसे हर दीन और धर्म में कबूल किया गया। यानी अगर एक मर्द किसी औरत के साथ निकाह या शादी के दायरे में मान्य तरीक़े से करीबी इख़्तियार करता है तो यह एक जाइज़ और पवित्र तरीक़ा होता है। और अगर कोई मर्द किसी ग़ैर औरत या फिर कोई औरत किसी ग़ैर मर्द, जो आपस में शादी के बंधन से ना जुड़े हों, से ताल्लुक़ क़ायम

करता है तो यह धर्म के अनुसार क़ुबूल नहीं और यह बड़ा गुनाह है जिसे समाज पाप समझते हुए नफ़रत की नज़र से देखता है। दुनिया के तमाम धर्मों में शादी को पवित्र बंधन माना गया है। इसके अलावा सब तरीक़े पाप समझे गए हैं। भले ही कोई समाज, कोई देश या किसी देश की सरकार इसे किसी भी शक्ल में क़ुबूलियत का दर्जा देता हो।

इस्लाम मर्द और औरत दोनों को हया और शालीनता के लिबास की नसीहत करता है। यह औरत पर होने वाले जिंसी हमलों *(Sexual Assault)* से बचने में मदद करता है। इस बारे में क़ुरआन और हदीस़ दोनों में अहकाम *(Rule)* बयान हुए हैं। क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

''ऐ नबी अपनी बीवियों से और अपनी साहबज़ादियों से और मुसलमानों की औरतों से कह दो अपने ऊपर अपनी चादरें लटकाया करें....।'' (सूरह अहज़ाब 33/59)

औरतों को चाहिए कि सादा और शालीनता का लिबास इख़्तियार करें। अपनी ख़ूबसूरती, ज़ेवर और आभूषण ज़ाहिर ना करें। अपने ऊपर चादर डालकर रखें जो सिर और जिस्म के दूसरे हिस्सों के साथ उसकी ज़ीनत और ज़ेवर आदि को नुमायां होने से बचाए ताकि देखने वाले के दिल में कोई कशिश और लगाव पैदा ना हो और किसी भी तरह के बुरे ख़्यालात और हरकतों से बचा जा सके। इसके साथ ही मर्द और औरत दोनों को ही अपनी ख़्वाहिशे नफ़्सानी *(Desire)* पर क़ाबू रखने, अपनी इज़्ज़त और आबरू की हिफ़ाज़त करने की तलक़ीन और नसीहत *(Preaching)* की गई है। क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

''मुसलमान मर्दों से कहो कि अपनी निगाहें नीची रखें और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त रखें..........मुसलमान औरतों से कहो कि वो भी अपनी निगाहें नीची रखें और अपनी इसमत (Modesty) में फ़र्क़ ना आने दें और अपनी ज़ीनत को ज़ाहिर ना करें सिवाय उसके जो ज़ाहिर है। और अपने गिरेबानों (Bosoms) पर अपनी ओढ़नियां (Veils) डाले रहें....।'' (सूरह नूर 24/30,31)

शर्मो हया, लाज लज्जा और परदा का हुक्म दुनिया के तमाम धर्मों में दिया

गया है और इक्कीसवीं सदी के मध्य तक करीब–करीब दुनिया के सभी मुल्कों में इस पर अमल होता था। औरतें अपना सिर और जिस्म ढक कर रखती थीं और इसकी नुमाइश को बुरा जाना जाता था। यहूद और ईसाई धर्म में स्काफ़् *(Head Scarf)* पहनने का हुक्म है। पीटर का कहना है कि ''तुम्हारी ख़ूबसूरती दिखावट की ज़ीनत ना हो''। मेथ्यू का कहना है कि ''ज़िना *(Adultry)* ना करो, लेकिन मैं तुमसे कहता हूं कि जो कोई औरत को शहवत *(Lustfully)* की नज़र से देखता है वह अपने दिल में उससे ज़ना कर चुका है''।

हिन्दू, सिख, जैन और दूसरे धर्मों में घूंघट का रिवाज आम था। जिसमें सिर के साथ साथ चेहरा भी ढका रहता था। कहा जाता है कि राम चन्द्र ने सीता को अपनी औढ़नी *(Veil)* हटाने के लिए कहा ताकि लोग वनवास जाने से पहले इन्हें देख लें। इससे मालूम चलता है कि सीता परदा का पालन करती थी।

मुल्क की कई हिन्दू धार्मिक संस्थाओं और कालेजों ने जींस और टी शर्ट जैसे लिबास को पहनने और उसके साथ कालेजों में आने या गांव बस्ती में निकलने से मनाही के फ़ैसले लिए हैं। अगर कोई औरत शर्मगाह *(Private Parts)* को ढकती हो मगर ऊपर से नंगी *(Topless)* बाज़ार में घूमती हो, तो क्या यह सभ्यता होगी? या कोई औरत तैराकी की पोशाक *(Swim suit)* में दफ़्तर आए तो इसको क़ुबूल किया जाएगा? सभी मुल्कों में ऐसा करने से मना किया गया है। ऐसे कर्म और अमल को नागरिक के मौलिक अधिकार के नाम पर कोई धर्म या सभ्य समाज क़ुबूल नहीं करेगा।

दीन और धर्म इंसान को सभ्यता से रहना सिखाता है जिससे समाज में बुराइयों को फैलने से रोका जाए। यह कलयुग का दौर है जिसमें क़यामत की निशानियां ज़ाहिर हो रही हैं। लोग अपने धर्म से दूर भाग रहे हैं। समाज तेज़ी से बदल रहा है और बुराई को बुराई ही नहीं मानता। लेकिन धर्म बदलता नहीं उसके अहकाम और क़ानून की हदें मुक़र्रर हैं वह बदली नहीं जा सकतीं। इसलिए किसी इंसान को अपने या दूसरे धर्मों के सभ्य रीति रिवाज और धर्मिक क़ानूनों को बदलने का अधिकार देना मुनासिब नहीं। जिस समाज ने

भी अपने धार्मिक मूल्यों को छोड़ा उसके लोग इसके बुरे नतीजों को भुगत रहे हैं। जैसे यूरोप में *60%* औरतें जिंसी हमलों *(Sexual Assault)* की शिकार होती हैं अमेरिका में 12 साल की लड़की *Dating* करना शुरू कर देती है जिससे वहां *Rape 24%* तक होते हैं। यूरोप के देशों में *42%* औलाद शादी के बाहर *(Illegitimate)* पैदा हाती है।

ज़रा सोचिए क्या आप ख़ुद अपनी मां, बीवी, बहन या बेटी के साथ ऐसा क़ुबूल करेंगे? हरगिज़ नहीं! तो फिर क्यों लोग दूसरों को असभ्यता और नग्नता के अंधेरे में ढकेलने की कोशिश करते हैं? इस्लाम ही नहीं बल्कि सभी धर्मो में शर्मो हया, लाज लज्जा और शालीनता का पैग़ाम दिया गया है। इस्लाम तो गुनाह को सिरे से ही मिटाता है। वह ऐसे किसी भी अमल और कर्म से सख़्ती से मना करता है जो किसी गुनाह की जननी बनने का कारण बने।

इसलिए कहा गया है कि हया यानी लज्जा ईमान का हिस्सा है। (सहीह बुख़ारी) यह इंसान की ज़ीनत *(Beauty)* को बढ़ाती है। (जामेअ़ तिर्मिज़ी 1973) और कहा गया है कि जिसमें हया नहीं रही वह जो चाहे करे। (सहीह बुख़ारी) यानी जिसमें लज्जा और शर्म नहीं वह गुनाह को बुरा नहीं समझेगा और किसी भी गुनाह को करने से उसका ज़मीर *(Conscious)* उसे नहीं रोकेगा।

इसलिए इस्लाम में शालीनता के लिबास को पसंद किया गया है और नग्नता को किसी भी शक्ल में मना किया गया है। जैसे कि आप ﷺ ने फ़रमाया:

''दो क़िस्म हैं जहन्नमियों की जिनको मैंने नहीं देखा एक तो..... दूसरे वो औरतें जो पहनती हैं मगर नंगी हैं। बहकाने वाली और ख़ुद बहकने वाली। उनके सिर बुख़्ती ऊंट के कोहान की तरह एक तरफ़ झुके हुए। वह जन्नत में नहीं जाएंगी बल्कि उसकी ख़ुश्बू भी उनको नहीं मिलेगी, जबकि जन्नत की ख़ुश्बू इतनी दूर से आती है। (सहीह मुस्लिम, लिबास)

फ़रमाया जा रहा है कि दो तरह के जहन्नमियों को नहीं देखा यानी उस दौर में ऐसा नहीं होता था। ऐसी औरतें लिबास पहनकर भी नंगी बताई गई हैं। यह या तो अपने बदन के हिस्सों को खुला रखती हैं या बारीक लिबास पहनती हैं

जिनसे बदन की ख़ूबसूरती दिखाई दे या लिबास इतने चुस्त कि बदन के हिस्से और उसकी सलवटें तक ज़ाहिर हों। फिर चाल और बातचीत ऐसी कि पोशाक के साथ साथ वह भी जवान मर्द को अपनी तरफ़ खींचती हो। उसके अंदर कशिश और लगाव पैदा होता हो। बालों का मेकअप वग़ैरह भी नुमायश करता हो। इससे समाज में एक बड़ी बुराई के पैदा होने में मदद मिलती है। इसलिए इसको जहन्नमी लोगों का काम बताया गया है ताकि लोग ऐसे काम को पाप समझकर ना करें और अपने समाज को पाक साफ़ रखने में मददगार साबित हों।

इसी तरह इस्लाम में औरत को ख़ुश्बू के साथ बाहर निकलने से मना किया। फ़रमाया गया है कि कोई मर्द किसी औरत के साथ अकेला नही होता बल्कि उनके साथ शैतान होता है। (जामेअ़ तिर्मिज़ी 2165) इस तरह इस्लाम की बहुत सी तालीमात और अहकामात *(Rulings)* शर्मो हया, लाज लज्जा, परदा और शालीनता का हुक्म देती हैं जो एक सभ्य समाज को बनाने में फ़ायदेमंद हैं।

ज़िना

ज़िना *(Fornication, Illegal Sex)* क्या होता है? दीन और धर्मो में इसे कैसे बयान किया गया है? पहले तो यह जान लिया जाए कि हर एक धर्म में सिर्फ़ वही शारीरिक सम्बंध *(Sexual Relation)* पवित्र, पाक, मान्य और क़ुबूल किया जाता है जो उस मर्द और औरत के बीच धार्मिक अहकाम, क़ानून और रीति के मुताबिक़ शादी के रिश्ते से एक साथ शौहर और बीवी बनकर किया जाता है। ऐसा हर एक अमल, कर्म और *Sexual Act* जो शादी के रिश्ते के बाहर किसी मर्द और औरत के बीच क़ायम हो, वह हर एक धर्म में घृणित, नापाक और अमान्य माना गया है और इसे कोई धार्मिक व सभ्य समाज क़ुबूल नहीं करता। इस्लाम में इसे बड़ा गुनाह माना गया है और इसके साथ साथ उन सभी बातों और अमल (कर्म, *Deeds)* से भी मना कर दिया गया जो किसी इंसान को इसकी तरफ़ धकेलने में मददगार साबित हो। क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

"ख़बरदार! ज़िना के क़रीब भी ना फटकना क्योंकि वह बड़ी बेहयाई (Shameful) है और बहुत ही बुरी राह है।" (सूरह इसरा 17/32)

नबी ﷺ ने फ़रमाया कि अल्लाह से बढ़कर किसी को ग़ैरत (शर्म *Shame*) नहीं है और यही वजह है कि उसने बेहयाई के कामों को हराम कर दिया। (सहीह बुख़ारी, निकाह) इसी किताब में दूसरी जगह कहा गया है कि अल्लाह को ग़ैरत इस पर आती है कि मोमिन हराम काम करे। अल्लाह ने अपने नेक फ़रमांबरदार *(Obedient)* बंदों की सिफ़ात *(Virtues)* का बयान करते हुए फ़रमाया है कि मोमिन और जन्नती लोग वो हैं जो अपनी शर्मगाह *(Sexual Parts)* की हिफ़ाज़त करते हैं और ज़िना के क़रीब भी नहीं जाते। (देखिए सूरह 25/68, 33/35, 23/5)

और नबी ﷺ ने फ़रमाया कि जो शख़्स मुझे ज़मानत दे उस चीज़ की जो उसके दोनो जबड़ो के बीच है (ज़बान) और जो उसके दानो पांवों के बीच है *(Sexual Parts)* तो मैं उसके लिए जन्नत की ज़मानत *(Guarantee)* देता हूं। (सहीह बुख़ारी, किताब रिक़ाक़) यानी वो अपनी ज़बान से अश्लील बात ना करे और शर्मगाह की हिफ़ाज़त करे इसे अपनी बीवी के सिवाय दूसरी जगह इस्तेमाल ना करे तो ऐसे शख़्स के लिए जन्नत की ख़ुशख़बरी दे दी गई।

इसके साथ ही फ़रमा दिया गया कि जो भी शख़्स अल्लाह की हदों को पार करेगा तो वह मोमिन ही नही हो सकता उसकी दुनिया और आख़िरत की ज़िंदगी नुक़सान उठाने वालों में होगी।

नबी करीम ﷺ ने फ़रमाया कि आंखों का ज़िना देखना है, ज़बान का ज़िना बोलना है, हाथ का ज़िना पकड़ना है, पांव का ज़िना चलना है, मुंह का ज़िना चुम्बन लेना है और कानों का ज़िना सुनना है। (सुनन अबी दाऊद किताब निकाह 2152-2154) और फ़रमाया गया है कि ज़िना करने वाला जब ज़िना करता है उस वक़्त वो मोमिन नहीं होता। (सहीह बुख़ारी, हदूद)

ऐसा कबीरा (बड़ा) गुनाह और घृणित काम करने वाला मोमिन नहीं हो सकता। ना ही कोई सभ्य आदमी ऐसा ख़्याल अपने दिल में ला सकता है क्योंकि हर कोई यही चाहेगा कि ऐसा बुरा काम कोई मेरी मां, बीवी, बहन, लड़की या फूफी, ख़ाला के साथ ना करे।

इस्लाम इसे बहुत बड़ा गुनाह समझता है और अगर वह शादी शुदा है तो ऐसे पापी को जिंदा ही रहने का हक़ नहीं देता। उसको लोगों के सामने सरे आम सज़ा दी जाती है। ताकि समाज के लोग इससे नसीहत और इबरत *(Warning of Punishment)* हासिल करें।

ज़िना और इसकी तरफ़ मायल करने वाले आमाल (कर्म) के बारे में मुख़्ततसर तौर पर *(Brief)* इस्लाम के अहकाम *(Ruling)* यहां बयान किए गए। इस्लाम ऐसे नापाक और अश्लील कामों को सख़्ती से मना करता है और एक पाक व साफ़ सुथरा समाज चाहता है जहां हर औरत की इज़्ज़त और आबरू की हिफ़ाज़त हो और उस पर किसी तरह का जिंसी हमला *(Sexual Assault)* ना हो।

शराब और जुआ

इस्लाम एक ऐसा दीन है जिसमें अल्लाह ने क़ुरआन में ही शराब और जुए को हराम कर दिया। और इसके साथ नबी ﷺ ने इनकी हुरमत और मनाही की ख़ूब वज़ाहत *(Clarificattion)* फ़रमा दी। क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि:

''ऐ ईमान वालो! बात यही है कि शराब और जुआ और थान और फ़ाल निकालने के पांसे के तीर। ये सब गंदी बातें और शैतानी काम हैं। इनसे बिल्कुल अलग रहो ताकि तुम फ़लाह (कामयाबी) पा सको। शैतान तो यूं चाहता है कि शराब और जुआ के ज़रिए से तुम्हारे आपस में अ़दावत (दुश्मनी) और बुग्ज़ (Hatred) पैदा करा दे...।'' (सूरह मायदा 5/90-91)

यहां शराब, जुआ और किसी काम के बारे में शगुन लेने को गंदी बातें और शैतानी काम बता कर इनसे दूर रहने का हुक्म दिया जा रहा है। मक्का के लोग किसी काम के करने या ना करने के बारे में तीर निकाल कर पता लगाते कि इसका करना अच्छा है या बुरा। इन सब बातों से मना कर दिया गया। दुसरी जगह क़ुरआन में फ़रमाया गया है कि शराब और जुआ से कुछ फ़ायदा हो सकता है लेकिन उसके मुक़ाबले इनका नुक़सान बहुत ज़्यादा है और यह

सब बड़े गुनाह हैं। इनसे थोड़े समय के लिए, या कभी जीत हासिल करके या दूसरी सूरतों में थोड़े समय के लिए थोड़ा फ़ायदा नज़र आ सकता है लेकिन इनके दूरगामी परिणाम बड़े ख़तरनाक होते हैं जो परिवार, समाज और क़ौम को ही बरबाद और तबाह कर देते हैं।

इस्लाम किसी गुनाह को रोकने के लिए उसकी वो तमाम राहें और दरवाज़े बंद करता है जहां से उसके होने की ज़रा भी उम्मीद हो। शराब को हराम ही नहीं बल्कि इसको और इसके बनाने वाले, बनवाने वाले, बेचने वाला, ख़रीदने वाला, लेजाने वाला, जिसके लिए ले जा रहा, आमदनी खाने वाला, पीने वाला और पिलाने वाले सब को हराम क़रार दे दिया गया है। और ऐसे शख़्स पर लानत *(Curse)* भेजी गई है। अब आप सोचिए कि जिसपर अल्लाह और उसके नबी ﷺ ने लानत भेजी हो उसकी दुनिया और आख़िरत क्या बरबाद नहीं होगई? वह दोनों जगह भारी नुक़सान उठाने वालों में होगा। (सुनन इब्ने माजा 3380)

इसके अलावा शराब ही नहीं बल्कि हर नशे वाली चीज़ को जो नशा लाए हराम कर दिया गया। (सुनन इब्ने माजा 3386) चाहे वह भांग हो, गांजा हो, सुल्फ़ा हो, चरस हो, स्मैक हो या कोई केमिकल पीकर नशा लाया जाए या कोई केमिकल सूंघकर नशा लाया जाए या और दूसरी अपनाई गई चीज़ों से नशा लाना, यह सब मना कर दिए गए। क्योंकि पहली बात तो यह है कि नशा अक़्ल को ख़राब कर देता है।

नबी ﷺ ने फ़रमाया कि ऐ लोगो! शराब हराम हो गया। और यह भी फ़रमाया गया है कि हर वो चीज़ (नशा) जो अक़्ल में फ़ितूर (बिगाड़) लाए वह शराब है (यानी हराम है) (सहीह बुख़ारी, तफ़्सीर सूरह मायदा) और फ़रमाया गया है कि शराबी जब शराब पीता है तो वह मोमिन नहीं होता। (सुनन इब्ने माजा 3936) यानी जब शराबी शराब पीता है तो वह मुसलमान ही कहलाने का हक़दार नहीं क्योंकि उसने अल्लाह और उसके नबी ﷺ के फ़रमान और आदेश के ख़िलाफ़ काम किया है। यह सब उसके गुनाह, बुराइयों और पाप के कामों में लिखा जाएगा और आख़िरत (परलोक) में जहन्नम के अज़ाब की तरफ़ ले जाएगा। जब नबी ﷺ ने शराब के हराम होने के हुक्म को

अपने साथियों को बताया तो उन्होंने जो भी शराब मटकों में भरी रखी थी उसे पूरी तरह फ़ौरन बहा दिया गया। चाहे वो पीने के लिए रखी थी या बेचकर फ़ायदा उठाने के लिए। (देखिए सुनन निसाइ 5546)

शराब को बेहयाई *(Lewdness)* की जड़ बताया गया है। (मुसनद अहमद 22425) और दूसरी जगह हर शर यानी बुराई और गुनाह की कुंजी फ़रमाया गया है। (सुनन इब्ने माजा 3371) शराब चोरी और ज़िना से भी बड़ी बुराई है। नीचे बयान किए गए किस्से पर ग़ौर कीजिए।

मुख़्तसर तौर पर *(Inbrief)* एक शख़्स को एक ख़ूबसूरत औरत ने बुलाया और घर के सब दरवाज़े बंद कर दिए। उसके पास एक लड़का और एक बर्तन शराब का था। उसने कहा कि मुझसे सोहबत *(Sex)* कर या शराब पी या इस लड़के को क़त्ल कर। उस आदमी ने कहा मुझे शराब पिला दे। जब ख़ूब पी चुका तो वहां से नहीं हटा जब तक कि उस औरत से ज़िना किया और उस लड़के को मार दिया। (देखिए सुनन निसाई 5672)

शराब पीने वाला अपनी सेहत को ख़राब करता है। अपने माल को बरबाद करता है। अपने परिवार वालों पर ज़ुल्म और मारपीट करता है। समाज में बुराई फ़ैलाता है और झगड़ा फ़साद बरपा करके समाज में बिगाड़ पैदा करता है। ना जाने इस शराब ने कितने घर बरबाद किए और ना जाने कितनी मासूम और बेकसूर बहनों के सुहाग लूट लिए।

ऐसा ही जुए और इसकी अलग अलग शक्लों में लाए गए तरीक़ो के बारे में फ़रमान है कि यह सब इस्लाम में हराम हैं और गुनाहों में शमिल हैं। चाहे वह जुआ हो, लॉटरी हो, सट्टा बाज़ी हो, चौरस हो या ऐसे ही दूसरे तरीक़े जिनमें फ़ायदा उठाने का मौक़ा *(Chance)* लिया जाता हो।

इस्लाम ऐसा हर लेनदेन जिसमें आदमी जीत जाए या हारे और उसे यह मालूम ना हो कि वह जीतेगा या हारेगा यह सब हराम हैं और गुनाह का काम है जिससे बचना चाहिए।

जुए और शराब के बुरे नतीजे उस शख़्स, उसके परिवार और समाज को भुगतने पड़ते हैं जैसे कि:

* जुआ इंसान को मेहनत करने से ज़्यादा तक़दीर पर भरोसा कराता है।

- जुआ समय को बर्बाद करता है और इंसान को आलसी बनाता है।
- यह इंसान को शराब और नशीली दवाओं का आदी बनाता है।
- यह आपस में नफ़रत और दुश्मनी पैदा करता है।
- शराब और जुआ ख़ानदानों को तबाह करता है। माल बरबाद करता है।
- शराब और जुआ नफ़्सयाती *(Psychological)* और जिस्म की बीमारियां, तनाव जैसी दूसरी बीमारियां पैदा करता है।
- शराब और जुआ समाज में जरायम व अपराध, झगड़ा फ़साद और बिगाड़ पैदा करते हैं।
- यह इंसान को ख़ुदकुशी *(Suicide)* पर उभारता है।

इस्लाम एक साफ़ सुथरा ऐसा समाज चाहता है जो गुनाहों और बुराइयों से पाक साफ़ हो। हर इंसान सेहतमंद हो। परिवार, ख़ानदान, क़ौम और समाज में आपसी मुहब्बत और अमन चैन हो और हर शख़्स का मान सम्मान, इज़्ज़त और आबरू महफ़ूज़ हो। इसलिए शराब और जुआ जैसी गुनाहों की जननी बुरी चीज़ों को हराम और मना कर दिया गया। यही वजह है कि सहाबी रज़ि. जब किसी को चौसर खेलते देखते तो उसे मारते और चौसर को तोड़ देते। आ़ईशा रज़ि. ने अपने किरायेदार को बाहर निकलने का हुक्म दिया अगर वह चौसर खेलना बंद नहीं करता। इसी तरह शतरंज खेलने वाले को भी बुरा कहा गया। (सहीह बुख़ारी, अदब अल मुफ़रद 1273-77)

रहम *(Mercy)*

इस्लाम रहम, दयालुता, करूणा, हमदर्दी और इंसाफ़ का दीन है। जो अच्छे आदाब व संसकार सिखाता है और बुराई से मना करता है। एक ऐसा दीन जो इंसान को उसका वक़ार *(Dignity)* और इज़्ज़त अता करता है। इंसानियत के बारे में इस्लाम रहम और हमदर्दी से लबरेज़ और भरा है।

अल्लाह तआ़लाने कामयाब और जन्नत हासिल करने वाले अपने नेक और फ़रमांबरदार बंदों की सिफ़ात और गुण बयान करते हुए फ़रमाया है कि:

''और एक दूसरे को सब्र की और रहम करने की वसीयत करते हैं।''

(सूरह बलद 90/17)

मुसलमान ख़ुद ही नहीं बल्कि दूसरे लोगों को भी एक दूसरे पर रहम करने की तलक़ीन *(Preaching)* करते हैं। इस्लाम में रहम के बारे में बड़ी फ़ज़ीलत (गुण) बयान की गई है।

रसूल ﷺ ने फ़रमाया कि "ज़मीन वालों पर रहम करो, तुम पर आसमान वाला (अल्लाह) रहम करेगा।" (जामेअ़ तिर्मिज़ी 1924) और फ़रमाया गया है कि "हर तर जिगर वाले में अजर है।" (सहीह मुस्लिम, सिलसिला सहीहा 2152) यानी हर जानदार की ख़िदमत, देखभाल और रहम करने में सवाब और पुन्य है। जैसे कि फ़रमाया गया है कि "एक औरत ने कुत्ते को देखा कि गर्मी के दिनों में कुएं के पास फिर रहा था और अपनी ज़बान बाहर निकाल दी थी। उस औरत ने अपने मौज़े से पानी निकाला और उस कुत्ते को पिलाया। अल्लाह तआ़लाने उसे बख़्श दिया।" (सहीह मुस्लिम)

वह औरत हरामकार और पापी थी। मगर अल्लाह ने उसके कुत्ते पर किए गए रहम और मदद की वजह से उसके गुनाह माफ़ कर दिए और उसे बख़्श दिया गया यानी जन्नत और स्वर्ग अता कर दिया गया। क्योंकि अल्लाह को उसका यह काम पसंद आया कि उसने एक जानदार पर रहम किया।

इसके ख़िलाफ़ अगर कोई इंसान किसी भी जानदार पर रहम नहीं करेगा और उसे तक्लीफ़ देकर सताएगा तो अल्लाह उससे सख़्त नाराज़ होता है और ऐसा इंसान बरबाद हो जाता है। यहां तक कि उसे जहन्नम में भी डाल दिया जा सकता है जैसा कि फ़रमाया है कि "ऐसा बंदा नाकाम व नामुराद हुआ जिसके दिल में अल्लाह तआ़लाने इंसानियत के लिए रहम या नरमी नहीं रखी।" (सिलसिला सहीहा 456) यानी ऐसा शख़्स ख़सारा और नुक़सान उठाने वाला होता है। ऐसा नुक़सान जो उसे दुनिया में तरह-तरह की मुसीबतों की शक्ल में झेलनी पड़ती हैं और आख़िरत में जहन्नम यानी नरक का दर्दनाक अज़ाब सहना पड़ता है। जैसे कि फ़रमाया गया है कि "एक औरत को अज़ाब हुआ एक बिल्ली की वजह से, जिसको उसने खाना दिया ना पानी और ना उसको छोड़ा कि वो ज़मीन के जानवर खाती।" (सहीह मुस्लिम)

इस्लाम में इंसान या जानवर के मुंह पर मारने या तक्लीफ़ देने से मना

फ़रमाया गया है। (सहीह मुस्लिम, सहीह बुख़ारी किताब ज़िबह) बच्चे को उसकी मां से जुदा करने से मना कर दिया गया (सुनन अबी दाऊद, जिहाद) जानवर को ठीक से खाना देना और उससे सख़्त काम ना लेने का हुक्म दिया। (मुसनद अहमद 1745) नबी ﷺ ने फ़रमाया कि परिंदों को उनके घोसलों में रहने दो (मुसनद अहमद 27680) और परिंदों को ख़ौफ़ज़दा करने से मना फ़रमा दिया गया। (मुसनद अहमद 20879) नबी ﷺ ने फ़रमाया कि किसी को यह लायक़ नहीं कि वो किसी को आग का अज़ाब दे। यह इख़्तियार तो सिर्फ़ आग के रब को हासिल है। (सुनन अबी दाऊद, किताब अदब 5268)

इस्लाम में किसी इंसान या जानवर या किसी भी जानदार के जिस्म के किसी हिस्से को काटने या नुक़सान *(Mutilation)* पहुंचाने से सख़्ती से मना कर दिया गया है चाहे वह जंग में दुश्मन की तरह तुम्हारी जान का ख़तरा ही क्यों ना हो। (जामेअ़ तिर्मिज़ी 1408) ऐसे शख़्स के बारे में फ़रमाया गया है कि उसे आख़िरत में सख़्त अज़ाब दिया जाएगा। (मुसनद अहमद 3868)

इस्लाम सलामती, अमन, रहम और हमदर्दी की तरग़ीब और तालीम देता है। चाहे इंसानों के दरमियान हो या जानवर और परिंदों के। सब के साथ रहम दिली का मामला रखने का बड़ा अजर और सवाब का वादा किया गया है। फ़रमाया गया है कि सलाम को फैलाओ जिससे तुम एक दूसरे से मुहब्बत करोगे और आपस में हमदर्दी और करूणा पैदा होगी। नबी ﷺ का फ़रमान है कि ''जो रहम नहीं करता उस पर रहम नहीं किया जाता।'' (जामेअ़ तिर्मिज़ी 1911) यानी ऐसे इंसान पर अल्लाह भी रहम नहीं करता जो दूसरों पर रहम नहीं करता और तकलीफ़ पहुंचाता है।

वातावरण *(Environment)*

अल्लाह तआ़लाने आसमानों और ज़मीनों को पैदा किया और बहुत बेहतरीन अंदाज़ से पैदा किया। उसने ज़मीन, समन्दर और आसमानों में बसने वाले जानदारों के लिए बेशुमार मुफ़ीद नेमतें पैदा कीं। अल्लाह ने ज़मीन को सूरज से एक महफ़ूज़ फ़ासले पर रखा और ज़मीन को हिफ़ाज़ती परतों से घेर कर हर तरह के नुक़सान और बुराइयों से महफ़ूज़ कर दिया। उसने हमारी ज़मीन और दुनिया को पेड़ पौधों *(Greenery)*, हवा, पानी और मिट्टी जैसी

नेमतों से भर दिया ताकि जानदार इसमें बस सकें। यह हमारे लिए हमारे रब की तरफ़ से एक बेहतरीन नेमत और आशीर्वाद है। जैसा कि अल्लाह ने अपनी कुछ नेमतों का ज़िक्र सूरह अनआम की आयत 99 में किया है।

''और वो ऐसा है जिसने आसमान से पानी बरसाया। फिर हमने उसके ज़रिए से हर क़िस्म की नबातात (हरियाली) को निकाला....।'' (6/99) और फ़रमाया गया है कि:

''अल्लाह तआ़लावो है जिसने तुम्हें पैदा किया फिर रोज़ी (Sustenance) दी....।'' (सूरह रूम 30/40) यानी उसी ने हर जानदार और बेजान तमाम चीज़ों को पैदा किया। हर जानदार की जिंदगी के लिए ज़रूरी हर चीज़ को पैदा कर दिया और उन तक पहुंचा दिया ताकि हर जानदार अपना गुज़र बसर कर सके। इनके साथ दूसरी बेशुमार चीज़ों (जिनको इंसान सोच भी नहीं सकता) के ख़ज़ाने अल्लाह के पास हैं और वह ज़रूरत के मुताबिक़ इनको एक मुक़र्रर अंदाज़ *(Fixed Quantity)* से उतारता है। *''और जितनी भी चीज़ें हैं उन सबके ख़ज़ाने हमारे पास हैं। और हम हर चीज़ को मुक़र्रर अंदाज़ से उतारते हैं।''* (सूरह हिज्र 15/21)

इनसे आप को अंदाज़ा हो गया होगा कि इंसान ही नहीं बल्कि हर जानदार के लिए ज़रूरी हर चीज़, उसका *Environment* और *Ecosystem* जैसी तमाम चीज़ों को अल्लाह ने पैदा किया। उनको एक मुक़र्रर अंदाज़ में पैदा किया यानी तमाम संसाधन *(Resources)* एक *Fixed Quanttity* और एक संतुलन *(Balance)* के तहत पैदा किए गए हैं। इसके साथ एक एहसान अल्लाह का ये भी है कि उसने इन संसाधनों, *Environment* और *Ecosystem* वग़ैरह की हिफ़ाजत के लिए ज़मीन को हिफ़ाज़ती परतों से ढक दिया। और ऐसा मज़बूत हिफ़ाज़ती निज़ाम बनाया जिसमें तनिकभर भी दरार, सूरहख़, *Fault* या *Split* तक नहीं है। ज़मीन और इसकी हर चीज़ को हर तरह की बुराई, नुक़सान और *Harmful Effects* से बचा दिया। मिसाल के तौर पर आप ओज़ोन की पर्त को ही ले लीजिए जिससे ज़मीन को नुक़सानदेह किरणों से बचा दिया। फ़रमाया गया है कि:

''और उसे हर मरदूद शैतान से महफ़ूज़ रखा है।'' (सूरह हिज्र 15/17)

और दूसरी जगह फ़रमाया गया है कि *"आसमान को महफ़ूज़ छत भी हमने ही बनाया है...।"* (सूरह अम्बिया 21/32) और फ़रमाया गया है कि *"क्या उन्होंने आसमान को अपने ऊपर नहीं देखा? कि हमने उसे किस तरह बनाया है और ज़ीनत दी है। उसमें कोई शगाफ़ (Rift) नहीं।"* (सूरह काफ़ 50/6)

अल्लाह ने इंसान को अफ़ज़ल मख़लूक़ *(Creation)* बनाया और उसे इस ज़मीन का ख़लीफ़ा *(Voiceroy)* बना दिया। (देखिए सूरह अनआम 6/165)

हर इंसान इन नेमतों का मुहाफ़िज़ *(Protector)* है। उसकी ज़िम्मेदारी और अनिवार्य है कि वो इनका इहतराम *(Care)* करे। क्योंकि हर जानदार और उनकी आने वाली पीढियों और नस्लों का इन नेमतों, संसाधनों और *Environments)* पर पूरा पूरा हक़ है। इसलिए इंसान को हुक्म दिया गया है कि इस ज़मीन पर बिगाड़ ना पैदा करे, इसके निज़ाम को ना बिगाड़े और इस पर एक उचित, महफ़ूज़ और मुफ़ीद *(Beneficial)* संतुलन *(Balance)* बनाए रखे। (देखिए 2/60, 55/8 वग़ैरह)

इंसान इस *Environment* का हक़ तभी अदा कर सकता है जब तक हर इंसान इसको नुक़सान ना पहुंचाए, और इसकी हिफ़ाज़त करे *(Conservation of Resources)*। इस्लाम ने हमें सिखाया है कि यह *Resources* महदूद *(Limited)* हैं। बेशक इंसान को हक़ है कि इनसे फ़ायदा उठाए मगर सूझबूझ के साथ। अपनी मुनासिब ज़रूरत पूरा करने के लिए और फ़ुज़ूल ख़र्ची *(Wasteful)* से बचते हुए। अल्लाह का फ़रमान है कि *"ख़ूब खाओ और पियो और हद से मत निकलो। बेशक अल्लाह हद से निकलने वालों को पसंद नहीं करता।"* (सूरह आराफ़ 7/31) यहां फ़ुज़ूल ख़र्ची से मना करने के साथ ही अपनी नाराज़गी भी फ़रमा दी गई है।

रसूलुल्लाह ﷺ ने पानी के इस्तेमाल में फ़ुज़ूल ख़र्ची से मना किया। फ़रमाया गया है कि "चाहे तुम नहर के किनारे हो तब भी।" (देखिए सुनन इब्ने माजा 425)

इस्लाम के शुरूआती दौर में चीज़ें महदूद *(Limited)* थीं। उस वक़्त भी पानी, घास *(Greenery)* आग और नमक जैसी चीज़ों पर सबका हक़ क़रार

दिया गया। (देखिए सुनन इब्ने माजा 2472-75) ताकि उन नेमतों का फ़ायदा हर आदमी उठा सके। नबी ﷺ ने फ़रमाया ''जो शख़्स बेर का दरख़्त काटे अल्लाह उसका सिर दोज़ख़ *(Hell)* में उल्टा डालेगा।'' (मिश्कात 2970) रेगिस्तान के इलाक़े में पेड़ कम होते हैं और ज़्यादातर बेर की तरह पेड़ होते हैं। इनको काटने से मना कर दिया गया ताकि इंसान, मुसाफ़िर और परिंदे वग़ैरह फ़ायदा उठाते रहें।

अगर कोई शख़्स कोई दरख़्त लगाए (बिना किसी को नुक़सान पहुंचाए) तो उसे सदक़ा जारिया *(Ongoing Charitty)* का सवाब मिलता है। (मुसनद अहमद 15701) यहां पेड़ लगाने की तरग़ीब दी गई है और प्रोत्साहित किया गया है। नबी ﷺ ने फ़रमाया कि ''अगर तुम में से किसी पर क़यामत आ जाए और उसके हाथ में खजूर का पौधा हो, तब भी उसे चाहिए कि उसे गाड़ दे।'' (मुसनद अहमद 12933) इस तरह इस्लाम ने *Environment* को महफ़ूज़ रखने और उसकी हिफ़ाज़त करने की तालीम दी है।

अमन और सलामती

इस्लाम एक पुर अमन दीन है। एक पुर अमन शख़्स का ख़ून जो इस्लामी हुकूमत में क़याम पज़ीर *(Resident)* है या इस्लामी हुकूमत की पनाह और तहफ़्फ़ुज़ में रहा हो उसका ख़ून हराम समझा जाता है। किसी को हक़ नहीं कि कोई उसके माल, इज़्ज़त और जान को किसी तरह का नुक़सान पहुंचाए। ऐसे में एक बेगुनाह की जान लेना पूरी इंसानियत के ख़ून के मानिंद है।

''*इस वजह से हमने बनी इसराइल पर लिख दिया कि जो शख़्स किसी का बग़ैर इसके कि वो किसी का क़ातिल हो या ज़मीन में फ़साद मचाने वाला हो, क़त्ल कर डाले तो गोया उसने तमाम लोगों को क़त्ल कर दिया, और जो शख़्स किसी एक की जान बचा ले, उसने गोया तमाम लोगों की जान बचा ली।*'' (सूरह मायदा 5/32)

इस नाहक़ क़त्ल की सज़ा से अंदाजा लगाया जा सकता है कि इंसानी ख़ून की कितनी अहमियत और इज़्ज़त है। और ये हुक्म आम है सबके लिए सिवाय उसके जो किसी का नाहक़ क़त्ल करे या अमन को बर्बाद करने के लिए

फ़साद बरपा करे, जिसकी सजा भी सख़्त बयान की गई है।

इस्लाम अमन पसंद दीन है जिसकी बुनियाद ही अमन, आपसी भाईचारा, मदद और हमदर्दी पर मबनी है। इस्लाम दूसरे दीन और मज़हब के पेरोकार (मानने वाले) को इस्लामी रियासत में बिना ख़ौफ, और दबाव व पाबंदी के रहने और अपने दीन पर अमल करने की इजाज़त देता है। ये लोग मुस्लिम रियासत के तहफ़्फ़ुज *(Shelter)* में लुत्फ़ अंदोज़ हो रहे हैं। उनको ऐसे मुकम्मल हुक़ूक़ दिए गए हैं जो आज की जुम्हूरी हुकूमतें भी नहीं दे पाती।

रसूलुल्लाह ﷺ ने मदीना पर हाकिमी की जहाँ बहुत से यहूदी क़बीले आबाद थे। आपने अपने और उनके दरमियान एक ऐसा आईन *(Constitution)* क़ायम किया जिसके तहत तमाम शहरियों को रियासत का दिफ़ा *(Security)* करने और उसकी बेहतरी के लिए काम करने की ज़रूरत होती है। आपने उन्हें उनकी जायदाद, तिजारत व सफ़र और बाल बच्चों को और उनकी इबादत की पूरी आज़ादी के साथ सुरक्षा मुहैया कराई। वो इस हद तक मुसलमानों के साथ घुल मिल गए कि वो नबी ﷺ को अपने घर खाने पर बुलाते और आप उसे क़ुबूल करते। आपने उन्हें अपने दीनी क़वानीन के मुताबिक़ आपसी मामलात सुलझाने और फ़ैसला करने की छूट दे रखी थी। ऐसा इसलिए, कि इस्लाम दीन के मामले में किसी पर ज़ोर जबर नहीं करता। हर शख़्स आज़ाद है कि अपने दीन के मुताबिक़ ज़िंदगी बिताए सिवा इसके कि वो फ़साद बरपा करे और अल्लाह के अहकाम को खुले आम पामाल (नष्ट) करे। अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है। ''*दीन के बारे में कोई ज़बरदस्ती नहीं।*'' (सूरह बक़रा, 2/256)

और रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान है कि जिस शख़्स ने किसी मुआ़हिद (ग़ैर मुस्लिम किसी मुस्लिम रियासत में रहने वाला) पर ज़ुल्म किया या उसकी हक़तलफ़ी की या उसकी ताक़त से बढ़कर कोई ज़िम्मेदारी डाली या उसकी रज़ामंदी के बग़ैर उसकी कोई चीज़ ली तो क़यामत के दिन मैं उसके ख़िलाफ़ दलील पेश करूंगा। (सुनन अबी दाऊद, 3052 सहीह) सुब्हानल्लाह कितने बेहतरीन और अफ़ज़ल क़वानीन इस्लाम ने उन्हें अता किए। लेकिन अगर कोई इस्लाम के कुछ शरपसंद अफ़राद *(Bad people)* के आमाल की

बिना पर पूरे इस्लाम के मानने वालों या दीने इस्लाम पर कोई इल्ज़ाम लगाता है तो वो ये भी देखलें कि उसके दीन या और दूसरे दीन व मज़हब के चंद शरपसंद नापसंदीदा लोगों ने क्या-क्या बुराइयाँ और ज़ुल्म व ज़्यादतियाँ पूरी इंसानियत पर नहीं डालीं। उनपर नज़र डालने से यही लगता है कि ये कहना हक़ से बहुत दूर है कि वो दीन मुहब्बत और हमदर्दी का दीन हैं।

दो आलमी जंग किसने लड़ीं? क्या ये इस्लाम की वजह से लड़ी गई या मुसलमानों की? अमेरिका के सदर की एलान करदा सलीबी जंग जिसका आग़ाज़ इराक़ की तबाही से हुआ, जिसमें लाखों बेक़सूर मासूम लोगों की जानें गईं। और अब ये कहते हैं कि ये बड़े पैमाने पर तबाही मचाने वाले *(Weapons of mass destruction)* हथियारों पर ग़लत जानकारी पर मबनी *(Depend)* था। मुसलमान इन सबके लिए कभी ईसाइयत या दूसरे मज़ाहिब को इल्ज़ाम नहीं देते। हमें किसी भी मज़हब की उसके मानने वाले चंद बुरे लोगों की बुराइयों की बुनियाद पर तनक़ीद या मज़म्मत *(Criticism)* नहीं करनी चाहिए। किसी भी दीन को उसकी बुनियादी किताबों क़वानीन व तालीमात से समझना चाहिए और उन्हीं के मुताबिक़ उसके बारे में कोई फ़ैसला करना चाहिए।

अल्लाह ने इंसान को कमज़ोर बनाया है। उसे ज़िंदगी भर दूसरों के साथ मुस्तक़िल तआवुन *(Help)* करने की ज़रूरत है। अल्लाह ने तआवुन को दीनी और दुनियावी भलाई की बुनियाद बनाया है। अगर मुआशरा इस मदद और एकजुटता *(Solidarity)* को हासिल करता है तो फिर उसे एक मज़बूत ढांचा माना जाता है। और उनके दुश्मन उससे ख़ौफ़ महसूस करते हैं। बिला शुबा ये इस्लामी फ़रायज़ और वाजिबात (ज़रूरी काम) में से सबसे अहम है। इसमें भी बेसहारा लोगों की और मज़लूम की मदद करना, ज़ालिम को ज़ुल्म से रोकना, शर पसंद लोगों को रोकना, जायदाद की हिफ़ाज़त करना और सलामती बरक़रार रखना शामिल हैं। ताकि समाज को दुनियावी व दीनी फ़ायदे हासिल हो सकें और अमन व सलामती को तमाम इलाक़ों में आम किया जा सके।

इसलिए हमारा रवैया ज़ाहिर होना चाहिए। हमें ग़ैर मुस्लिमों में दूसरों को

नुक़्सान पहुंचाने के मुतअ़ल्लिक़ इस्लामी शरियत के क़वानीन की वज़ाहत *(Explanation)* करनी होगी। हमें उनको बताना चाहिए कि इस्लाम मासूम लोगों को किसी भी तरह का नुक़्सान पहुंचाने से मना करता है। चाहे वो उनके माल, इज़्ज़त या जान को नुक़्सान पहुंचाना हो। रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान है कि "ना तो किसी को अपने फ़ायदा के लिए नुक़्सान पहुंचाओ और ना किसी को बिना मक़्सद नुकसान पहुंचाए" (सुनन अबी दाऊद 3635) किसी ग़ैर मुस्लिम को क़त्ल करना जाइज़ नहीं। उनके साथ हुसने सुलूक करना दीने इस्लाम का एक हिस्सा है। यहाँ तक कि जंग के दौरान भी औरतों, बच्चों, बूढ़ों और मरीज़ वग़ैरह को जो लड़ाई में शामिल नहीं क़त्ल करना और अवामी जायदाद को नुकसान पहुंचाने से इस्लाम ने सख़्ती से मना किया है।

लोगों को ख़ौफ़ज़दा करने वाले सरकश के लिए सख़्त सज़ा है। जैसे रास्तों पर लूटमार करने और मुआ़शरे के अमन चैन को बिगाड़ने वालों के लिए।

"*जो अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल से लड़ें और ज़मीन में फ़साद करते फिरें उनकी सज़ा यही है कि वो क़त्ल कर दिए जाएँ।*" (सूरह मायदा 5/33)

कोई भी इस हक़ीक़त से अनजान नहीं कि समाज के अमन को नुक़्सान पहुंचाना एक बहुत बड़ा गुनाह है। इस्लामी शरीयत इस बारे में मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम में कोई फ़र्क़ नहीं रखती। मुसलमान को अम्न और एकजुटता की एक अच्छी मिसाल क़ायम करनी चाहिए। जब मुसलमान इस तरह की ख़ुसूसियात रखते होंगे तो दूसरे लोग उनसे मुतअस्सिर और आकर्षित होंगे और ये आपसी भाईचारा व हमदर्दी का माहौल बनाने में मददगार साबित होगा। जिससे समाज में अम्न व सलामती क़ायम होगी।

अल्लाह तआ़ला फ़साद को नापसंद करता है:

"*और अल्लाह तआ़ला फ़सादियों से मुहब्बत नहीं करता।*" (सूरह मायदा 5/64)

सरकश लोग (बुरे लोग) समाज का अम्न तबाह करने की कोशिश करते रहते हैं जबकि अल्लाह तआ़ला ना फ़साद को पसंद करता है और ना ही

ऐसा करने वाले फ़सादियों को ही। आ़ईशा रज़ि. से मरवी है कि अल्लाह तआ़ला को सबसे ज़्यादा वो शख़्स नापसंद है जो झगड़ालू हो। (सहीह बुख़ारी, किताब तफ़सीर) अल्लाह तआ़ला का फ़रमान है—

"और ज़मीन पर, इसके बाद कि उसकी इसलाह कर दी गई हो, फ़साद मत फैलाओ। ये तुम्हारे लिए ज़्यादा ख़ैर है अगर तुम मोमीन हो। (ईमान रखते हो)"

जब ज़मीन पर यानी मुल्क और समाज में अम्न व सलामती क़ायम हो तो वहाँ फ़साद करना और अम्न को तहस-नहस करके बिगाड़ना सख़्त मना है। अब चाहे वो किसी मुल्क की अवामी जायदाद या उसके वसायलों *(Resources)* पर कब्जा करने की ग़रज़ से हो या मआ़शी बालादस्ती *(Financial gain)* हासिल करने के लिहाज़ से हो या मुल्क व क़ौम को नुकसान पहुंचाने की नीयत से हो या समाज में नफ़रत फैलाकर अपने ग़लत फ़ायदे की ख़ातिर ऐसा किया जाए। जिससे आज दुनिया के ज़्यादातर मुल्क चंद तरक्की याफ़्ता मुल्कों की बदनीयती और सरकशी हथकण्डों का शिकार हैं। ऐसे लोगों के लिए अल्लाह ने जहन्नम के सख़्त अ़ज़ाब की ख़बर दी है।

"बेशक दोज़ख़ घात में है। सरकशों का ठिकाना वहीं है।" (सूरह नबा 78/21-22)

यानी ऐसे बदबख़्त और बदनसीबों की इंतिज़ार में जहन्नम अपने अज़ाब के साथ तैयार है कि जैसे ही इनकी मौत वाक़े होगी तो वो ऐसे लोगों को अपने आग़ोश में समेट लेगी और शदीद अज़ाब में मुब्तला करेगी फिर भले ही ये दुनिया का पूरा माल और *Billions & Trillions* डालर जो नाहक़ जमा किए, उन्हें देकर भी बच नहीं पाएंगे। काश ऐसे बदबख़्त इस हक़ीक़त को और इस्लाम के इंसाफ़ पसंद और पुर अम्न क़ानूनों को जान जाते तो ना दुनिया का अम्न दरहम बरहम होता और ना उन्हें अज़ाब में घिरना पड़ता।

इस्लाम के ख़िलाफ़ दिलों में नफ़रत रखने वाले आख़िर इस्लाम को क्यों इल्ज़ाम देते हैं। ये ऐसा दीन है जो नाहक़ तो दूर मगर हक़ पर होने के बावुजूद भी सरकशी और फ़साद से मना करता है। रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान है—मैं ऐसे शख़्स को जन्नत में घर की ज़मानत देता हूँ जो हक़ पर होते हुए भी झगड़ा

ना करे। (सुनन अबी दाऊद, 4800 सहीह) और अबू हुरैरा रज़ि. से मरवी है कि आप ﷺ ने फ़रमाया—क़रीब है फ़ितने होंगे जिसमें बैठने वाला बेहतर होगा खड़े होने वाले से और खड़ा होने वाला बेहतर होगा चलने वाले से, और चलने वाला बेहतर होगा दौड़ने वाले से। जो उसमें झांकेगा वो उसको खींच लेगा और जो पनाह का मक़ाम पाए तो उसको चाहिए कि वो वहाँ चला जाए। (सहीह मुस्लिम, किताब फ़ितना) इस हदीस़ में पेशीनगोई की गई है आपके बाद फ़ितना फ़साद उमड़ने की जो मुख़्तलिफ़ दौर में गुज़रा और आज भी उम्मत व मुआ़शरा इससे जूझ रहा है। ऐसे में हर शख़्स को तलक़ीन (शिक्षा) की जा रही है कि वो इससे जितना हो सके बचे। अपने को इससे दूर रखे और किसी महफ़ूज़ जगह जा बसे। मगर हर सूरत हाल में किसी को ना तकलीफ़ दे ना इसका सबब बने। अबू सईद ख़ुदरी रज़ि. से मरवी है कि एक शख़्स ने आप ﷺ से पूछा कि लोगों में सबसे बेहतरीन आदमी कौन है? आपने फ़रमाया, वो मोमिन जो अपनी जान माल से राह अल्लाह जिहाद करे। साइल ने पूछा उसके बाद कौन? फ़रमाया वो मोमिन जो किसी भी मोहल्ले में अलग थलग रहता हो, अल्लाह से डरता हो और लोगों को अपनी तरफ़ से तकलीफ़ पहुंचाने से बचता हो। (मुसनद अहमद, शाकिर 11261 सहीह)

इनसे मालूम चल जाता है कि इस्लाम में सरकशी, फ़साद और झगड़ा वग़ैरह को नापसंद किया गया है और मज़म्मत करने के साथ सज़ा भी सख़्त देने का एलान किया गया है। इस्लाम में अम्न व सलामती की फ़ज़ीलत और अहमियत को समझने के लिए एक-एक आयत क़ुरआन और एक-एक क़ौल नबी ﷺ अनमोल मोती की तरह हैं। इस एक हदीस़ से ही इसकी अहमियत का अंदाज़ा लगाया जा सकता है जिसमें अम्न व सलामती को महज़ एक दिन के खाने और जिस्म की सेहत के साथ पूरी दुनिया की दौलत मिलने के बराबर क़रार दे दिया गया। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया—जो शख़्स तुम में से जिस्म की तंदरुस्ती के साथ और अम्न के साथ सुबह करे और उसके पास एक दिन का खाना भी हो तो गोया सारी दुनिया उसके लिए उसको जमा कर दी गई। (इब्ने माजा 4141 सहीह) ख़लीफ़ा उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रह. के किसी हाकिम ने अपने शहर की वीरानी का शिकायत नामा भेजा और अमीरुल

मोमिनीन से उसको आबाद करने को माल तलब किया। अमीरुल मोमिनीन ने जवाब में लिखा, जब तुम मेरा ख़त पढ़ो तो अपने शहर को अ़द्ल व इंसाफ़ के ज़रिए महफ़ूज़ कर दो। और शहर के रास्तों से ज़ुल्म व ज़्यादती दूर कर दो। क्योंकि ज़ुल्म व ज़्यादती ही शहर की वीरानी का सबब है।"

माशा अल्लाह कितनी ख़ूबसूरत और मुफ़ीद नसीहत है काश हर शख़्स इसको समझ जाए। जो लोग ख़्याल करते कि दूसरों पर ज़ुल्म करके, नफ़रत के बीज बोकर, फ़साद फैलाकर और नाहक़ लोगों को जान माल का नुक़सान पहुंचाकर ख़ुद को मुस्तहिक़ मज़बूत और महफ़ूज़ रख पाएंगे, ये उनकी बड़ी भूल व नादानी है। जब मुआ़शरा इससे दो चार होता है तो हर शख़्स को देर सवेर अपनी लपेट में ले लेता है। जब गुनाहें आम हो जाएँ तो मुआ़शरे में बदअम्नी और अशान्ति का सबब बन जाती है। बस्ती की आग अपने घर को भी जला देती है या आंच तो ज़रूर ही पहुंचेगी। इसकी मिसाल इस हदीस़ से बेहतर और क्या हो सकती है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि गुनाहों पर ख़ामोश रहने वालों और गुनाहों में बढ़ जाने वालों की मिसाल उन लोगों की सी है जो एक किश्ती में सवार हैं, कुछ नीचे के तबक़े में और कुछ ऊपर के तबक़े में। अब नीचे वाले पानी लेने के लिए ऊपर वालों के पास से जाने लगे तो उन्हें तकलीफ़ हुई। आख़िर में नीचे वालों में से एक शख़्स ने कुल्हाड़ी ली और किश्ती में सुराख़ करने लगा। ये हाल देखकर ऊपर वाले उसके पास आए और कहने लगे अरे ये क्या ग़ज़ब कर रहा है वो कहने लगा तुमको मेरे आने जाने से तकलीफ़ होती है और पानी लेना तो ज़रूरी है अब अगर किश्ती वाले उसका हाथ पकड़ें तो ख़ुद भी बचें और वो भी अगर हाथ ना पकड़ें तो ख़ुद भी मरेंगे और वो भी मरेगा। (सहीह बुख़ारी किताब शहादात) मुआ़शरे में बद अम्नी को बढ़ावा देना ऐसा है जैसे भरी किश्ती को समंदर में डुबाना अगर इसकी इसलाह ना की गई तो सभी पर इसका असर होगा और इसकी आग सभी को जलाकर राख करेगी। इसलिए इस्लाम के क़वानीन और तालीमात के मद्देनज़र हर शरकश फ़सादी को सख़्त सज़ा मिलनी चाहिए और हर शख़्स को भरसक कोशिश करनी चाहिए कि मुआ़शरे में अम्न व सलामती के साथ भाईचारा व हमदर्दी का माहौल बना रहे, जैसाकि इस्लाम ने तरग़ीब दी है और

भारत की क़दीम तहज़ीब रही है कि जाति कोई हो, दीन कोई हो यहाँ तक कि ऊँचनीच की गंदगी में लथपथ, मगर मुआ़शरे ने अम्न व सलामती का दामन थामे रखा और हर शख़्स बेख़ौफ़ भाई भाई बनकर सुकून और आपसी मुहब्बत के साथ गुज़र बसर करते आए। काश ऐसा मुआ़शरा अब भी वुजूद में आए तो हमारा मुल्क भी हुसने अख़लाक़, अम्न व सलामती, हमदर्दी और तरक़्क़ी की एक मिसाल दुनिया के सामने पेश कर सकता है।

यहां एक अहम बात को समझना निहायत ज़रूरी है। तारीख़ यानी इतिहास गवाह है कि हर दौर में इस ज़मीन या मुल्कों में तरह-तरह के दीन, अक़ीदा, आस्था और विचार रखने वाले लोग और क़ौमें बसती आई हैं। उनमें सभी लोग नेक या बद नहीं रहे। कहीं अलग-अलग आस्था रखने वाली क़ौमें रहीं, जिनमें शर पसंद और फ़सादी भी रहे। जैसे राम चन्द्र जी के समय में रावण और उसकी क़ौम भी थी, या फिर कृष्ण जी के समय में उन्हीं की क़ौम से कंस भी था जिसने मुल्क में शर और फ़साद बरपा किया। इससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि अगर किसी मुल्क में एक फ़िरक़ा बुराई पसंद है या किसी एक फ़िरक़े का कोई व्यक्ति या समूह बुराई पसंद है तो इसका मतलब यह हरगिज़ नहीं कि उस मुल्क में बसने वाला हर शख़्स बुरा है या बुराई को पसंद करता है या किसी एक फ़िरक़े और समूह का हर व्यक्ति बुराई पसंद है।

हमें अपने रब का शुक्र अदा करना चाहिए कि उसने हमारे मुल्क में ऐसी तहज़ीब और संस्कृति प्रदान की कि अनेक विभिन्नताओं और समस्याओं के होते हुए भी अम्न व सलामती को क़ायम रखा और आपसी मुहब्बत और भाईचारा के साथ पुर-अम्न समाज को क़ायम किया।

अब अगर समाज का कोई व्यक्ति या समूह कोई ऐसी बात कर दे जो दूसरे लोगों की आस्था को ठेस पहुंचाए या उनको बुरी लगे तो इस हालत में एक मुसलमान के लिए इस्लाम में क्या अहकाम बयान किए गए है?

पहली बात तो यह होनी चाहिए कि वह *Social media* पर पूरी तरह आश्रित या निर्भर ना रहे। और ख़बरदार, कि हर बात को हासिल करने के बाद दूसरों को ना भेजे। रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान है कि "किसी शख़्स के गुनाहगार होने के लिए यह काफ़ी है कि वह हर सुनी सुनाई बात दूसरे से बयान

कर दे'' (सुनन अबी दाऊद, 4992 सहीह)

दूसरी नसीहत कि वह हर सुनी हुई या हासिल हुई बात और ख़बर की तहक़ीक़ करले। अल्लाह तआ़लाका फ़रमान है कि:

''ऐ मुसलमानो! अगर तुम्हें कोई फ़ासिक़ (Sinner) ख़बर दे तो तुम उसकी अच्छी तरह तहक़ीक़ (जांच) कर लिया करो। ऐसा ना हो कि नादानी में किसी क़ौम को ईज़ा (तकलीफ़) पहुंचा दो फिर अपने किए पर पशेमानी (Repent) उठाओ।'' (सूरह हुजुरात 49/6)

मुसलमान पर वाजिब है कि वह इसकी तहक़ीक़ के लिए मक़ामी (Local) अमीर ज़िम्मेदार से संपर्क करे और अपने अमीर और उलमा-ए-दीन के संपर्क में रहे दूसरे इसमें सख़्ती से मना कर दिया गया कि कोई मुसलमान तन्हा अकेले या कोई एक समूह या फ़िरक़ा ख़ुद अपने तौर पर कोई फ़ैसला ना ले और ना ही झगड़ा फ़साद बरपा करे और ना ही ऐसा करने के लिए मुसलमानों को कोई उकसाए ना प्रेरित करे। ऐसा करने वाला फ़सादी होगा जिसकी सज़ा दुनिया में भी और अज़ाब आख़िरत में भी सख़्त होगा। जैसा कि पहले बयान हो चुका है।

मक़ामी अमीर अपने सूबे के अमीर और फिर मुख़्तलिफ़ सूबों के अमीर मुल्क के अमीर से संपर्क करें और आपसी समझबूझ व हिकमत के साथ फ़ैसला करें कि किस तरह इस मसले को हाकिमे मुल्क और उसके मातहत ज़िम्मेदार लोगों तक पहुंचाया जाए और ऐसा हल निकाला जाए जो समाज के अम्न और सलामती के ताने बाने को मज़बूती से बनाए रखे।

उम्मते मुसलिमा का मुस्तक़बिल और भविष्य बड़ा अंधकारमय, फ़ितनों (Tribulation) और फ़साद से भरा है। फ़ितने, मुसीबतें और सख़्ती ताबड़तोड़ मूसलाधार बारिश की मोटी बूंदों की तरह बरसेंगी। उम्मत तड़प उठेगी, कहेगी, यह सब से सख़्त फ़ितना है मगर अगला आने वाला फ़ितना इससे भी सख़्त होगा। ऐसे में मुसलमान को क्या करना चाहिए? इसका हल हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ि. की फ़ितना की मशहूर हदीस़ में बयान हुआ है। (देखिए सहीह बुख़ारी, किताब फ़ितना, मुस्लिम, अबी दाऊद वगैरह)

इसमें एक नसीहत तो यही है कि ऐसे दौर में मुसलमानों की जमात और

इमाम बरहक़ के साथ रहना। इमाम बरहक़ और ऊपर बयान किए मक़ामी, सूबे या मुल्क का अमीर कौन होगा जिसकी रहनुमाई में मुसलमान को हर काम करना चाहिए?

आजकल फ़िरक़ों, आलिमों और इमामों की बड़ी तादाद समाज में मौजूद है। अफ़सोस कि कोई एक ऐसा अमीर बरहक़ नहीं जो पूरे मुल्क की उम्मते मुस्लिमा की रहनुमाई करता हो और जिसे सभी मुसलमान अपना अमीर मानते हों। दर हक़ीक़त उम्मत की तबाही, बरबादी और मुसीबतों का यह एक बड़ा सबब है। इसका हल इस हदीस़ पर ग़ौर करने से मिल जाएगा जिसमें फ़रमाया गया है कि ''मेरी उम्मत 73 फ़िरक़ों में बंट जाएगी। सब फ़िरक़े जहन्नमी होंगे सिवाय उसके जो मेरे और मेरे सहाबा रज़ि. अजमअ़ीन के तरीक़े पर होंगे।'' (तिर्मिज़ी 2641 सहीह, मुसनद अहमद, मिश्कात) और एक दूसरी हदीस़ में फ़रमाया गया है कि ऐसे लोग जो नबी ﷺ और सहाबी रज़ि. के तरीक़े पर नहीं होंगे (72 फ़िरक़े) उनको क़यामत में नबी ﷺ से दूर हटा दिया जाएगा।

इसका साफ़ मतलब ये हुआ कि हर मुसलमान को चाहिए कि इस एक जन्नती फ़िरक़े में शामिल हो जाए। यह तभी मुम्किन है जब हर मुसलमान क़ुरआन की हर एक आयत *(Verse)* और नबी ﷺ की हर एक सहीह साबित हदीस़ को स्वीकार करे और उसपर अमल और कर्म करे। ज़ईफ़ हदीस़ और क़ुरआन व सहीह हदीस़ से मुख़्तलिफ़, आलिमों के क़ौल को ना ले। ऐसा करने पर सब मुसलमान एक जमाते मुस्लिम और एक इमामे बरहक़ के ताबे *(Followers)* होंगे और मक़ामी, सूबा एवम् मुल्क का एक ही इमाम बरहक़ होगा जो ऐसा निज़ाम क़ायम करेगा कि हर मुसलमान अपनी-अपनी जगह मक़ामी स्तर पर मुल्क के एक ही इमाम बरहक़ की इत्तिबा और अनुसरण करेंगे।

इस निज़ाम के तहत सूबे और मुल्क का अमीर मुल्क के हाकिम के ज़िम्मेदार लोगों से मिलकर समस्या का शांतिपूर्ण हल तलाश करेंगे। ख़्याल रहे कि मुसलमान को झगड़ा फ़साद से बचना चाहिए। सब्र का दामन थामे रहें। दरगुज़र और माफ़ी का मामला इख़्तियार करें। इनमें बड़ी फ़ज़ीलत रखी गई है। अहम बात जो ज़हन नशीं रहे वह मुल्क और समाज में आपसी मुहब्बत

और भाईचारे के साथ अम्न व सलामती क़ायम रखने की हर शख़्स कोशिश में प्रयत्नशील रहे।

हाकिम की फ़रमांबरदारी

इस बारे में क़ुरआन की सूरह निसा की आयत 4/59 को एक अहमतरीन हिदायत माना जाता है जिसमें अल्लाह तआ़ला ने फ़रमांबरदारी और इताअत के बारे में जो अहकाम बयान किए हैं उनसे हाकिम की फ़रमांबरदारी को अल्लाह और उसके रसूलुल्लाह ﷺ के बाद तीसरे मक़ाम पर रख दिया गया जिससे इसकी अहमियत ख़ुद ब ख़ुद ज़ाहिर हो जाती है। दूसरे इसके साथ ही साथ एक अहम और ज़रूरी बात ये भी बयान कर दी गई कि ये फ़रमांबरदारी तभी तक मानी जाएगी जब तक किसी भी सूरत में इसमें अल्लाह और उसके रसूल की नाफ़रमानी ना हो। यानी जब तक हाकिम की बात, हुक्म और उसके क़ायदे–क़ानून इस्लामी शरियत के मुताबिक़ हों, तब तक हर शख़्स पर हाकिम की बात सुनना और मानना वाजिब (ज़रूरी) है। या ये कहना ज़्यादा मुनासिब होगा कि जब तक हाकिम या उसके पैरोकार कोई ऐसा हुक्म ना दें या कानून ना बनाएँ, जो अल्लाह की बयान की गई इस्लामी शरियत के मुताबिक हराम, मुनकरात और मना करदा हो, तब तक हर हालत में उनकी फ़रमांबरदारी करना लाज़िम है। और अगर उनके हुक्म और क़वानीन हराम और शिर्क या कुफ़्र पर मज़बूर करें तो किसी भी सूरत में उनकी फ़रमांबरदारी नहीं होगी। ये इस बारे में इस्लामी शरियत का निचोड़ कहा जा सकता है।

और अगर उनके हुक्म में कोई शक हो और क़ुरआन व सुन्नत के ख़िलाफ़ हो तो फिर हर शख़्स पर वाजिब है कि वो क़ुरआन व सुन्नत की तरफ़ पलटें और अपने रहबर व आलिम से संपर्क क़ायम करें जिनको अल्लाह तआ़ला ने क़ौम की सिराते मुस्तक़ीम पर रहनुमाई करने पर मुकल्लफ़ *(appoint)* बनाया है।

''*ऐ ईमान वालो! फ़रमांबरदारी करो अल्लाह की और फ़रमांबरदारी करो रसूलुल्लाह ﷺ की और तुममें से इख़्तियार वालों की। फिर अगर किसी चीज़ में इख़्तलाफ़ करो तो उसे लौटाओ अल्लाह तआ़ला की तरफ़ और रसूलुल्लाह ﷺ की तरफ़, अगर तुम्हें अल्लाह पर और क़यामत के दिन पर ईमान है। ये*

बहुत बेहतर है और बाएतबार अंजाम के बहुत अच्छा है।'' (4/59)

इब्ने तैमिया रह॰ "गुनाह में कोई इताअ़त नहीं" पर तबसरा *(Commentry)* करते हुए लिखते हैं कि अगर हाकिम के अहकाम अल्लाह के क़वानीन के ख़िलाफ़ हैं तो लोगों को उन्हें नज़र अंदाज *(Ignore)* कर देना चाहिए। लेकिन इसको बग़ावत और इंक़लाब के तौर पर हरगिज़ इस्तेमाल नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से मुल्क और मुआ़शरे में बदअम्नी फैलती है और ख़ाना जंगी *(Civil war)* जैसे हालात पैदा हो जाते हैं जिससे लोगों की जान व माल का नुकसान ही होता है। इब्ने तेमिया रह॰ का क़ौल है कि "60 साल की ज़ालिम हाकिम की हुकूमत एक रात की बिना सुल्तान की हुकूमत से बेहतर है।" यह तजुर्बे से साबित है। हाकिम का इंतिख़ाब कैसे हो इसकी रहनुमाई भी क़ुरआन में मौजूद है।

''और काम का मशवरा उनसे किया करें। फिर जब आपका पुख़्ता इरादा हो जाए तो अल्लाह तआ़ला पर भरोसा करें, बेशक अल्लाह तआ़ला तवक्कल करने वालों से मुहब्बत करता है।'' (3/159)

जब हाकिम का इंतख़ाब करना हो तो मजलिस शूरा *(Parliament)* के अफ़राद *(Members)* को इन तीन बातों पर खरा उतरना चाहिए। वो अ़द्ल पसंद हों, अच्छे और बुरे ख़लीफ़ा का इल्म रखते हों, और अच्छे ख़लीफ़ा का इंतिख़ाब करने का फ़ैसला करने के क़ाबिल हों।

एक अच्छे हाकिम को भी कुछ ज़रूरी बातों का ख़्याल रखना चाहिए जो अवाम के लिए मुफ़ीद और फ़ायदेमंद हैं।

- उसे मुल्क में मज़हब, सक़ाफ़त और *Culture* की सुरक्षा करनी चाहिए। अगर कोई विरोधी *(Deviant Person)* शख़्स हो तो उसे समझाना चाहिए और अगर ना माने तो सज़ा दी जानी चाहिए।
- उसे अ़द्ल व इंसाफ़ से फैसला करना चाहिए ताकि मज़लूम तन्हा और बेमददगार महसूस ना करे।
- मुजरिमों को सज़ा देनी चाहिए ताकि इंसाफ़ क़ायम हो सके और कमज़ोर लोगों पर ज़ुल्म व ज़्यादती होने पर उनकी हिफ़ाज़त की जा सके।
- उसे अवाम *(Public)* की हिफ़ाज़त व सलामती क़ायम करनी चाहिए।

औरतों बच्चों और क़ौम के कमज़ोर लोगों की हिफ़ाज़त की गारंटी देनी चाहिए, ताकि लोग बिना किसी ख़ौफ़ और नुक़सान के जिंदगी बसर कर सकें।

- मुल्क की हदूद *(Border)* की पूरी कुव्वत और साज़ो सामान के साथ हिफ़ाज़ती क़दम उठाने चाहिएं। ताकि दुश्मन को हदूद की ख़िलाफ़ वर्ज़ी करने और लोगों को जान माल का नुकसान पहुंचाने का मौका ना मिले।
- टैक्स जमा करना चाहिए और उसे अपनी जनता के फ़ायदे के कामों में इस्तेमाल करना चाहिए।
- हाकिम को मुआ़शरे के कमज़ोर बेसहारा लोगों का पता करना चाहिए ताकि उनकी सरकारी मदद दी जा सके।
- उसे ऐसे लोगों का इंतिख़ाब करना चाहिए जो ईमान पर, मुख़लिस *(Sincere)* और अपने औहदे की ज़िम्मेदारियाँ संभालने के लायक़ हों। ताकि हर काम एक अच्छे अंदाज़ में अंजाम पाए।

शरियत का बुनियादी उसूल *(Basic Principles)* ये है कि उसमें किसी बुराई को उससे बड़ी बुराई से दूर करने की इजाज़त नहीं। बग़ावत के नतीजे में ज़्यादा ख़राबी पैदा होगी और इंतिशार *(Chaos)* ज़ुल्म और लोगों के क़त्ल का सबब बनेगी। बल्कि सब्र करना और भलाई के मामलात में सुनने और फ़रमांबरदारी करना ज़रूरी है। ये मुआ़शरे में बुराई को कम करेगा और नेकी व भलाई में इज़ाफ़ा करेगा। इससे क़ौम को फ़ितना व फ़साद से बचाया जा सकेगा और अम्न क़ायम करने में मददगार साबित होगा।

रसूलुल्लाह ﷺ का फ़रमान है कि जिसने मेरी इताअत की उसने अल्लाह की इताअत की और जिसने मेरी नाफ़रमानी की उसने अल्लाह की नाफ़रमानी की। और जिसने हाकिम की बात मानी उसने मेरी बात मानी और जिसने हाकिम की नाफ़रमानी की उसने मेरी नाफ़रमानी की (सहीह बुख़ारी, किताब जिहाद) इस तरह रसूलुल्लाह ﷺ ने हाकिम की बात मानने या ना मानने को अल्लाह और अपनी बात मानने या ना मानना क़रार दे दिया जिससे ज़ाहिर हुआ कि हाकिम की नाफ़रमानी अल्लाह की नाफ़रमानी है। अब ये हुक्म आम है और हाकिम नेक या बुरा कैसा भी हो उसकी बात मानना वाजिब हो गया जैसा

पहले बयान हो चुका। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, सुनो और मानो चाहे तुम पर एक हब्शी गुलाम सरदार बनाया जाए जिसका सिर मुनक्का की तरह छोटा हो। (सहीह बुख़ारी, किताब अहकाम) यानी चाहे वो हुकूमत को सहीह अंदाज से चलाने के लायक़ हो या ना हो, जब मुक़र्रर कर दिया जाए तो उसकी बात मानना वाजिब हो जाता है।

फिर चाहे अवाम उसको पसंद करे या ना करे, अब वो हाकिम है और उसकी हुकूमत की रिआ़या (जनता) के ज़रिए वो मुंतख़ब हुआ है इसलिए उसको हाकिम तसलीम करना पड़ेगा। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, लाज़िम है तुझ पर इताअ़त करना, ख़्वाह तू खुश हो या रंजीदा, सख़्ती हो या आसानी। अगरचे तेरे ऊपर दूसरे को बढ़ाया जाए। (सुनन निसाई, 4161, सहीह) यहाँ फ़रमाया जा रहा है कि चाहे अवाम *(Public)* या कोई तन्हा शख़्स उससे खुश हो या नहीं और चाहे वो अपने ख़ास लोगों को तरजीह *(Preference)* देता हो, हर हाल में उसकी इताअ़त करना लाज़िम है। बल्कि दूसरी रिवायात में फ़रमाया गया कि चाहे वो तुम्हारी हक़ तलफ़ी करता हो, मारपीट और ज़ुल्म करता हो या माल ले लेता हो मगर देता ना हो तब भी उसकी बात मानना जरूरी है, सिवाए इसके कि वो बात ख़िलाफ़े शरअ़ ना हो। हुज़ैफ़ा रज़ि. से मरवी है कि रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, सुन और मान हाकिम की बात अगरचै वो तेरी पीठ फौड़ दे। (सहीह मुस्लिम, किताब अमारत)

हर शख़्स अपने आमाल में गिरवी है। जो जैसा करेगा उसका नतीजा ज़रूर भुगतेगा। अच्छा करेगा तो भलाई मिलेगी और बुरा करेगा तो उसकी बुराई की सज़ा भी उसे मिलकर रहेगी। अल्लाह तआ़ला सब पर निगहबान है और बेहतरीन कारसाज़ है। उसके यहाँ ज़ुल्म नहीं, हाँ इतना जरूर है कि वो ज़ालिम को कुछ मोहलत दे दे, मगर जब पकड़ेगा तो उसकी पकड़ भी शदीद और सख़्त है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, उनके (हाकिम) अहकाम में जो ख़ूबी है वो तुम्हारे लिए फ़ायदेमंद हैं। और उन (अहकाम) में जो नुक़्स (ख़राबी) है वो उन्हीं (हाकिम) के लिए नुक़सान देह है। (सुनन अबी दाऊद, 2719 सहीह)

आख़िर में एक बार फिर हाकिम की इताअत के वुजूब पर पाठकों को ये

बात ज़हन नशीन कर लेनी चाहिए कि मुआ़शरे (समाज) और क़ौमों की भलाई इसी में है कि सब्र के साथ हाकिम वक़्त की फ़रमांबरदारी करते जाए, चाहे वो अवाम को पसंद हो या ना हो, चाहे वो अ़द्ल व इंसाफ़ के साथ फ़ैसला करता हो या नहीं, यहाँ तक कि उसके ज़ुल्म व ज़्यादतियों पर सब्र करते हुए उसके और क़ौम के हक़ में नेक दुआगो रहना चाहिए। दुआएँ अल्लाह की बारगाह में क़ुबूल हों उसके लिए नेक सालेह आमाल करते हुए और मुनकरात से बचते हुए, पुर अम्न समाज को वुजूद में लाने और अम्न व सलामती को बरक़रार रखने की भरसक कोशिशें करते रहना चाहिए। हाकिम के ख़िलाफ़ आवाज बुलंद करना, इंक़लाब लाना या किसी भी तरह से बग़ावत का माहौल पैदा करना शरीयते इस्लामिया में सख़्ती से मना किया गया है। रसूलुल्लाह ﷺ ने फ़रमाया, जो शख़्स अपने बादशाह में ऐसी बात देखे जिसको नापसंद करता हो तो सब्र करे। इसलिए कि जो कोई बालिश्त बराबर भी जमात से जुदा हो गया और उसी हाल में मरा तो उसकी मौत जाहिलियत *(Ignorance)* की मौत होगी (सहीह बुख़ारी किताब, फ़ितना)

अल्लाह तआ़ला से दुआ है कि हमारे मुल्क, क़ौम, मुआ़शरे और समाज को ऐसा हाकिम अता करता रहे जो क़ौम की ख़ैर ख़्वाही की जुस्तजू में लगा रहे। वतन की हिफ़ाज़त और मुआ़शरे में अम्न व सलामती क़ायम करने में मददगार हो। अवाम हाकिम वक़्त की बात सुनें और मानें ताकि मुल्क और क़ौम फ़ितना, फ़साद ज़ुल्म व ज़्यादती से महफ़ूज़ रहे, आमीन।

इस्लाम एक ऐसा दीन है जो अल्लाह ने इंसानों के लिए पसंद किया और इसको लोगों का दीन होने पर रज़ामंद हो गया। जैसा कि किताब में बयान किया गया है कि अल्लाह हर चीज़ का पैदा करने वाला है और उसे बख़ूबी मालूम है कि इंसान के लिए मुफ़ीद और फ़ायदेमंद क्या है। इन दोनों रौशन दलीलों और तथ्यों से ज़ाहिर होता है कि इस्लाम इंसान की भलाई और कामयाबी में मुफ़ीद दीन है। इसकी हर अच्छाई पूरी इंसानियत के लिए लाभदायक है और इसमें बयान की गई और मना की गई हर बुराई इंसान और दूसरे जीवों के लिए भी नुक़सान देह है।

इस्लाम ख़ूबियों और अच्छाइयों का अथाह सागर है। जितना तलाश करो

उतना ही गहराइयों तक अनमोल मोतियों का ख़ज़ाना समाया है। काश हर इंसान इसकी अच्छाइयों पर लब्बैक कहे यानी अपना ले और इसमें मना की गई बुराइयों और कुरीतियों को त्याग कर पाप और गुनाहों से ख़ुद को बचा कर अपनी दुनिया व आख़िरत की ज़िंदगी संवार ले।

क़ारिईन यानी पाठकों से अर्ज़ है कि इस्लाम को जानने और अपनाने के लिए इसके दोनों मूल ग्रंथों का अध्ययन व मुतालआ़ किया जाए, ना कि मुसलमान या उनके मुआ़शरे और समाज पर नज़र डाल कर इस्लाम के बारे में कोई फ़ैसला कर लिया जाए। हो सकता है मुसलमान इस्लाम से दूर हो गया हो या गुमराह हो गया हो या उस पर अमल और कर्म करना छोड़ दिया हो।

बेशुमार और अनगिनत ख़ूबियों में से चंद बातों का यहां ज़िक्र किया गया है। उम्मीद है पाठक इस्लाम की अच्छाइयों से प्रेरित होकर इनको अपनी जीवनशैली का हिस्सा बनाएंगे और एक आदर्श समाज को क़ायम करने में मददगार साबित होंगे।

* * * * * * * * * *